TEXT PROBLEM WITHIN THE BOOK ONLY

Osmania University Library

Call No. H 491.23R 94R

Name Of Book र, पानिघंट,

Name Of Authur रूपलाल जैश्य

UNIVERSAL LIBRARY

OU_186374

UNIVERSAL LIBRARY

अमृतासंग-[सं०] खपरिया। खर्परी तुत्थ।

अमृताह्व-[सं०] नासपाती। रुचिफल।

अमृतोत्था-[सं०] सालम मिस्री। सुधामूली।

अमृतोत्पन्न-[सं०] १. खपरिया। खर्परी तुत्थ। २. तूतिया। तुत्थ। नीला थोथा।

अमृतोद्भव-[सं०] १. खपरिया। खर्परी तुत्थ। २. तूतिया। तुत्थ। नीला थोथा। ३. आँवला। आमलकी।

अमृतोद्भवा-[सं०] १ सालम मिस्री। सुधामूली। २. आँवला। आमलकी। ३. पान। नागरवल्ली।

अमृतोपम-[सं०] खपरिया। खर्परी तुत्थ।

अमृतोपहिता-[सं०] चोबचीनी। द्वीपांतरवचा।

अमेरी-[मल०] नील। नीली वृक्ष।

अमेलह-[फा०] आँवला। आमलकी।

अमोघ-[सं०] हरीतकी। हर। हर्रे।

अमोघा-[सं०] १. पाढ़र। पाटला। पाडर। २. बायविडंग। विभंग। वाभिरंग। ३. फालसा। परुषक। ४. हरीतकी। हर।

अमोदिनी-[सं०] बबूल। बबूर वृक्ष। कीकर।

अमोरा, अमोरी-[आसा०] रोहिड़ा नं० १। रोहितक वृक्ष।

अमोलीफली-[पं०] अमलतास। आरग्वध। घनबहेड़ा।

अम्मगीलाँ-[यू०]
अम्मगीलान-[यू०] } बबूल। बबूर वृक्ष। कीकर।

अम्मिलोणा-[हिं०]
अम्मिलोना-[हिं०] } चांगेरी। खटकल। पिपत्ती। अमता।

अम्मेरविरइ-[ता०] तरवड। आहुल्य।

अम्र-[सं०] १. आम। आम्र वृक्ष। २. माचिका। मोइया। ३. अमलबेत। अम्लवेतस।

अम्रगंध हरिद्रा-[सं०]
अम्रगांध हरिद्रा-[सं०] } आँबा हलदी। आम्रगंध हरिद्रा। कपूरहलदी।

अम्रपुष्प-[सं०] बेंत। वेतस।

अम्रवेत-[सं०]
अम्रवेतस-[सं०]
अम्रसार-[सं०] } अमलबेत। अम्लवेतस।

अम्रात-[सं०]
अम्रातक-[सं०] } अमड़ा। आम्रातक।

अम्ल-[सं०] १. तक्र। छाछ। मठा। २. खट्टा। अम्लरस। खट्टा रस। ३. अमलबेत। अम्लवेतस। ४ कांजी। कांजिक। ५. बेर। बदरीफल। ६. बरबर चंदन। वर्वरक।

अम्लक-[सं०] बड़हर। लकुच वृक्ष।

अम्लकांजिक-[सं०] कांजी। कांजिक।

अम्लकांड-[सं०] १. लवण तृण। तृणाम्ल। २. लहसुन। रसोन।

अम्लका-[सं०] १. पालक। पालक्य शाक। २. पलासी। पलाशी लता।

CHECKED 1964

अम्लकुटा-[बं०] विषांबिल। वृक्षाम्ल।

अम्लकेशर-[सं०] १. अनार। दाड़िम। २. बिजौरा नीबू। मातुलुंग।

अम्लकेसरी-[सं०] नींबू। अम्लरस नींबू के वृक्ष। सब प्रकार के खट्टे नींबू।

अम्लकोश-[सं०]
अम्लकोशाक-[सं०] } इमली। तिंतिड़ी वृक्ष।

अम्लगोरस-[सं०] तक्र। अम्ल तक्र। खट्टा मठा।

अम्लचांगेरी-[सं०]
अम्लचुक्रिका-[सं०]
अम्लचूड-[सं०] } चूका (शाक)। चुक्रिका। चूकापालंग।

अम्लजंबीर-[सं०] नींबू। अम्लरस निंबूक वृक्ष। सब प्रकार के खट्टे नींबू।

अम्लज-[अ०] आँवला। आमलकी।

अम्लटक-[सं०] अश्मंतक। आवुटा।

Checked

अम्लत्वक्-[सं०] चिरोंजी। पयाल वृक्ष।

अम्ल दही-[हिं०] दही खट्टा। खट्टा दही।

अम्लदोलक-[सं०] चूका। चुक्रिका।

अम्लद्रव-[सं०] खट्टा। अम्लरस। खट्टा रस।

अम्लद्रव्य-[सं०] खट्टा। बिजौरा नींबू आदि खट्टी चीज।

अम्लनायक-[सं०] अमलबेत। अम्लवेतस।

अम्लनिंबुक-[सं०] नींबू। महाम्लनिंबुक। संगतराश नींबू।

अम्लनिशा-[सं०] कचूर। शठी। कचूर।

अम्लनोटिया-[बं०] मरसा। अम्लमारीष।

अम्लपंचक-[सं०]
अम्लपंचफल-[सं०] } पंचाम्ल। पाँच प्रकार के खट्टे फल। यथा—१. अनार, इमली, बेर, चूका और अम्लबेत। २. जंबीरी नींबू, नारंगी, नींबू, अमलबेत और इमली। ३. बेर, अनार, विषांबिल, चूका और अमलबेत।

अम्लपत्र-[सं०] १. अश्मंतक। आवुटा। २. चांगेरी। चौपतिया। ३. चूका। चुक्रिका।

अम्लपत्रक-[सं०] १. अश्मंतक। आवुटा। २. चांगेरी। अम्ललोणिका। ३. भिंडी। रामतरोई।

अम्लपत्रा-[सं०] उटंगन। उबटा।

अम्लपात्रका-[सं०] चांगेरी। खट्टी बूटी।

अम्लपत्री-[सं०] १. चांगेरी। अम्ललोणिका। २. पलासी पलाशी लता।

अम्लपनस-[सं०] बड़हर। लकुच वृक्ष।

अम्लपर्णिका-[सं०] पलासी। पलाशी लता।

अम्लपर्णी-[सं०] १. अत्यम्लपर्णी। राम-चना। २. अम्लपर्णी। [हिं०] हरवल। [मरा०] खाज गोलीचा वेल। [ता०] पुलीपेरंडई। पुलीनरवी। अनुहुइंड वेटिचल। [ते०] बदबट

सालि। बरें बच्चली। घरसी पछा। पुछाबच्चालि।

अल्पम्लपर्णी जाति की लता जो पश्चिमी प्रायद्वीप में, सरकार और मैसूर से दक्षिण की ओर तथा सीलोन में पाई जाती है।

इसका डंठल पसरा हुआ होता है; शाखें निर्बल, रसदार, टेढ़ी-मेढ़ी और रोमयुक्त होती हैं। बाल लंबे और खोखले होते हैं। पत्ते एक एक डंडी पर तीन तीन लगते हैं। वे अंडाकार, चौड़ाई से लंबाई में कुछ अधिक और कटे हुए किनारेवाले तथा अनियमित कँगूरेदार होते हैं। फूल छोटे छोटे और फल चौथाई इंच गोल, मटर के समान, पकने पर अत्यंत लाल वर्ण के देख पड़ते हैं। बीज चिकने और गोलाकार होते हैं।

प्रयोग—प्रायः इसके पत्ते ओषधि-प्रयोग में आते हैं। फल का स्वाद पहले अम्ल जान पड़ता है, फिर जलानेवाली तीक्ष्ण चरपराहट मालूम होती है। वास्तव में इसके पंचांग का स्वाद चरपरा होता है।

इसके पत्ते कभी कभी कीड़े मारने के लिये बाहरी उपयोग में आते हैं। उत्तेजक होने के कारण यह पुल्टिस के रूप में भी व्यवहृत होता है।

अम्लपादप–[सं०] विषांबिल। वृक्षाम्ल। महादा।

अम्लपित्त–[सं०] रोगविशेष। स्वकारणों से कुपित हुआ जो पित्त वर्षा ऋतु में संचित होता है, जब वही पित्त विरुद्ध और दुष्ट, खट्टे और दाहकारक तथा पित्त को बढ़ानेवाले अन्न-पान का सेवन करने से बिगड़ जाता है, तब अम्लपित्त कहलाता है। तथा रूखे, खट्टे, कड़वे और गरम पदार्थों का सेवन करने से जब पित्त कुपित होता है, तब अन्न नहीं पचता, बिना श्रम के थकावट मालूम होती है, वमन होता, खट्टे डकार आते हैं, शरीर भारी होता, हृदय तथा कंठ में दाह होती और भोजन में अरुचि होती है और "ऊर्ध्वगामी" तथा "अधोगामी" दो प्रकार के "अम्लपित्त" रोग उत्पन्न होते हैं। इनमें ऊर्ध्वगामी होने पर हरा, पीला, नीला, काला, निर्मल तथा मांस के जल के समान चिकना, दृढ़, कड़वा, खारा, तीखा और कफ सहित वमन होता है; और अधोगामी अम्लपित्त में नाना प्रकार के वर्णवाले मल उतरते, दाह, मूर्च्छा, वमन और मोह होता, हृदय में पीड़ा होती, शरीर में ददोरे पड़ते और ज्वर होता, भोजन में अरुचि, कंठ, कुक्षि, हृदय, हाथ और पाँव में जलन होती और बहुत डकार आते ह। यह वातयुक्त और कफयुक्त दो प्रकार का होता है।

तद्रोगनाशक औषध-प्रयोग और नंबर—अडूसा नं० ३२। गिलोय नं० १३। गोरखी नं० ११। घृत नं० १४। चिरायता नं० ५। चूना नं० ५, ६। जवाखार नं० १। त्रिफला नं० ४, २०। धान नं० १५। नारियल नं० ६। परवल कड़वा नं० १७। प्याज नं० ४३। पीपल नं० ४१, ५०। पीपलामूल नं० ११। पेठा नं० २६। प्रियंगु नं० ६। फिटकिरी नं० ४२, ४३। सतावर नं० २५। सुहागा नं० ६। हरीतकी नं० २३।

अम्लपुर–[सं०] विषांबिल। वृक्षाम्ल। महादा।

अम्लपुष्पिका–[सं०] शणपुष्पी। बनसनई।

अम्लपूर–[सं०] विषांबिल। वृक्षाम्ल।

अम्लफल–[सं०] १. आम। आम्र। २. विषांबिल। वृक्षाम्ल। ३ इमली। तिंतिड़ी।

अम्लफला–[सं०] १. कंथारी। कन्थारिका। २. करौंदी। करमर्दिका।

अम्लवेत–[हिं०]
अम्लवेतस–[ब०] } अमलबेत। अम्लवेतस। अम्लबैंत।

अम्लभेदन–[सं०] १. अमलबेत। अम्लवेतस। २. चूका। चुक।

अम्लमारीष–[सं०] मरसा (शाक)। अम्ललोणिया।

अम्ललोणिका–[सं०]
अम्ललोणी–[सं०] } चांगेरी। अंबिलोणा। चौपतिया।

अम्लवती–[सं०] १. चांगेरी। तिपत्ती बूटी। २. लोणा छोटी। क्षुद्राम्लिका। नोनी।

अम्लवर्ग–[सं०]
अम्लवर्ण–[सं०] } चांगेरी, बिजोरा नींबू, नारंगी, अनार, कैथ, आँवला, विषांबिल, माचिका, इमली भूबदरी, करांदा, नींबू इत्यादि।

अम्लवल्लिका–[सं०]
अम्लवल्लरी–[सं०] } त्रिपर्णी कंद। त्रिपर्णिका।

अम्लवाटक–[सं०] अमडा। आम्रातक।

अम्लवाटा–[सं०]
अम्लवाटिका–[सं०]
अम्लवाटी–[सं०]
अम्लवाटी पान–[हिं०] } पान अमडा। नागवल्ली भेद। अम्लवाटी नाम का पान।

अम्लवाडक–[सं०]
अम्लवातक–[सं०] } अमडा। आम्रातक।

अम्लवासुक–[सं०] चांगेरी। अंबिलोणा। खटकल।

अम्लवास्तुक–[सं०]
अम्लवास्तूक–[सं०] } चूका (शाक)। चुक्रिका।

अम्लविदुल–[सं०] अमलबेत। अम्लवेतस।

अम्लबीज–[सं०] विषांबिल। वृक्षाम्ल।

अम्लवृक्ष–[सं०]
अम्लवृक्षक–[सं०] } १. विषांबिल। वृक्षाम्ल। महादा। २. इमली। तिंतिड़ी।

अम्लवेत–[हिं०]
अम्लवेतस–[सं०]
अम्लबेंत–[हिं०]
अम्लबैतस–[हिं०] } अमलबेत। अम्लवेत।

अम्लशाक–[सं०] १. विषांबिल। वृक्षाम्ल। २. चूका (शाक)। चुक्रिका।

अम्लशाकाख्य–[सं०] चूका (शाक)। चुक्र नामक पत्रशाक।

अम्लशिरिषिका–[सं०] जलसिरस। जलशिरिषिका। ठाढोन। टिंटिनी।

अम्लष्ठा–[सं०] चांगेरी। अम्ललोणिका। चौपतिया।

अम्लसरा–[सं०] पान अमड़ा। नागवल्ली भेद। अमडा पान।

अम्लसार–[सं०] १. अमलबेत। अम्लवेतस। २. कांजी। कांजिक। ३. नींबू। निंबूक। ४. हिंताल वृक्ष।

अम्लसारक–[सं०] १. कांजी। कांजिक। २. चूक। चुक्र।

अम्लस्तंभनिका–[सं०] १. विषांविल। वृक्षाम्ल। २. इमली। तिंतिड़ी।

अम्लहरिद्रा–[सं०] १. आंबा हलदी। कर्पूरहरिद्रा। २. कर्चूर। शठी। कचूर।

अम्लांकुश–[सं०] अमलबेत। अम्लवेतस।

अम्ला–[सं०] १. चांगेरी। चौपतिया। २. अमलबेत। अम्लवेतस। ३. इमली। तिंतिड़ी। ४. चूका शाक। चुक्रिका। ५. मल्लिका। श्रीवल्ली। ६. अमडा। आम्रातक।

अम्लात्वचा–[सं०] इमली। तिंतिड़ी वृक्ष।

अम्लाटन–[सं०] कटसरैया। पियावासा।

अम्लाढ्य–[सं०] नारंगी। नागरंग।

अम्लात–[सं०]
अम्लातक–[सं०] } कटसरैया। अम्लाटन। पियावासा।

अम्लातकी–[सं०] पलासी। पलाशी लता।

अम्लादन–[सं०] कटसरैया। कुरंटक।

अम्लादि–[सं०] १. विषांविल। वृक्षाम्ल। महादा। २. इमली। तिंतिड़ी। ३. चूका (शाक)। चुक्रिका।

अम्लाध्युषित–[सं०] नेत्ररोग-विशेष। वह नेत्ररोग जो बीच में नीला और किनारे पर लाल होकर सर्वत्र नेत्रों को पकावे, जिसमें दाह और सूजन हो और आंखों से पानी बहे। यह अम्ल आदि के खाने से होता है; इस कारण इसको "अम्लाध्युषित" कहते हैं।

अम्लान–[सं०] १. दुपहरिया। बंधूक। २. कटसरैया। बाणपुष्प। झिंटी।

अम्लानम्–[सं०] कमल। पद्म।

अम्लाना–[सं०] सेवती बड़ी। महासेवती पुष्प वृक्ष।

अम्लानिनी–[सं०] कमलिनी। पद्मिनी।

अम्लाम्ला–[सं०] चांगेरी। चौपतिया।

अम्लायनी–[सं०] बेला। मल्लिकाभेद।

अम्लिका–[सं०] १. इमली। तिंतिड़ी वृक्ष। २. पलासी। पलाशी लता। ३. माचिका। मोइया। अंबष्ठा। ४. चांगेरी। चौपतिया। ५. आम। आम्र।

अम्लिकापानम्–[सं०] इमली का पना। तिंतिड़ी-पानक।

अम्लिकावटक–[सं०] अमडा। आम्रातक।

अम्ली–[सं०] १. जलबेत। जलवेतस। २. चांगेरी। चौपतिया। ३. चूका। चुक्रिका। [पं०, हिं०] इमली। तिंतिड़ी।

अम्लीका–[सं०]
अम्लीकाफल–[सं०] } इमली। तिंतिड़ी वृक्ष।

अम्लीय–[सं०] अमलबेत। अम्लवेतस।

अम्लोटक–[सं०] अश्मंतक। आवुटा।

अम्लोटज–[सं०] चांगेरी। चौपतिया।

अम्लोत्तम–[सं०] अनार। दाड़िम।

अयः–[सं०] लोहा। लौह धातु।

अयकुंचिका–[सं०] मँगरेला। स्थूल जीरक।

अयट्टा–[पं०]
अयत्ता–[पं०] } अयार। अरवान।

अयथा–[सं०] हरीतकी। हर्रे। हर।

अयस–[सं०]
अयसी–[सं०]
अयस्–[सं०] } लोहा। लौह।

अयस्कांत–[सं०] १. लोहा। लौह। २. चुंबक। लौह चुंबक।

अयस्कांतशिला–[सं०] चुंबक। लौह चुंबक। चुंबक पत्थर।

अयस्कीट–[सं०] मंडूर। लौहकिट्ट।

अयार–[हिं०] अयार। [पं०] अयट्टा। अयत्ता। ऐलन। एलुन। अरूर। अरवान। [ने०] अंजीर। अंगियार। जगुचल। [भो०] पियाजे। [लि०] कंग शियोर।

यह गरम हिमालय में काश्मीर से भूटान तक और खासिया के पहाड़ों पर पाया जाता है। इसका वृक्ष २० से ४० फुट तक ऊँचा और काल पाकर गिरनेवाला होता है। छाल रेशेदार, मोटी, लकड़ी हलकी लालिमायुक्त भूरे रंग की और कोमल होती है। पत्ते ३ से ७ इंच तक लंबे तथा १ से ७ इंच तक चौड़े, अंडाकार, जड़ की ओर गोलाकार एवं फुनगी की ओर अनीदार होते हैं। फूल सफेद, कभी कभी लालिमायुक्त नीले वर्ण के तिहाई इंच तक लंबे होते हैं। बीज-कोष छोटे छोटे, गोलाकार, षडंश इंच के घेरे में होते हैं।

गुण और प्रयोग—इसके कोमल पत्ते और फलियाँ बकरी के लिये विषैली होती हैं और कीड़े मारने के लिये व्यवहार में आती हैं। इसकी पुल्टिस क्षत या बद (बाघी) पर लगाई जाती है।

अयाह्व–[सं०] कांसा। कांस्य धातु।

अयुकच्छद–[सं०] छतिवन। सप्तपर्ण वृक्ष। सतिवन। सतोना

अयुग्मक–[सं०]
अयुग्मच्छद–[सं०]
अयुग्मपत्र–[सं०]
अयुग्मपर्ण–[सं०] } छतिवन। सप्तपर्ण वृक्ष। सतोना। सतिवन।

अयोच्छिष्ट–[सं०]
अयोमल–[सं०] } मंडूर। लौहकिट्ट।

अयोरज–[सं०] १. लोहचून। लौहचूर्ण। २. मंडूर। लौहकिट्ट।

अयोवस्ति–[सं०] वस्तिकर्म। पिचकारी।

अरग–[सं०]
अरंगी मछली–[हिं०] } अरंगी मछली। [सं०] चोरंग मत्स्य। [बं०] एलंग माछ।

गुण—मधुर, स्निग्ध, विष्टंभी, शीतल और हलकी है।

अरगदी–[सं०] माधवी लता। अतिमुक्ता।

अरंड–[पं०] रेंड। रेंड़ी। अंडी। एरंड।

अरंड खरबूजा–[पं०] पपीता। वातकुंभफल।

अरंतल–[मला०] सोनापाठा। श्योनाक वृक्ष।

अरअर–[अ०] १. सर्व। सर्व। सरो। २. हाऊबेर। हवुषा।

अरई–[हिं०] अरवी। आलुकी। पेपची।

अरक–[सं०] १. सिवार। शैवाल। २. पित्तपापड़ा। पर्पट। दवनपापर।

अरकुंचब्बाल–[अ०] मोमियाई। मेमिआई।

अरकुट्टमि–[सथा०] पटुआ लाल। लाल पटुआ। विलायती पटुआ।

अरकुल निशा–[फा०] गृध्रसी। वातरोगभेद।

अरकू–[गढ़०] रेवंदचीनी। पीतमूली।

अरक्क–[द्रा०]
अरक्त–[सं०] } लाख। लाक्षा। लाही।

अरगवाँ–[फा०] अर्गवाँ। अर्जवाँ।

अरगु–[क०] लाख। लाक्षा। लाही।

अरग्वध–[सं०] १. अमलतास। आरग्वध। २. सोनुली के फल। स्वर्णालु फल।

अरचू–[गढ़०] १. रेवंदचीनी। पीतमूली। २. रेवंदचीनी नं० १।

अरजन–[फा०] चीना। चीनक।

अरजवाँ–[फा०] अर्गवाँ। अर्जवाँ।

अरजा–[सं०] घीकुवार। घृतकुमारी।

अरज़ा–[अ०] बिज्जू (जंतु)।

अर्जीज–[फा०]
अरजीर–[फा०] } राँगा। वंग। कलई।

अरजुन–[हिं०] १. अर्जुन। कोह वृक्ष। २. [फा०] कंगनी। कंगु धान्य।

अरटाचेट्टू–[तै०]
अरटिचेट्टू–[तै०] } केला। कदली वृक्ष।

अरटिदुंप–[तै०] केले का कंद। कदली कंद।

अरटीचेट्टू–[तै०] केला। कदली वृक्ष।

अरटु–[सं०] सोनापाठा। श्योनाक।

अरडुशी–[गु०]
अरडुसी–[गु०]
अरडूशी–[गु०]
अरडूसी–[गु०] } अडूसा। आटरूष। रूसा। वासक।

अरडूसो–[गु०] १. सोनापाठा। श्योनाक वृक्ष। अरलु। २. [मा०] अडूसा। वासक। आटरूष।

अरण–[सं०] चीता। चित्रक।

अरणि–[सं०] १. अरनी। अग्निमंथ। गनियार। २. चीता। चित्रक। ३. सोनापाठा। श्योनाक वृक्ष। ४. धमासा। दुरालभा। हिंगुआ।

अरणिका–[सं०]
अरणिकेतु–[सं०] } अरनी। अग्निमंथ। गनियारी।

अरणी–[सं०] अरनी छोटी। गणिकारिका। टेकारि।

अरणीकेतु–[सं०] अरनी। अग्निमंथ।

अरणीभेद–[सं०] तेजोमंथ। अरनीभेद।

अरण्य–[सं०] १. वन। कानन। जंगल। [म०] रान। [क०] अटवि। २. कायफल। कटफल।

अरण्यक–[सं०] बकायन। महानिंब।

अरण्यकणा–[सं०] १. काली जीरी। कटुजीरक। बनजीरा। २. बनपापल। वनपिप्पली।

अरण्यकदली–[सं०] १. वनकेला। वनकदली। २. पहाड़ी केला। गिरिकदली।

अरण्यककटी–[म०] बनककड़ी। वनकर्कटी।

अरण्यकपास–[सं०]
अरण्यकपासी–[सं०] } बनकपास। वनकार्पासी।

अरण्यकार्पासी–[सं०] बनकपास। वनकार्पासी।

अरण्यकुक्कट–[सं०] बनमुरगा। वनकुक्कुट। जंगली मुर्गा।

अरण्यकुलात्थका–[सं०]
अरण्यकुलत्था–[सं०]
अरण्यकुलात्थिका–[सं०]
अरण्यकुलत्था–[सं०] } बनकुलथी। वनकुर्थी। कुलत्था।

अरण्यकुसुम–[सं०] कुसुम जंगली। वनकुसुंभ क्षुप।

अरण्यकोल–[सं०] झरबेरा। भूबदरी।

अरण्यघोलिका–[सं०]
अरण्यघोला–[सं०] } घोली शाक। वनघोली।

अरण्यचटक–[सं०] गोरेया। वनचटक पक्षी। बगेरी।

अरण्यचंपक–[सं०] चंपा जंगली। वनचंपक। वनचंपा।

अरण्यछाग–[सं०] बकरा जंगली। वनछाग। बकरी।

अरण्यछागी–[सं०] बकरी जंगली। वनछागी। बकरी।

अरण्यज–[सं०] तिलक। तिलक पुष्पवृक्ष।

अरण्यजार्द्रका–[सं०] पेऊ। वनार्द्रक। जंगली अदरक।

अरण्यजीर–[सं०]
अरण्यजीरक–[सं०] } काली जीरी। वनजीरक।

अरण्यतुलसी–[सं०] बर्बरी। बनतुलसी।

अरण्यत्रपुसक–[सं०] खीरा जंगली। जंगली खीरा। वन्य त्रपुष।

अरण्यत्रपुसी–[सं०] इंद्रायन। इनारू। इंद्रवारुणी।

अरण्यधान्य–[सं०] तीनी। बिवार धान। अरण्यशाली।

अरनो (बंगाल, बिहार आदि प्रान्तों को)

पृ० ६८]

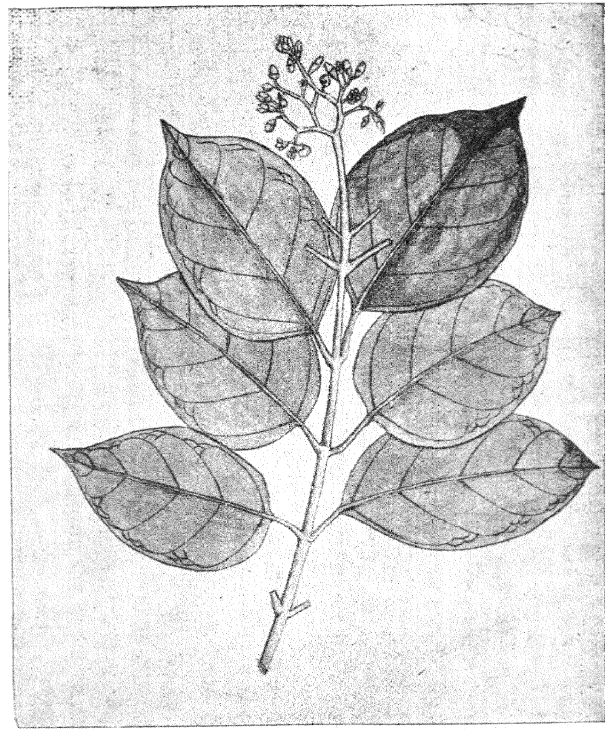

अरनो (समुद्र किनारे की)

अरण्यधेनु–[सं०] बनगाय । जंगली गऊ । वनगो ।
अरण्यपलांडु–[सं०] बनप्याज । वनजात पलांडु ।
अरण्यपिप्पली–[सं०] बनपीपल । वनपिप्पली ।
अरण्यमुद्ग–[सं०] } बनमूँग । मुद्गपर्णी । मुगवन ।
अरण्यमुद्गा–[सं०] }
अरण्यमंथिका–[सं०] } बनमेथी । वनमेथिका ।
अरण्यमेथी–[सं०] }
अरण्यरजनी–[सं०] बनहलदी । वनहरिद्रा । जंगली हलदी ।
अरण्यवायस–[सं०] कौआ । बनकौआ । अरण्यकाक ।
अरण्यवासिनी–[सं०] अत्यम्लपर्णी । रामचना । इमली ।
अरण्यवास्तुक–[सं०] } कुणंजर । बनबथुआ ।
अरण्यवास्तूक–[सं०] }
अरण्यशालि–[सं०] तिन्नी । निवार धान ।
अरण्यशूरण–[सं०] जंगली जमींकंद । वनशूरण । बनओल ।
अरण्यश्वा–[सं०] बंदर । कपि । वानर ।
अरण्यसंभूत–[सं०] भुइँखेखसा । कर्कोटक ।
अरण्यहल्दी कंद–[सं०] १. बनहलदी । वनहरिद्रा । २. आंबा हलदी । आम्रगंध हरिद्रा । आमआदा ।
अरण्यहरिद्रा–[सं०] बनहलदी । वनहरिद्रा ।
अरण्यार्द्रिका–[सं०] पेऊ । बनआदी ।
अरतल–[सं०] रीठा । अरिष्टक ।
अरती–[हिं०] कपूर । कर्पूर ।
अरद्–[गु०] उड़द । माष ।
अरदमून–[म०] हुरहुर । सुवर्चला ।
अरदल–[खा०] तमाल । श्याम तमाल ।
अरनमरम–[मला०] तून । तूणीवृक्ष ।
अरनमारन–[मु०] गोरखपान नं० १ । जख्महैयात ।
अरनाह–[पं०] भारंगी नं० २ । भार्गी । ब्रह्मयष्टिका । भारंगी ।
अरनी–[हिं०] १. अरनी छोटी नं० २ । पित्तघ्नी । उरिन । पीरुन । २. [पं०] भारंगी नं० २ । ब्रह्मयष्टिका ।
अरनी–[हिं०] गनियारी । अगेथ । अगेथु । गनियार । गनियल । गनियाल । [सं०] गणिकारिका । अग्निमंथ । अरणी । वैजयंतिका । जय । जया । जयंती । तर्कारी इत्यादि । [बँ०] गनियारी । भूतविरखी । गनिरि । आगगांत । गनिर । [मरा०] थोरएरण । टाकला । टांकली । [मा०] अरणी । [गु०] अरणी । अरनी । [पं०] अगेथू । [क०] नरुवल । [ते०] तक्किलीचेट्टु । नरुमु । उटि । नरिवरुड । नरुवलु । नेल्लीचेट्टु । [द्रा०] तलुताले । मुनै । वन्हिमरम । वन्निमर । [ने०] गनेरी । [अव०] गनियारी । [गढ़०] बकरचा । [ता०] इरुमैमुल्लइ । मुन्ने । [मला०] आप्पेल । [मु०] नरवेल । [उड़ि०] अगुगा-वात । [फा०] गनियार । [लै०] Premna Integrifolia. Syn: Premna Spinosa.

यह भारतवर्ष के प्रायः सभी प्रांतों में और विशेषकर समुद्र के निकटवर्त्ती स्थानों में, बंबई से हिमालय तक और सिलहट में पाई जाती है।

अरनी प्रसिद्ध दशमूल की एक ओषधि है। इसका वृक्ष मध्यमाकार का, ३०-३५ फुट तक ऊँचा और झाड़दार होता है। इसकी टहनियाँ काँटेदार होती हैं। जड़ से ही इसकी प्रायः तीन-चार शाखाएँ निकलती हैं, इसलिये इसका तना बहुत मोटा नहीं होता। छाल पतली, हलके पीले रंग की और लकड़ी हलकी तथा किंचित् दृढ़ होती है। पत्ते टहनियों पर समवर्त्ती २-३ इंच के घेरे में लगते हैं। नए पत्ते काली जीरी के पत्ते के समान कटे किनारेवाले, अनीदार एवं कँगूरेदार और बेल के बड़े पत्ते के बराबर होते हैं; परंतु पुराने होने पर पत्तों के कँगूरे नष्ट हो जाते हैं और बेल के पत्ते के समान करकरारे होते हैं। माघ, फागुन में जब इसके पत्ते गिर जाते हैं, तब यह वृक्ष थोड़े दिनों के लिये पत्र-विहीन दिखाई पड़ता है। धीरे धीरे नए पत्ते निकलने लगते हैं और चैत-बैसाख तक फिर यह वृक्ष हरा-भरा और सुहावना हो जाता है। तर भूमि-वाले वृक्ष के पत्ते जल्दी निकलते हैं; पर जो वृक्ष ऊसर तथा सूखी जमीन में होता है, उसके पत्ते कुछ विलंब करके निकलते हैं। यह वृक्ष चैत-बैसाख में फूलता फलता है। छोटे छोटे फूल झुमकों में लगते हैं और वे नीलापन लिए सफेद रंग के अथवा हलका पीलापन लिए हरे रंग के होते हैं। ये पाँच पखड़ीवाले और बाहर (आच्छादन) से ढँके हुए होते हैं। इनकी गंध अच्छी नहीं होती। फल मकोय के फल के समान छोटे छोटे गोल झुमकों में लगते हैं। वे कच्चे होने पर हरे और पकने पर काले हो जाते हैं और उनमें सूक्ष्म बीज होते हैं। फल वर्षा ऋतु के प्रारंभ में गिर जाते हैं और इनकी सूखी बारीक सींकें झुमकदार टहनियों पर लगी रहती हैं। पीछे वे भी धीरे धीरे गिर जाती हैं। पानी पड़ने पर फलों से पौधे उत्पन्न होते हैं। पहले कहा जा चुका है कि जड़ ही से वृक्षों की कई शाखाएँ होती हैं। इसका कारण यही है कि फल में अनेक सूक्ष्म बीज होते हैं जिससे वे एक साथ अंकुरित होकर पौधे तयार होते हैं। यदि इसकी देख-रेख की जाय तो यह वृक्ष कुछ और बड़ा और मोटे स्तंभवाला हो सकता है। जहाँ इसका जंगल होता है, वहाँ ये वृक्ष एक दूसरे के साथ इस प्रकार संघटित रहते हैं कि इनको पार करना कष्टसाध्य हो जाता है। इसकी पुरानी शाखाओं पर जो नई टहनियाँ निकलती हैं, वे प्रायः सूखकर झड़ जाती हैं और इनके शेष भाग ३-४ इंच लंबे जो उन पर लगे रहते हैं, मजबूत काँटे के समान हो जाते हैं। इसकी लकड़ी भी मजबूत होती है। पुरानी टहनियों पर भी छोटे छोटे उक्त प्रकार के काँटे होते हैं। इसकी सीधी टहनियों को काटकर छड़ियाँ बनाई जाती हैं। सफेद रंग

की छड़ी पर उन कांटों के स्थान पर धूसर रंग की गाँठें अच्छा मालूम होती हैं।

अरनी के वृक्ष ऊपर कहे हुए स्थानों के सिवा बंगाल, बिहार, मध्य प्रदेश, अवध, गढ़वाल, राजपूताना, दक्षिण भारत और सीलोन में देखने में आते हैं।

गुण-दोष—यह कटु, तिक्त, कषाय, उष्णवीर्य्य, मधुर, अग्नि-वर्द्धक तथा कफ, वात, मेदरोग, आमदोष, जुकाम, सूजन, बवासीर, आमवात, मलरोध, मंदाग्नि, पांडुरोग और विष-विकार का नाश करनेवाली है।

इसका अर्क शोथ, कृमि, पांडु और कफ का नाशक है।

प्रयोग—इसकी जड़ की छाल औषधि-प्रयोग में आती है।

मात्रा—३ माशे से १ तोले तक।

प्रतिनिधि—अरनी छोटी।

प्रयोग—१. यह कड़वी अग्निप्रदीपक तथा ज्वर, आमविकार, उदर्द आदि रोगों में हितकारी है। इसके प्रयोग से पेट का शूल, ज्वर, जलोदर और सब प्रकार की सूजन नष्ट होती है। पत्तों का शर्बत अग्निप्रदीपक और शूलनाशक होता है तथा इसका काढ़ा अपान वायु को दूर करनेवाला है। जड़ का काढ़ा विकाशी और बलकारी है। प्रतिश्याय और ज्वर में पत्तों को पीपल के साथ पीसकर देते हैं। इसके पंचांग का काढ़ा स्नायु की पीड़ा और आमवात में हितकारी है। २. उदर्द रोग में इसकी जड़ को पानी में पीसकर घी के साथ सेवन करना चाहिए। ३. ज्वर के रोगी के आमाशय की पीड़ा में जड़ के काढ़े को दिन में २-३ बार पिलाने से लाभ होता है। ४. शरीर की ढीलापन मिली सब प्रकार की सूजन पर इसकी और पुनर्नवा की जड़ को पीसकर गरम करके लगाने से फायदा होता है। ५. मंदाग्नि में इसके काढ़े मे सोंठ का चूर्ण मिलाकर पान करना हितकारी है। ६. पेट के शूल और आध्मान में पत्तों का प्रयोग किया जाता है। ७. हृदय की निर्बलता पर पत्ते और धनिया का काढ़ा देना उपकारी है। ८. आमाशय के शूल मे पत्तों का काढ़ा गुणकारी है। ९. वातज पीड़ा में पत्तों का शाक खिलाने से लाभ होता है। १०. सर्दी में पत्तों को काली मिर्च के साथ पीसकर पिलाना गुणकारी है। ११. कोष्ठबद्धता पर पत्ते और अरहर की छाल का काढ़ा देना चाहिए। १२. बवासीर पर पत्तों को पीसकर पुल्टिस बाँधने से फायदा होता है। १३. गठिया और स्नायु की वातज पीड़ा में इसके पंचांग का काढ़ा पीना गुणकारी है। १४. शीतपित्त में जड़ का चूर्ण घृत के साथ सेवन करने से लाभ होता है। १५. हस्तिप्रमेह और वसाप्रमेह में इसके काढ़े का पान करने से फायदा होता है। १६. सूजन पर इसके पत्तों की पुल्टिस बाँधनी चाहिए। १७. व्याघ्र के काटने पर इसके पत्तों को पीस उसमें नमक मिलाकर पुल्टिस बाँधने से बहुत लाभ होता है। १८. शीत ज्वर में इसकी जड़ को सिर में बाँधने से लाभ होता है। १९. अंडकोष पर इसके पत्तों को पीस टिकिया बनाकर बाँधने से और तांबे की सलाई से पैर की अनामिका उँगली पर दाग देने से लाभ होता है। २०. जीर्णज्वर में इसकी जड़ को विधिपूर्वक चोटी में बाँधना चाहिए। २१. त्रिदोषज गुल्म पर जड़ के गरमागरम काढ़े मे गुड़ मिलाकर पिलाने से फायदा होता है। २२. वसाप्रमेह पर इसकी जड़ की छाल के काढ़े से फायदा होता है।

अरनी छोटी–[हिं०] छोटी अरनी। टेकार। टेकारी। [सं०] क्षुद्राग्निमंथ। तपन। अरणी। रक्तांग इत्यादि। [बँ०] छोट गनियारी। छोटगणिरी। [मरा०] लघुएरण। नरवेल। रहां-कला। नरवेलर। टाकली। [क०] निल्ली। वल्लि। [को०] तल्ली। [ते०] चिरिवोल्लेचेट्टु। निल्लि। तलुकि। कूरनिल्ली। [गु०] नहानी अरनी। [द्रा०] तलुदल। तलूदलेल। [लै०] Premna Spinosa; Clerodindron Phlomoides.

यह छोटी और बड़ी इन भेदों से दो प्रकार की होती है। भारतवर्ष के कुछ प्रांतों में छोटी को छोटी अरनी मानकर व्यवहार मे लाते हैं और कई प्रांतों मे बड़ी को ही छोटी अरनी समझकर उसका उपयोग करते हैं। अतः हम यहाँ पर उक्त दोनों प्रकार के वृक्षों का अरनी छोटी नं० १ और अरनी छोटी नं० २ के नाम से सचित्र वर्णन करेंगे।

शालिग्राम निघंटुभूषण में इसका विवरण यों दिया गया है–"इसका वृक्ष होता है। पत्ते गोल और सूक्ष्म करकरयुक्त होते हैं, फूल सफेद होता है; फल छोटे करौंदे के समान होते हैं।"

गुण—अरनी छोटी के गुण अरनी के समान हैं। विशेषकर लेपन, उपनाह और सूजन में यह अधिक गुणदायक होती है।

प्रयोग—१. इसकी जड़ प्रायः औषधिप्रयोग में आती है। २. रुधिर शुद्ध करने के लिये पत्तों के रस में मधु मिलाकर पिलाना चाहिए। ३. पुराने उपदंश पर पत्तों के रस का सवा तोले की मात्रा से दिन मे दो बार कुछ दिनों तक सेवन करने से लाभ होता है। ४. अतिसार और कृमिरोग पर भी यही प्रयोग गुणकारी होता है। ५. पशुओं के आध्मान पर इसका पंचांग खिलाना चाहिए। ६. घाव पर पत्तों को पीसकर लगाने से फायदा होता है। ७. ज्वर में इसका काढ़ा लाभकारी है।

अरनी छोटी नं० १–[हिं०] छोटी अरनी। संगकुप्पी। संग-कूपी। [सं०] क्षुद्राग्निमंथ। कुंडली। [बँ०] बनजुमत। बन-जोयन। बनजोएन। बोनजोई। बानजई। बनजुएन। बत्रज। [मु०] बनजाई। [मा०] बनजाई। [द०] इसंधारी। संग-कुपी। [ता०] शंगनकुपी। थिन शंगनकुप्पी। शंगमकुपी। पिनारि। [ते०] पिशिनिका। उतिचेट्टु। पीसांगी। पिसिंघा। टककोलपुचेट्टु। नल्लकुपि। एरुपिचेच-एत्ति-पिसीनिक। पिडनिक। प्युनिक। एरुपच्छ। [खा०, को०] विषमधारी। कुंडली। [मला०] निर्वोच्छी। [लै०] Clerodendron Inerme.

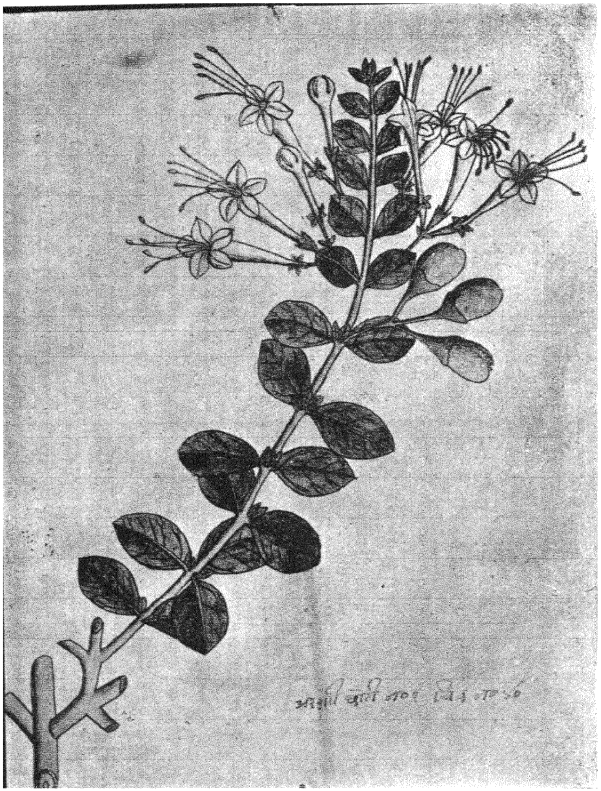

अरनी छोटी नं० १

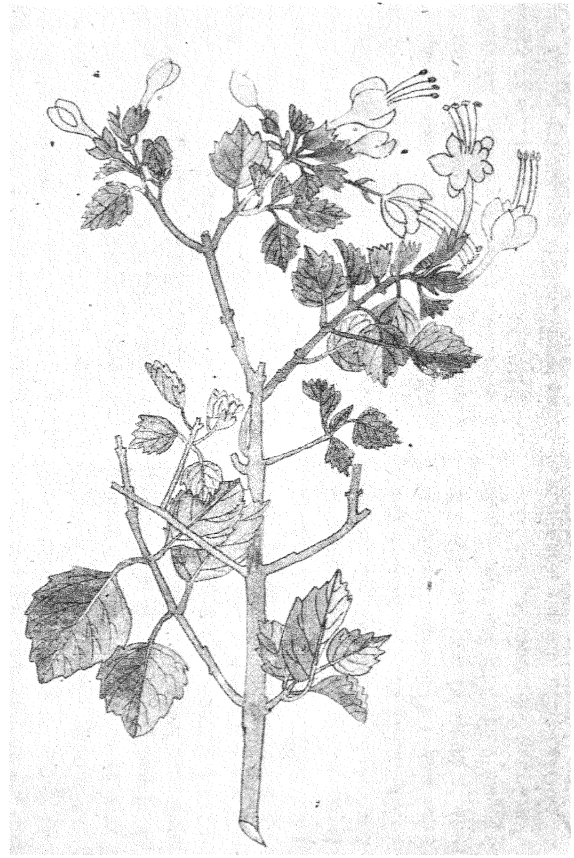

अरनी छोटी नं० २

यह भारतवर्ष और सीलोन में समुद्र के किनारे बंबई से टेनासरिम तक पाई जाती है।

इसका वृक्ष झाड़दार ३ से ७ फुट तक ऊँचा होता है। पत्ते पौन इंच से १॥ इंच तक लंबे, चौड़े और समवर्त्ती लगते हैं। फूल नलिकाकार सफेद रंग के आते हैं। फल गोल होता है। उनमें ३-४ बीज होते हैं।

प्रयोग—पत्ते और जड़ का रस गलगंड और कामेच्छा की निर्बलता पर हितकारी समझा जाता है। इसकी मात्रा एरंड के तेल के साथ अथवा योंही एक दो तोले भर की होती है। सूखे पत्ते भी उक्त काम के लिये व्यवहार में आते हैं तथा इसकी पुल्टिस गिल्टी पर लाभकारी है। उन्माद में पत्तों के काढ़े से रोगी को स्नान कराना अच्छा है। जड़ को तेल में पकाकर गठिया पर लगाना लाभकारी है। मलाया और मकेसर के लोग बुरी मछली खाने से उत्पन्न हुए विष पर इसका फल या जड़ खिलाते है। नए घावों पर पत्तों को तेल में पीस आग पर गरम करके लगाते हैं। हरा भात पकाने के लिये मलाया के लोग इसके पत्तों का प्रयोग करते हैं। बंबई में यह वृक्ष ज्वरनाशक समझा जाता है। पत्तों के रस की मात्रा सवा तोले है। यह बहुत कड़वा होता है।

औषधि-प्रयोग में इसका गुण चिरायते के समान माना जाता है। सूखे पत्ते और ताजे पत्ते का रस एक समान गुणकारी होता है। इनको छाया में सुखाकर काढ़ा, चूर्ण या बटी के रूप में व्यवहार में लाना चाहिए।

अरनी छोटी नं० २–[हिं०] अरनी छोटी। टेकार। टेकारि। उरिन। पीरुन। [संता०] पंजोत। [सिंह०] घरयत। [गु०] इरुन। अरनी। [मु०] ऐरन। [मा०] ऐरनमूल। [ता०] तलुद लेल। तलुदल। वतमडकि। [ते०] तेलकी। नेळी। तेकलि। तेलेकी। तिलक। [मरा०] सफेद टेकार। [लै०] Clerodendron Phlomoides.

यह पश्चिमोत्तर हिमालय की तराई से सीलोन तक, विशेषकर गरम प्रांतों में, बिहार-उड़ीसा, रत्नागिरि और थाना जिले में अधिक पाई जाती है; किंतु बंगाल में देखने में नहीं आती।

यह वही वृक्ष है, जो यहाँ पर टेकार के नाम से प्रसिद्ध है और अरनी की जगह व्यवहार में आता है।

इसका वृक्ष १०-१२ फुट तक ऊँचा, झाड़दार होता है, किंतु तराइयों का वृक्ष मध्यमाकार का, ३० फुट तक ऊँचा देखने में आता है। छाल पतली, चिकनी और हलके पीले रंग की होती है। माली लोग इसकी भी पुष्प-वृक्षों में गणना कर इसके फूलों को अन्य फूलों की भाँति पूजा में लाते हैं। अतः इसको लोग वाटिकाओं में भी लगाते हैं। बारी तथा खेत को पशुओं से बचाने के लिये नीलकाँटा, मेहँदी इत्यादि के समान इसको भी किनारों पर रोप देते हैं। यह वृक्ष भारतवर्ष के प्रायः सभी प्रांतों में पाया जाता है, विशेषकर बिहार, कहीं कहीं बंगाल, मध्यप्रदेश, अवध, पंजाब, सिंध, मेवाड़, सीलोन आदि प्रदेशों में अधिक होता है। इसके पत्ते अरनी के पत्ते के समान किंतु उससे छोटे १॥ से २॥ इंच तक के घेरे में गोलाकार और कोई कोई कँगूरेदार होते हैं। गरम प्रांतों की अपेक्षा ठंढे प्रांतों के वृक्षों के पत्ते अधिक कँगूरेदार दिखाई पड़ते हैं। टहनियों पर पत्ते अनियमित लगते हैं। किसी पर समवर्ती, किसी पर विषमवर्ती, कहीं एक साथ तीन पत्ते टहनियों के तीनों तरफ एवं किसी पर ४ पत्ते चारों ओर से लगे रहते हैं। प्रायः शीत ऋतु में इसमें फूल आना आरंभ होता है और गरमी तक फूलता है। यहाँ जो वृक्ष टेकारी के नाम से प्रसिद्ध है, उसके फूल श्वेत वर्ण के पाँच दलवाले होते हैं तथा उनसे सुगंधि भी आती है; और दूसरे के फूल लाल अथवा गुलाबी रंग के आते हैं। इसका फल देखने में नहीं आता। वृक्ष की पतली पतली सोरें भी; जो भूमि पर दूर तक पसरी हुई रहती हैं, अंकुरित होकर पौधे के रूप में हो जाया करती हैं और उनसे नवीन वृक्ष तैयार हो जाते हैं। अन्यान्य १०-१२ फुट ऊँचे होनेवाले वृक्षों की अपेक्षा इसकी जड़ मोटी होती है।

प्रयोग—बंबई में इसकी जड़ कड़वी तथा बलकारक मानी जाती है और छोटी माता से पीड़ित रोगी को आरोग्य प्राप्त कर लेने पर देते हैं। दक्षिण हिंदुस्तान में इसके पत्तों का रस १–१॥ तोले की मात्रा से उपदंश में दिन में दो बार दिया जाता है। संथाल लोग जलोदर में इसको शरीर पर मलते हैं और पशुओं की बदहजमी, कृमि या पेट फूलने पर इसे खिलाते हैं।

अरबक–[फा०] बत्तक। कलहंस पक्षी।

अरबी–[पं०] अरवी। आलुकी। पेपची।

अरबी गोंद–[फा०] बबूल का गोंद। बर्बुर-निर्य्यास। गोंदबबूर।

अरबे पन–[म०] कनखजूरा। कनगोजर। गोजर।

अरभा–[गोंड०] धौ। धववृक्ष।

अरभेक्के–[क०] गुरभीटुं। चिमिंटा।

अरयो–[पं०] राई। राजिका।

अरर–[हिं०] मैनफल। मदन।

अरल–[म०] सोनापाठा। श्योनाक वृक्ष। अरलू।

अरली–[खा०] पीपल। अश्वत्थ वृक्ष।

अरलु–[सं०] १. सोनापाठा। श्योनाक वृक्ष। २. सोनापाठा भेद। प्रियजीव। ३. [क०] बेत। वेतस।

अरलुस–[हिं०]
अरलुस खरकठ–[हिं०]
अरलू–[हिं०]
} सोनापाठा। श्योनाक वृक्ष। टेंटु।

अरले–[खा०] पीपल। अश्वत्थ वृक्ष।

अरलैकाय–[क०] हरीतकी। हर्रे। हड़।

अरवान–[पं०] अयार । अरुर ।

अरविंद–[सं०] १. कुमुद । नीलोत्पल । २. कमल । पद्म । तांबा । ताम्र । ३. कमल लाल । रक्त पद्म । लाल कमल । ४. सारस पक्षी ।

अरविंददलप्रभ–[सं०] तांबा । ताम्र ।

अरविंदनी–[सं०] कमलिनी । पद्मिनी । कमल का पंचांग ।

अरवी–[प०] १. सहालुक । आड़ू । शफ्तालू । २. [हिं०] अरवी । कच्चू । घुइयाँ । चमकरे का गड्ढा । पेपची । लाल आलू । कांदू । कांदा । [बं०] कचु । कोचु । आशुकोचु । बनकोचु । गुरी । [प०] राव आलु । कचालू । गधियाली । अरबी । कसोरी । गगली । गुइयाँ । अरवी । [मरा०] आलु । कसालु । कसैलु । चमकुरा । अरवी । [मा०] अरी । अर्वी । [उ०] सारु । [ता०] शिमक किजहंगु । शिमई किलंगु । [तै०] चमगड्डा । चमकुरा । चमद्रुम । चेमा । [द्रा०] श्येम कलेंग । [क०] श्यामे गड्डे । [मला०] चेंप किज । हत्ता । [खा०] आविगड्डे । केशवंगड्डे । [अ०] कलकास । कलकलाश । [लै०] Aolocasia Antiquorum. Arum Colocasia. [अं०] Indian yam.

यह भारतवर्ष के गरम प्रांतों के खेतों में पाई जाती है एवं सीलोन में भी इसकी खेती की जा सकती है। जंगली अरवी भी देखने में बहुत आती है। इसका संस्कृत नाम आलुकी, कच्चू, कच्वी आदि है। यह एक प्रकार का भूरे रंग का कंद है जो स्वाद में फीका होता और कंठ में खराश उत्पन्न करता है। इसका गुल्म लंबा और भद्दा होता है। इसके नीचे भूमि के अंदर ६ इंच या इससे भी अधिक का गोल कंद बैठता है। इसके साथ कई लंबे लंबे दूसरे कंद लगे रहते हैं। जड़ से कई पत्र-दंड ३-४ फुट लंबे और गूदेदार निकलते हैं। इसके पत्ते कमल के पत्तों के समान ६ से १६ इंच तक के घेरे में गोलाकार होते हैं। इसके फूल नारंगी रंग के होते हैं।

अरवी तीन प्रकार की होती है—अरवी, बंडा और मानकच्चू। मानकच्चू नाम की अरवी बंगाल में अधिक होती है। इसका कंद बहुत लंबा होता है।

प्रायः सभी प्रांतों में इसकी खेती की जाती है। भली भांति गहरी जोती हुई और खाद मिली हुई दुमट मिट्टी में बैसाख से आषाढ़ तक इसकी पूती रोपी जाती है। समय समय पर सींचते हुए कातिक तक खेतों से निकालते हैं।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण दोष—यह बलकारी, स्निग्ध, शीतल, वीर्य्य-वर्द्धक, हृदय के कफ का नाश करनेवाली तथा गुरुपाकी और गले को हानिकारक है, विशेषकर निर्बल आमाशयवाले को बहुत कठिनता से पचती है। तेल में तली हुई रुचिकारी होती है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—पहले दर्जे में गरम और दूसरे में तर तथा किसी किसी के मत से शीतल है। शरीर को बृंहणकारी, ओज की चालनकर्त्री, वक्षस्थल की रूक्षता का नाश करनेवाली, कास, गले के खरखराने और अतिसार में गुणकारी एवं वीर्य को बढ़ानेवाली पर दीर्घपाकी है।

दर्पनाशक—दालचीनी, लौंग और खटाई।

प्रतिनिधि—भिंडी।

प्रयोग—१. इसके पत्ते, कोंपल और डंडी की भाजी, तथा कंद की तरकारी बनाई जाती है। इसकी डंडी का रस अनुलोमन है। नसों से रुधिर के गिरने पर हितकारी तथा कटे हुए स्थान पर लगाने से लाभकारी है। इसमें शोषण-शक्ति होने के कारण दाहयुक्त बद और गिल्टियों पर डंडी के रस में नमक मिलाकर लगाने से लाभ होता है। खाने में यह संग्राही है तथा अर्श में लाभकारी है। बर्रे तथा अन्य विषैले कीड़ों के दंश पर लगाने से विष का नाश होता है। २. रक्तवाहिनी शिराओं के रुधिर-स्राव पर इसके कोमल पत्तों का रस लगाना और पिलाना हितकारी है। ३. घाव पर पत्तों का रस लगाना चाहिए। ४. गाँठ की सूजन पर काली अरवी के पत्ते और डंडी के रस में नमक डालकर लेप करने से लाभ होता है। ५. गंज रोग पर काली अरवी के कंद का रस लगाने से लाभ होता है। ६. कोष्ठबद्धता में इसके कंद का रस पिलाना हितकारी है। ७. बर्रे के डंक पर रस लगाने से लाभ होता है। ८. रक्तार्श में रस का पान गुणकारी है। ९. यकृत् में रुधिर जमने पर रस पिलाने से लाभ होता है।

अरवी ममड़ी–[तै०] अमड़ा । आम्रातक ।

अरवीयाँ–[अ०] पीनस । नासारोग-विशेष ।

अरशम्मर–[द्रा०], **अरस**–[ता०] } पीपल । अश्वत्थ वृक्ष ।

अरसनतेगा–[खा०] धाराकदंब । नीप ।

अरसा–[ता०] पीपल । अश्वत्थ वृक्ष ।

अरसिउतेगा–[मै०] धाराकदंब । नीप ।

अरसिन–[क०] हलदी । हरिद्रा ।

अरसिन गुर्गीमारा–[खा०] तमाल । श्याम तमाल ।

अरसिनवण दहुविन नष्णी–[क०] सहिंजन । शोभांजन वृक्ष ।

अरसी–[ता०] धान । धान्य ।

अरसेमर–[क०] पीपल । अश्वत्थ वृक्ष ।

अरहर–[हिं०] अड़हर । रहर । रहरी । तुवर । [सं०] आढ़की । तुवरिका । तुवरी । शणपुष्पिका आदि । [बं०] आढ़री । अडर । हरहर । ओरोर । ओरोल । [शिमला०] केहलु । कोहलु । [पं०] डंगरी । अरहर । डिंगर । तोहर । अड्ड । [म०, प्र०] तुर । [मरा०] तुरी । तूर । [गु०] तुरदाळ्य । तुरदाल । तुवेरी । [मु०] तुर । तुरा । तुवेर । [द०] तूर । तुव्वुर । [क०] तोगरी ।

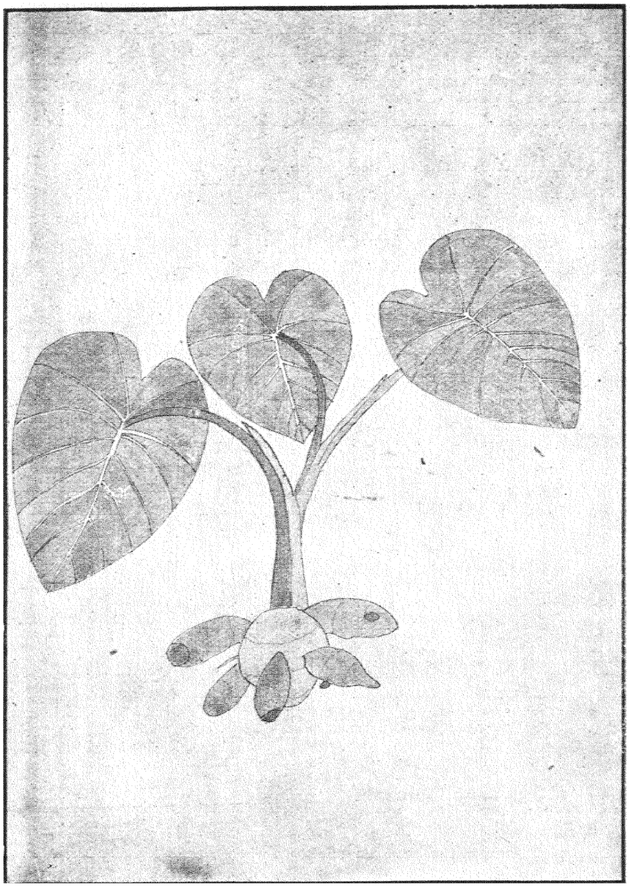

अरवी (पत्ते)

अरहर

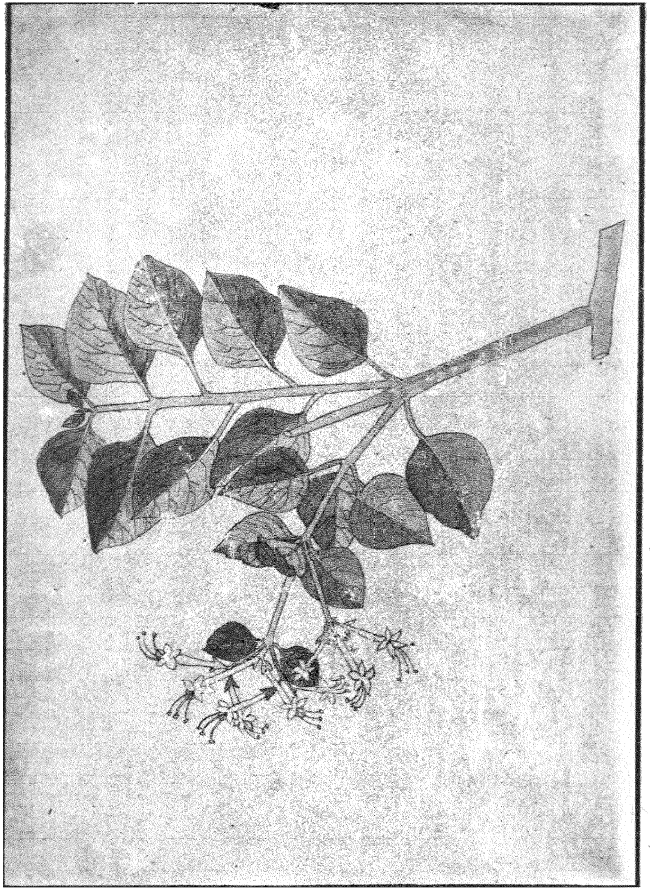

अरनी छोटी नं० २ (बिहार, पश्चिमोत्तर आदि प्रान्तों की)

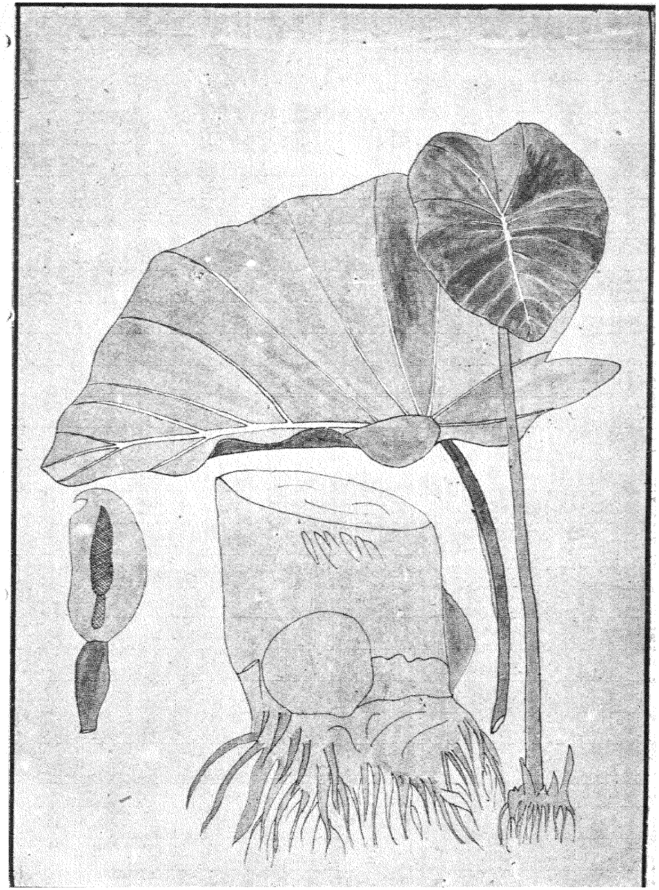

अरवी (कन्द)

तुवरय। तोवरी। कटखाकुट। [तै०] कादुलु। कंडलु। [ता०] तुवरै। थोवरे। [खा०] तोगरी। तुवरय। [मला०] तुवरा। [मा०] तूर। आरेड। [द्रा०] तोवरै। [फा०] शाखळ। शाखूज। शाखुल। [अ०] शाखुलसाज। [लै०] Cajanus Nidicus. Syn: Cytisus Cajan. [अं०] Pigeon pea.

भारतवर्ष के प्रायः सभी प्रांतों में इसकी खेती की जाती है। इसका झाड़ सीधा होता है। पत्ते एक दो सींक पर तीन तीन लगते हैं और वे लंबे, किंचित् अंडाकार तथा अनीदार होते हैं। फूल पीले होते है। उन पर लाल नसें होती हैं और वे सुहावने दिखाई पड़ते हैं। फलियाँ दो-तीन इंच लंबी तथा चौथाई इंच तक चौड़ी होती है और उनमें ३-५ बीज होते हैं। बीज को ही 'अरहर' कहते हैं। यह लाल और पीलापन लिए सफेद दो प्रकार का होता है। इसकी दाल सुस्वादु और सर्वप्रिय होती है।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—कषाय, मधुर, शीतवीर्य्य, रूखी, हलकी, मलसंग्राहक, वातकारक, वर्णकारक तथा पित्त, कफ और रुधिर के विकारों को शांत करनेवाली एवं गुल्मव्रण, गुल्म, ज्वर, अरुचि, खाँसी, वमन, हृदयरोग और अर्श रोग में हितकारी है।

यह घी के साथ वातनाशक, लेप करने से कफ और पित्तनाशक तथा सेंक से कफ और मेद-नाशक होती है।

इसकी दाल पथ्य, कुछ वातकारक, कृमिनाशक और घृत के साथ त्रिदोष-नाशक है।

अरहर सफेद—भारी, वात और पित्त को दूषित करनेवाली, अम्लपित्तकारी, मलरोधक, पथ्य और आध्मानकारक है।

अरहर लाल—रुचिकारक, बलकारक, पथ्य, ज्वरनाशक तथा पित्त, संतापादि को दूर करनेवाली है।

अरहर काली—बलकारक, अग्निदीपक, पित्त और दाह का नाश करनेवाली है।

अरहर का यूष—स्वादु, कषाय तथा पीनस, श्वास, त्रिदोष, कास, ज्वर, रुधिरदोष और कृमि का नाशक है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—पहले दर्जे में गरम और रूक्ष तथा किसी के मत से ठण्ढी और रूक्ष है। पैत्तिक, रुधिर-विकार और विष को लाभकारी है तथा अल्पाहार है। दंतपीड़ा में इसके काढ़े से कुल्ले करना लाभकारी है। दीर्घपाकी, आध्मानकारी तथा निद्रानाशक है।

दर्पनाशक—खटाई और गाय का घी।

प्रतिनिधि—मसूर।

प्रयोग—१. इसकी फली इससे गरम और रूक्ष है, तो भी इससे कोष्ठबद्धता हो जाती है। कितने मनुष्यों को, उनकी प्रकृति के अनुकूल न होने से, अम्लपित्त और हृदय में दाह हो जाता है। इसकी दाल गरम, शुष्क, विबंधकारक तथा शीत रोग में उपयोगी है। यह शीघ्र पचनेवाली एवं रोगी के खाने के काम में आती है। गरम और रूक्ष होने के कारण किसी किसी को नुकसान करती है, परंतु इसमें घी डालकर खाने से किसी प्रकार का अवगुण नहीं होता। मुखरोग में इसके पत्तों का उपयोग किया जाता है। कामला पर पत्तों के रस में थोड़ा नमक मिलाकर देते हैं। सूजन पर बीजों की पुल्टिस लाभकारी है। २. स्तनों के दूध का संचार बंद करने के लिये इसकी फली और पत्तों को पीस गरम कर स्तनों पर लेप करने से फायदा होता है। ३. मुखपाक और मसूड़े की सूजन पर इसके कोमल पत्तों का चबाना हितकारी है। ४. घाव पर बीजों की पुल्टिस गुणकारी है। ५. मुखपाक में पत्तों के रस से कुल्ले करने से लाभ होता है। ६. अफीम के विष पर पत्तों का रस पिलाना चाहिए। ७. आधासीसी मे पत्तों का रस नाक में टपकाने से लाभ होता है। ८. कंठ और गले की सूजन में पत्तों का रस गरम कर गरगरा लेने से अथवा दाल के पानी को गरम कर गरगरा लेने से फायदा होता है। ९. हिचकी में इसकी भूसी को चिलम में भरकर धूम्रपान करना गुणकारी है। १०. बालक की अंडवृद्धि पर इसको पीसकर लगाने से लाभ होता है। ११. आँख के जाले में इसकी जड़ को पानी में पीसकर अंजन करना चाहिए। १२. नशे की गर्मी पर इसकी दाल भिगोकर उसका पानी पिलाने से लाभ होता है। १३. गले की सूजन में इसकी पकी हुई दाल के गरम पानी से कुल्ला करना चाहिए। १४. मुख के छाले पर इसके कोमल पत्ते और कत्थे को चबाने से लाभ होता है। १५. सन्निपात की दशा में पसीना आने पर दाल, सोंठ और सेंधा नमक को पीस भूनकर मालिश करना गुणकारी है। १६. विशूचिका में इसके एक तोले पत्ते को एक छटाँक शीतल जल में पीस वस्त्र में छानकर तीन तीन घंटे पर पिलाने से फायदा होता है।

अराटि—[तै०] केला। कदली। रंभा।

अरारि—[हिं०] } करंजी। करंजिया। करंजुवा। [सं०] उद-
अरारी—[हिं०] } कीर्य्य। पडम्रंथा। [म०] थोरकरंज। अराक। [अ०] पोलु। पीलू।

अरारी करंज का भेद है।

गुण—स्तम्भनकारी, कड़वी, कषैली, पाक में कटु और उष्णवीर्य्य तथा वमन, पित्त और अर्श रोग एवं कृमि, कोढ़ और प्रमेह-नाशक है।

अरारु—[हिं०] हस्त्यालुक। हस्तालुक।

अरारुट—[हिं०] }
अरारुट किशंगु—[ता०] }
अरारुट गड्डलु—[तै०] } तवाखीर। तीखुर। तवक्षीर।
अरारुटचा गड्डा—[म०] }
अरारोट—[हिं०] }

अराल–[सं०] राल । सर्जरस ।

अरिताल–[सं०] हरिताल । हरताल ।

अरि–[सं०] १. दुर्गंधखैर । विट्खदिर । २. [ते०] कचनार सफेद । श्वेत कांचन वृक्ष । सफेद कचनार । ३. [मला०] धान । धान्य ।

अरिग्रा–[यू०] अरिया (यूनानी बूटी) ।

अरिक–[हिं०] कचनार सफेद । श्वेत कांचनाल वृक्ष । सफेद कचनार ।

अरिट्टचेट्ट–[ते०] केला । कदली वृक्ष ।

अरिटाकु–[ते०] सतिवन । सप्तपर्ण ।

अरिठा–[गु०]
अरिठान–[गु०] } रीठा । अरिष्टक ।

अरितमंजरी–[सं०] मुक्तवर्चा । मुक्तवर्चीय । हरता । [हिं०] कुप्पि । [बं०] मुक्तझुरी । मुक्ताझुरी । शेत बसंत । मुरकांत । मुरकाटा । [मरा०] खोकली । खोकली । [मा०] खोकली । खाजोटी । [गु०] वैछिकाँटा । वैछिकाँटो । [उ०] ईन्द्रमरिस । [ता०] कुप्पमेनी । कुप्पइमेनि । [ते०] कुप्पिंटाकु । कुप्पइचेट्टु । मुरकेडुचेट्टु । मुकाँडाचेट्टु । [क०] कुप्पकेरे: । [द्रा०] कुप्पैमेनि । [कना०] चलमरी । चालमरी । कुप्पी । [लै०] Acalypha Indica. Syn: Acalypha Spicata, Acalypha Canesunus, Acazypha Ciliata

यह भारतवर्ष के प्रायः सभी प्रांतों में बाग, बगीचे, सड़क इत्यादि के किनारे आप ही आप उत्पन्न होती है। यह क्षुप जाति की वनौषधि वर्षजीवी, सीधी, १ से ३ फुट तक ऊँची होती है। शाखाएँ सघन, लंबी त्रिकोणाकार, झुकी हुई रहती हैं। पत्ते फीके हरे १ से ३ इंच तक लंबे-चौड़े, अंडाकार, कटे किनारेवाले कँगूरेदार होते हैं। ठंडे प्रांतों की अपेक्षा शुष्क प्रांतों की अरितमंजरी के पत्ते सूक्ष्म कँगूरेदार होते हैं तथा कहीं कहीं कँगूरे नहीं देख पड़ते। पत्ते की डंडी पतली, फैली हुई, पत्ते से भी अधिक लंबी होती है। पुरुष जाति के फूल गुच्छे में हरे रंग के और स्त्री जाति के स्वतंत्र अलग अलग आते हैं। ऊपर कहा गया है कि इसका क्षुप वर्षजीवी होता है; किंतु कहीं कहीं बारहो मास देखने में भी आता है तथा फूल भी बारहो मास देख पड़ते हैं। बीजकोष सूक्ष्म, प्रायः एक बीजवाले तथा बीज चिकने होते हैं।

गुण-दोष—विरेचक, वमनकारक तथा वात, कफ, श्वास, खाँसी, ज्वर और विष रोग को हरण करनेवाली है। यह बालकों को परम हितकारी है।

इसका स्वरस वमनकारक और कफ को निकालनेवाला है। इसके कल्क को गुदा में लगाने से दस्त होते हैं।

प्रयोग—१. आयुर्वेदीय निघंटु में इसका उल्लेख कहीं नहीं पाया जाता। हकीम लोग इसको क्षय रोग में देते हैं। कण्डु पर पत्ते को नमक के साथ लगाते हैं। आमवात पर तेल में मिला हुआ रस लगाया जाता है। मलाबार के किनारे इसकी जड़ विरेचन के लिये व्यवहार में आती है। बालकों के लिये पत्तों का रस वमनकारक है। लहसुन के साथ इसके पत्ते कृमिनाशक समझे जाते हैं। कृमि रोग पर—विशेषकर बालकों के कृमि पर—इसके सूखे पत्तों का चूर्ण अथवा पत्ते और लहसुन का काढ़ा दिया जाता है। २. बालक के आमाशय और छाती में जमे हुए गाढ़े कफ को निकालने के लिये इसके पत्ते और कोमल डालियों के स्वरस में थोड़ा नीम का तेल मिलाकर जीभ पर मलने से वमन के द्वारा कफ निकल जाता है। ३. कोष्ठबद्धता में इसका काढ़ा पीने से लाभ होता है। ४. खुजली पर पत्तों को पीस नमक मिलाकर मर्दन करने से लाभ होता है। ५. गठिया पर पत्तों के स्वरस में तेल मिलाकर लगाना चाहिए। ६. दस्त लाने के लिये जड़ का काढ़ा दिया जाता है। ७. कर्णशूल में पत्तों का काढ़ा दिया जाता है। ८. उपदंश की टंकियों पर पत्तों की पुल्टिस बाँधने से लाभ होता है। ९. सर्पदंश पर पत्तों को पीसकर लगाने से लाभ होता है। १०. उन्माद के प्रारंभ में २॥ तोले ताजे स्वरस में ३ रत्ती सेंधा नमक मिलाकर तीन दिन लगातार दोनों नथनों में टपकाने से और शीतल जल से स्नान कराने से सिर में जमे हुए कफादि मल निकल जाते हैं। ११. बालकों के अनाह में पत्तों को पीस गोली बनाकर गुदा में रखने से लाभ होता है। १२. कनखजूरे के दंश पर पत्तों को पीसकर लगाने से लाभ होता है। १३. गठिया पर पत्तों के रस में चूना मिलाकर लगाना हितकारी है। १४. दाद पर रस लगाने से फायदा होता है। १५. अफरे में इसको नमक सहित पीसकर पिलाने से फायदा होता है। १६. दुष्ट रसादि जमने से उत्पन्न हुई शिरपीड़ा में इसके रस का नास दिया जाता है। १७ घाव के कीड़े मारने को इसका चूर्ण घाव पर छिड़कना चाहिए। १८. श्वास-कास पर ७॥ तोला जड़ सहित पंचांग को २॥ पाव स्पिरिट में मिलाकर कागदार बोतल में ७ दिन तक रख (दिन में दो-तीन बार हिला देना चाहिए) मल छानकर, फिर २॥ पाव स्पिरिट मिलाकर बोतल में रख काग लगावे। इसमें से २०-३० बूँद मधु में मिलाकर दिन में २-३ बार सेवन करने से फायदा होता है। १९. खुजली और त्वचारोग में इसके पत्ते और चूने को पीसकर लेप करने से लाभ होता है। २०. वमन और विरेचन के लिये इसका स्वरस देना गुणकारी है।

मात्रा—बालक के लिये ३॥ माशे तक और युवा के लिये १। तोले तक।

अरिदलं–[द्रा०] हरिताल । हरताल ।

अरिपूरिम्–[सं०]
अरिभेद–[सं०]
अरिमः–[सं०] } दुर्गंधखैर । विट्खदिर । बबुरी ।

अरित मंजरी

पृ० ७४]

अरिमर्द्द–[सं०] कसौंदी। कासमर्द्द।
अरिमाशत–[सं०] खैर। खदिर वृक्ष।
अरिमेद–[सं०]
अरिमेदक–[सं०] } दुर्गंधखैर। विट्खदिर। बबुरी।
अरियवेप्प–[मला०] नीम। निंब वृक्ष।
अरियवेप्प अंती–[मला०] नीम की गुठली।
अरियवेप्पकाय–[मला०] नीम के फल।
अरियवेप्पटोली–[मला०] नीम की छाल।
अरियवेप्पपु–[मला०] नीम के फूल।
अरियवेप्पाशा–[मला०] नीम का गोंद।
अरियवेप्पुपन्ना–[मला०] नीम के फूल।
अरिया–[यू०] एक यूनानी बूटी जो बरसात में उत्पन्न होती है। यह हरी और स्वाद में कड़वी होती है। इसके फल चिनार के समान होते है।

गुण—पहले दर्जे में शीतल और तर, गरिष्ठ, कफ और वातकारी तथा विसंसज ज्वर को उत्पन्न करनेवाला है।

दर्पनाशक—सिरका।

अरिशिन–[खा०] हलदी। हरिद्रा।
अरिष्ट–[सं०] १. रीठा। अरिष्टक वृक्ष। २. रीठा-करंज। फेनिल। ३. लहसुन। रशोन। ४. नीम। निंब वृक्ष। ५. कौआ। काक पक्षी। ६. तक्र। छाछ। मठा। ७. मदिराभेद। एक प्रकार की मदिरा। औषधियों के काढ़े से जो मदिरा तैयार की जाती है, उसे "अरिष्ट" कहते हैं। इसके बनाने की क्रिया "आसव" के प्रकरण में लिखी गई है; अतएव "आसव" शब्द देखिए।

गुण—दीपन, हृदय को हितकारी, कसैला, पाचक, लघु, सारक, चरपरा तथा कफ, कोढ़, गुल्म, बवासीर, राजरोग, शोथ, संग्रहणी, पांडुरोग, प्लीहा, उदररोग, ज्वर, शूल, कृमि, क्लम और अफरे का नाश करनेवाला है। यह सब प्रकार की मदिराओं से अधिक गुणकारी होती है। जिन जिन औषधियों से यह बनता है, उनके उनके गुण इसमें रहते हैं।

अरिष्टक–[सं०] १. रीठा-करंज। फेनिल। २. नीम। निंब वृक्ष। ३. रीठा। फिंदक। अरिष्ट वृक्ष।
अरिष्टफल–[सं०] नीम। निंब।
अरिष्ट लक्षण–[सं०] मृत्यु-लक्षण।
अरिष्टा–[सं०] कुटकी। कटुकी।
अरिष्टारु–[सं०] रीठा-करंज। फेनिल।
अरिसिन–[मरा०] १. बनहलदी। वनहरिद्रा। जंगली हलदी। २. [क०] हलदी। हरिद्रा।
अरिसिनबर्गा–[खा०]
अरिसिनवुर्गा–[खा०] } कतीरा। कतीरा गोंद।
अरिसी–[ता०] धान। धान्य।
अरी–[मा०] १. अरवी। आलुकी। पेपची। २. [अ०] सरेस। सरेशम।
अरीउस्समक–[अ०] सरेश मछली। सरेशम माही (यूनानी ओषधि)।
अरीठो–[मा०] रीठा। अरिष्टक।
अरुंगम पिल्ल–[ता०] दूब। दूर्वा।
अरुंषि–[सं०] क्षुद्ररोग-विशेष। मनुष्यों के मस्तक में कफ, रुधिर और कृमि के कोप से जो बहुत सी अनेक मुखवाली फुंसियाँ हो जाती हैं और जिनमें से मवाद बहता है, उनको अरुंषि कहते हैं।

तद्रोगनाशक औषधियाँ और प्रयोग-संख्या—कुड़ा नं० १५। गौरीफनी नं० ३। झाऊ लाल नं० ३। नमक नं० ३। बनप्याज नं० १। भाँग नं० २०। सुहागा नं० २२।

अरु–[सं०] १. अमलतास। आरग्वध वृक्ष। घनबहेड़ा। २. खैर। रक्तखदिर। लाल खैर। ३. [मला०] झाऊ जंगली। बनझाउक। जंगली झाऊ। ४. [पं०] सप्तालुक। आड़ू। शफ्तालू।
अरुआ–[पश्चि०, मेवा०] सोनापाठा भेद। श्योनाक भेद।
अरुइ–[हिं०] अरवी। आलुकी। पेपची।
अरुई–[पं०] १. सप्तालुक। आड़ू। शफ्तालू। २. [हिं०] अरवी। घुइयाँ।
अरुकुल–[फा०] हलदी। हरिद्रा।
अरुगंपुल्ल–[ता०] दूर्वा। दूब।
अरुचि–[सं०] अरोचक रोग। वात, पित्त, कफ, शोक, भय, अत्यंत लोभ, क्रोध और अप्रिय भोजन तथा बुरे रूप के दर्शन और दुर्गंध से त्रिदोष कुपित होकर वातज, पित्तज, कफज, सन्निपातज और शोकज पाँच प्रकार के अरुचि रोग उत्पन्न होते हैं। मुख में अन्नादि पदार्थ के लिए हुए ग्रास का स्वाद कुछ भी न जान पड़े एवं भोजन का नाम लेते ही ग्लानि होकर चित्त खिन्न हो जाय और भोजन पर कुछ भी रुचि न रहे तो यह रोग माना जाता है।

इस रोग की नाशक औषधियाँ और उनकी प्रयोग-संख्या—अदरक नं० ५, १४। अनंतमूल नं० ३। अनार नं० ३२। इमली नं० ११। करंज नं० ३०। कैथ नं० १०। गिलोय नं० ४३। गिलोय का सत्त नं० १५। गुड़ नं० ५। घृत नं० ६। चनाखार नं० ६। जीरा सफेद नं० २०, २२। धनियाँ नं० ३६। धान नं० ४, १७। नासपाती नं० ७। नींबू नं० १३। पिंडखजूर नं० १२। पित्तपापड़ा भेद नं० ६। बिजौरा नींबू नं० १६। श्रीवल्ली नं० १। हरीतकी नं० ४।

अरुज–[सं०] १. अमलतास। आरग्वध। सियारलाठी। २. केसर। कुंकुम। जाफरान। ३. सिंदूर। संदुर।
अरुडोंड–[ते०] १. किंकिणी। व्याघ्रघंटा। बाघेटी। बगनहा। २. किंकिणी भेद। उलटकाँटा। हिंस।

अरुडोंद–[ते०] किंकिणी भेद । हिंस ।
अरुणं–[स०] १. अफीम । अहिफेन । २. कुमुद लाल । रक्तोत्पल । ३. निसोथ लाल । रक्तत्रिवृत्त । ४. केसर । कुंकुम । ५. सिंदूर । सेंदुर । ६. मानिक । चुन्नी ।
अरुण–[स०] १. तालमखाना भेद । कोकिलाक्ष भेद । २. अतीस । अतिविषा । ३. सोनापाठा । श्योनाक वृक्ष । अरलु । ४. मजीठ । मंजिष्ठा । ५. आक । अर्कवृक्ष । मदार । अकवन । ६. पुन्नाग । पुन्नाग पुष्पवृक्ष । पुलाक । ७. गुड़ । मीठा । ८. चीता । चित्रक । ९. ओंगा लाल । रक्तापामार्ग । लाल-चिचड़ा । १०. कनेर लाल । रक्त करवीर । लाल कनेर ।
अरुण अपामार्ग– [स०] ओंगा लाल । रक्तापामार्ग । लाल चिचड़ा ।
अरुणकपिश–[स०] किशमिश । लघु द्राक्षा ।
अरुणकमल–[स०] कमल लाल । रक्तपद्म । लाल कमल ।
अरुणचूड़–[स०] मुरगा । कुक्कुट ।
अरुणनाग–[स०] मुद्राशंख । पीतिका ।
अरुणनेत्र–[सं०] १. कबूतर । पारावत । परेवा । २. कोयल । कोकिल ।
अरुणपुष्पी–[स०] दुपहरिया । बंधूक ।
अरुणलोचन–[स०] १. कबूतर । पारावत । परेवा । २. कोयल । कोकिल ।
अरुणसर्प–[स०] सांप । तक्षक सर्प ।
अरुणसार–[स०] शिंगरफ । हिंगुल ।
अरुणा–[स०] १. अतीस । अतिविषा । २. मजीठ । मंजिष्ठा । ३. पुंडेरी । प्रपौंडरिक । पुंडरिया । ४. निसोथ लाल । रक्तत्रिवृत्त । ५. अनंतमूल काली । श्यामा लता । ६. इनारू । इंद्रवारुणी । ७. गुंजा । घुंघुची । करजनी । ८. पुनर्नवा । गदहपूरना । सांठ । ९. मुंडी । मुंडितिका । मुरली ।
अरुणात्मका–[स०] लाल मिर्च । कटुवीरा ।
अरुणाभ–[स०] लोहा इस्पात । सार लौह ।
अरुणार्क–[म०] आक लाल । रक्तार्क ।
अरुणोपल–[स०] मानिक । लाल । चुन्नी ।
अरुदांड–[ते०] किंकिणी भेद । हिंस ।
अरुन–[बं०] मजीठ । मंजिष्ठा ।
अरुनीलि–[ता०] हरफारेवरी । लवली ।
अरुर–[प०] अयार । अरवान ।
अरुश–[हिं०] अडूसा । वासक । बाकस ।
अरुषा–[स०] भुइंआंवला । भूम्यामलकी ।
अरुष्क–[स०] १. भिलावा । भल्लातक । २. अडूसा । आटरूष । बाकस ।
अरुष्कर–[सं०] भिलावां । भल्लातक ।

अरुस–[हि०]
अरुसा–[हिं०] } अडूसा । आटरूष । वासक । बाकस ।
अरुस्रा–[म०] भुइँआंवला । भूम्यामलकी । पाताल आंवला ।
अरुहा–[म०] भुइँआंवला । भूम्यामलकी ।
अरूसा–[हिं०] अडूसा । वासक । बाकस ।
अरगीबनु–[कोल०]
अरेंगी बोंग–[कोल०] } सोनापाठा । श्योनाक वृक्ष । अरलू ।
अरे–[ते०] कचनार सफेद । श्वेत कांचनाल । सफेद कचनार ।
अरेक–[ता०]
अरेका झार–[द०] } कचनार सफेद । श्वेत कांचनाल वृक्ष । श्वेत कांचन । सफेद कचनार ।
अरेभ आहन–[फा०] मंडूर । लोहकिट्ट ।
अरेमरम–[ता०] कचनार सफेद । श्वेत कांचन ।
अरोकदंत–[सं०] कृष्णदंत । मैले दांत ।
अरोचक–[सं०] अरुचि । अन्न मे अनिच्छा ।
अर्क–[स०] १. आक । मदार । २. तांबा । ताम्र धातु । ३. बिल्लौर । स्फटिक मणि । ४. आदित्यपत्र । हुरहुर का भेद । ५. [अ०] गुलाब । शतपत्री । सेवती ।
अर्ककांता–[स०] हुरहुर । आदित्यभक्ता ।
अर्ककेवड़ा–[यू०] केवड़े का अर्क ।
अर्कक्षार–[स०] १. आक का खार । अर्कलवण । अर्कसुधा । २. शोरा । सूर्यक्षार ।
अर्कक्षीर–[सं०] १. आक का दूध । अर्कदुग्ध । २. आक का गोंद । अर्कनिर्य्यास ।
अर्कगंधिका–[स०] दूधविदारी । क्षीरविदारी । बिदारीकंद ।
अर्क गुलाब–[यू०] गुलाब का अर्क । गुलाब-जल ।
अर्कचंदन–[स०] रक्त चंदन । लाल चंदन ।
अर्कच्छन्न–[स०] आक की जड़ । अर्क मूल ।
अर्क जुलाब–[फा०] गुलाब का अर्क । गुलाब जल ।
अर्कदल–[स०] १. आदित्यपत्र । हुरहुर का भेद । २. आक । अर्क । मदार ।
अर्कनाम–[सं०]
अर्कनामा–[स०] } आक लाल । रक्तार्क । अकवन ।
अर्कपत्र–[स०] १. आदित्यपत्र । हुरहुरभेद । २. आक । अर्क वृक्ष । मदार ।
अर्कपत्रा–[सं०]
अर्कपत्रिका–[स०]
अर्कपत्री–[स०] } इसरौल । ईश्वरमूल ।
अर्कपर्ण–[सं०] आक लाल । रक्तार्क ।
अर्कपर्णिका–[स०]
अर्कपर्णी–[स०] } मषवन । माषपर्णी । बनउड़दी । मापानी ।
अर्कपाद–[स०] १. आतशी शीशा । सूर्य्यकांत । २. नीम । निंब वृक्ष ।

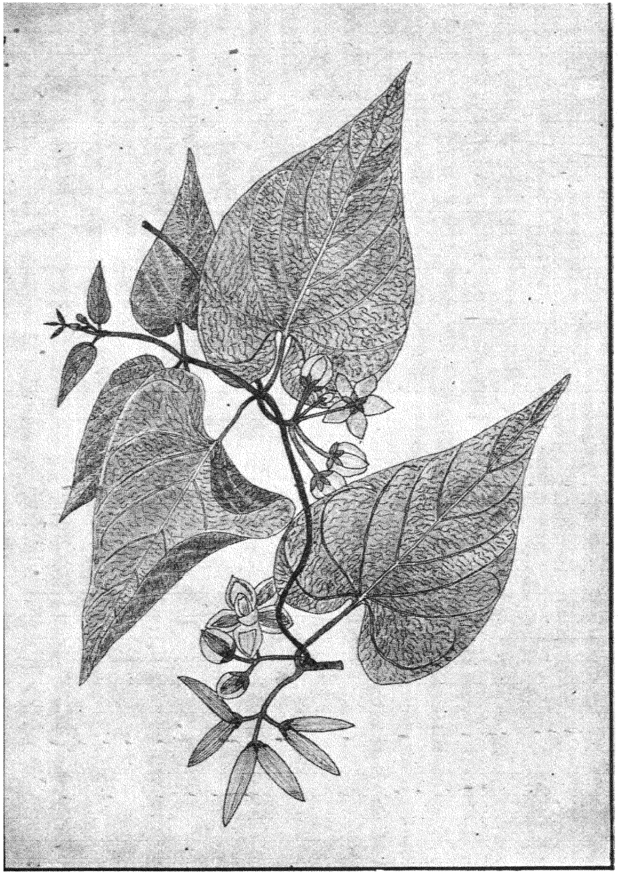

अर्कपुष्पी नं० १

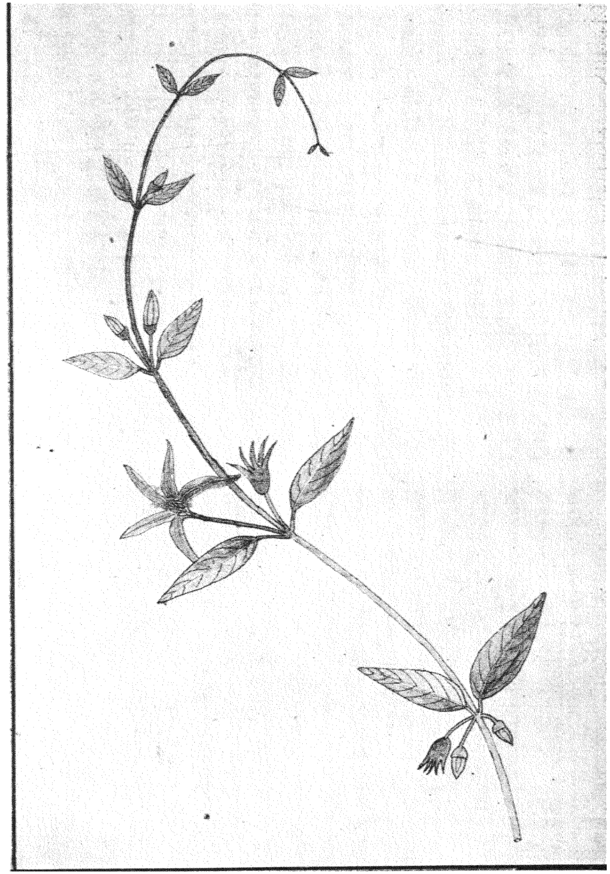

अर्कपुष्पी नं० २

अर्कपादप–[सं०] १. नीम। निंब वृक्ष। २. आक। अर्कवृक्ष। मदार।

अर्कपुष्प–[सं०] अर्कपुष्पी। अर्कहुली।

अर्कपुष्पिका–[सं०] १. अर्कपुष्पी। अर्कहुली। २. ब्रह्मसोंचली। हुरहुर भेद।

अर्कपुष्पी–[सं०] अर्कपुष्पिका। पयस्या। सूर्य्यवल्ली। कुटुंबिनी आदि। [हिं०] अंधाहुली। औंधाहुली। अर्कहुली। दधियार। हधियार। क्षीरवृक्ष। अर्कपुष्पी नं० १। अर्कपुष्पी नं० २। [बं०] क्षीरुई। श्वेत हड़हुड़िया। [मरा०] सूर्य्यफूलवल्ली। सिरडोडी। [गु०] खरखोर। सुरजमुखी। [ता०] पालेकिरई। [ते०] पलकुरा। पालगुरुगु। हसतरकुल। [मु०] तुलतुली। सिदोरी। दुदुरली। [कोल०] अपंग। [संथा०] अपंग। मेरोउरक। [यू०] आकाहुली। [लै०] Holostemma Rheedii. Syn Aspias Annularis. [अं०] Chome Pentaphylla.

हिमालय पहाड़ के गरम प्रांतों में सिरमौर से सिकम तक और दक्खन सरकार से दक्खन की ओर कनारा तक पाई जाती है।

यूनानवाले कहते हैं कि आकाहुली लता जाति की एक बूटी है जिसका रंग ललाई लिए हरा होता है। इसके फूल आक के फूल के समान होते हैं।

शालिग्राम निघण्टु-भूषण में इसको जीवंती का भेद माना है। इसकी लता पान की बेल के समान, पत्ते गिलोय के पत्तों के समान परंतु छोटे छोटे और फूल हुरहुर के फूल के समान गोल होते हैं।

अर्कपुष्पी नं० १ लता जाति की वनौषधि मोटी डंडीवाली होती है। इसकी शाखा-प्रशाखाएँ बहुत होती हैं, जो सहारा पाकर वृक्ष की डालियों से लिपटती हुई बढ़ती है। पत्ते ३ से ५ इंच तक लंबे, बीच में चौड़े, पतले, नुकीले एवं पान के पत्तों के समान होते हैं। फूल लाल अथवा सफेद आते हैं और फलियाँ ५–६ इंच तक लंबी होती हैं।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—मधुर, ग्राही, रसायन, शीतल तथा घाव, पित्त, कफ, रुधिर-विकार, कृमि, कंडु और कोढ़ का नाश करनेवाली है।

इसका अर्क कृमि, कफ, प्रमेह और पित्तरोग-नाशक है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—पहले दर्जे में गरम और दूसरे में रूक्ष, शुक्रमेह को गुणकारी तथा कृमिरोग, कफ और पित्त-विकार का नाश करनेवाली है। स्नायु और संधियों को हानिकारक है।

दर्पनाशक—मधु।

प्रतिनिधि—लोणा का शाक।

मात्रा—१ से २ तोले तक।

प्रयोग—१. कोंकण प्रांत में सूजाक पर इसकी जड़ का व्यवहार किया जाता है। २. आँख आने पर इसको पीसकर आँख के ऊपर लगाते हैं। ३. बहुमूत्र पर जड़ को पीस कच्चे दूध में मिलाकर देते हैं। ४. धातुक्षीणता में इसकी सूखी जड़ के चूर्ण में समभाग सफेद सेमर की जड़ का चूर्ण मिलाकर ६ माशे की मात्रा से दूध और मिस्री के साथ दिन में दो बार इसका सेवन हितकर है। ५. संथालों में इसका काढ़ा खाँसी पर दिया जाता है।

अर्कपुष्पी–[सं०] १. क्षीरकाकोली। दूधकाउली। २. सूरजमुखी। गुल आफताब-परस्त। ३. अपराजिता। विष्णुक्रांता। ४ अर्कपुष्पी नं० २। [पं०] अर्कपुष्पी। बनबेरी। अमरबेल। [मु०] सिंगरोता। [गु०] शिगरोटी। [लै०] Pentatropis Spiralis.

यह पंजाब, सिंध और पूरब की ओर यमुना नदी तक पाई जाती है।

इसकी लता छोटी होती है। पत्ते पौन से १॥ इंच तक लंबे और चौड़ाई में अनियमित होते हैं। फूल किंचित् हरे और फलियाँ दो इंच लंबी होती हैं। बीज छोटे छोटे चिपटे होते हैं।

प्रयोग—१. पंजाब में इसके फूल औषधि-प्रयोग में अधिक आते हैं। २. बंबई में इसकी सूखी जड़ का काढ़ा संकोचक समझा जाता है।

अर्कप्रिया–[सं०] १. अड़हुल। जपापुष्प वृक्ष। गुड़हल। २. हुरहुर। आदित्यभक्ता।

अर्कभक्ता–[सं०] १. ब्राह्मी। बरंभी। २. हुरहुर। आदित्यभक्ता।

अर्कमुद्ग–[मु०] बनमूँग। मुद्गपर्णी।

अर्कमूल–[कच्छ०, गु०] } ईसरौल। ईश्वरमूल।
अर्कमूला–[सं०] }

अर्कलवंग–[सं०, हिं०] आक के फूलों के अंदर का लौंग के आकार का द्रव्य।

अर्कलवण–[सं०] आक का खार। अर्कक्षार।

अर्कवल्लभ–[सं०] दुपहरिया। बंधूक पुष्प वृक्ष। गेजुनिया।

अर्कवल्ली–[सं०] हुरहुर। आदित्यभक्ता।

अर्कवेद–[सं०] } तालीशपत्र। तालीसपात।
अर्कवेध–[सं०] }

अर्कसुता–[सं०] अपराजिता नीली। कृष्णापराजिता। नीली कोयल।

अर्कसुधा–[सं०] आक का खार। अर्कक्षार।

अर्कहिता–[सं०] हुरहुर। आदित्यभक्ता।

अर्कहुली–[हिं०] १. अर्कपुष्पी। दधियार। २. [पं०] ब्रह्मसोंचली। सुवर्च्चला।

अर्काश्मा–[सं०] १. बिल्लौर। सूर्य्यकांत मणि। २. आतशी शीशा। सूर्य्यकांत।

अर्काह्व–[सं०] १. आतशी शीशा। सूर्यकांत। २. तालीशपत्र। तालीसपात। ३. आक। अर्कवृक्ष। मदार।

अर्की–[सं०] मोर। मयूर पक्षी।

अर्कुल काफूर–[अ०] गंधपलाशी। कचूरभेद। छोटा कचूर।

अर्कुस्सयागीन–[अ०] मजीठ। मंजिष्ठा।

अर्को–[सं०] तांबे की भस्म। ताम्रभस्म।

अर्कोत्तमा–[सं०] बर्बरी। बबुई तुलसी।

अर्कोपल–[सं०] आतशी शीशा। सूर्यकांत।

अर्गट–[सं०] कटसरैया नीली। अर्तगाल। नीले फूल की कटसरैया।

अर्गति–[ता०] अगस्त। अगस्त्य वृक्ष।

अर्गदा–[सं०] कंटकारी सफेद। चंद्रहासा। सफेदफूल की रेंगनी।

अर्गल–[सं०] मांस।

अर्गवाँ–[यू०] अर्गवाँ। [फा०] अरगवाँ। [अ०] अरजवाँ। अर्जवाँ।

यह एक यूनानी औषधि का वृक्ष है। इसका फूल अत्यंत लाल होता है। स्वाद कडुवा और कुछ कसैला होता है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—समान, गरम और रूक्ष, पिच्छिल मल और पक्वाशय की शीतलता का नाशक, वृक्क को लाभकारी और श्वास-यंत्र को स्वच्छ करनेवाली, मुख के रुधिर-स्राव पर इसकी भस्म का सेवन करना गुणकारी है। इसका बीज नेत्र की औषधियों में चाक्सू की जगह व्यवहार किया जाता है। इसकी जड़ वमनकारक है।

दर्पनाशक–उन्नाब के पत्ते।

प्रतिनिधि—चंदन और गुलाब के फूल।

अर्घ–[सं०] १. मधु। शहद। मध। २. घोड़ा। घोटक। अश्व।

अर्घ्य–[सं०] मधु। शहद। मध।

अर्घ्याट–[सं०]
अर्घ्यात–[सं०]
अर्घ्याल–[सं०] } उटंगन। उच्चटा। उकड़ा। शुकला।

अर्घ्याह्–[सं०] मुचकंद। मुचकुंद पुष्प वृक्ष। मेकचंद।

अर्जक–[सं०] १. बर्बरी। बनतुलसी। २. बर्बरी नं० २। ३. तुलसी। सुरसा।

अर्जकर्ज–[सं०] बिजैसार। असन वृक्ष।

अर्जन–[फा०] चेना। दखन।

अर्जवाँ–[अ०] अर्गवाँ। अरगवाँ।

अर्जुन–[सं०, हि०, मरा०] १. अर्जुन। [सं०] ककुभ। नदीसर्ज्ज। इंद्रद्रु। वीर वृक्ष। वीरधवल इत्यादि। [हि०] कोह। कोहा। कोह। कोहा। अंजन। काहु। [बं०] अर्जुन। [मरा०] अर्जुन सादड़ा। पांढरा आइन। सारढोल। सामदत्त। सानमडर। अर्जुन। अंजन जमला। [गु०] अर्जुन साजड़ा। कड़ायो। साडडो। अर्जुन साडडो। घोलो साजड़। [पं०] कौ। कोह। [ते०] यर्रमद्दि। वेरमद्दी। [ता०] वेल्लमर्दे। वेल्लइ मरुद मरम। [तै०] मद्दिचेट्टु। [क०] कंपुमते। तारमेति। तोरेमत्ति। सारटोल। [को०] श्वेतवर्ण वृक्ष। [खा०] मड्डी। तोरमत्ती। तोरमट्टी। होलेमत्ति। विल्लीमती। [लै०] Terminalia Arjuna. Syn: Pentaptera Arjuna.

यह हिमालय पहाड़ के आस-पास, पश्चिमोत्तर प्रदेश, बंगाल, बिहार तथा दक्खिन में बहुत पाया जाता है। छोटा नागपुर और राजपूताने आदि अनेक प्रांतों में भी देखने में आता है।

इसका वृक्ष बड़ा ६० फुट तक ऊँचा तथा समय पाकर गिरनेवाला होता है। यह ऊँचाई में जितना अधिक देख पड़ता है, उसके अनुसार इसका स्तंभ मोटा नहीं होता। इसकी छाल तिहाई इंच मोटी, चिकनी, लालिमायुक्त खाकी रंग की होती है। लकड़ी लाली लिए सफेद और सार भाग दृढ़, भूरे रंग का होता है। पत्ते लगभग समवर्ती, जामुन के पत्तों के समान चिकने, ३ से ६ इंच तक लंबे होते हैं। फीके पीले रंग के फूलों की मंजरी लगती है। फल कमरख के समान ५–७ किनारेवाले होते हैं। वसंत ऋतु में इसके फूल लगते हैं और शीतकाल में फल पकते हैं।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—शीतवीर्य, हृदयग्राही, कसैला, गरम, मधुर, कांतिजनक, बलकारी, हलका, व्रणशोधक तथा घाव, क्षय, विष, रुधिर-विकार, मेदरोग, प्रमेह, पसीना, श्वास, भस्मक रोग, कफ और पित्त का नाशक है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—तीसरे दर्जे में गरम और रूक्ष, शुक्रमेह और पित्त को लाभकारी, कफविकार-नाशक और इसकी छाल का चूर्ण ओजप्रद है। चोट पर इसको लगाना और पिलाना गुणकारी है। अफरा उत्पन्न करनेवाला और गरम प्रकृतिवाले को हानिकर है।

प्रयोग—१. इसके वृक्ष से एक प्रकार का साफ, सुनहरा, भूरा और पारदर्शक गोंद निकलता है जो खाने के काम में आता है। इसकी छाल से खाकी रंग निकलता है और चमड़ा सिझाया जाता है। इसकी लकड़ी की राख रंग के काम में आती है। अर्जुन "डिजिटिलिस" नामक अँगरेजी औषध के समान कार्य करता है। परंतु हृदय पर इसका कितना असर होता है, यह बात अभी तक निश्चित नहीं हो सकी है। साधारणतः इससे कैशिक नाड़ियाँ संकुचित होती हैं और हृदय में रुधिर का संचालन तीव्रता से होने लगता है। दुर्बल, मंद और क्षीण नाड़ी बलवान् होकर तीव्रता से चलने लगती है। इसकी छाल बलकारी, संकोचक, शीतल तथा हृद्रोग, ज्वर-पित्त-विकार, विष, क्षत, घाव और पतनाघात में लाभकारी है। अस्थिभग्न और पतनाघात में छाल का चूर्ण दूध के साथ सेवन किया जाता है। छाल के काढ़े से घाव आदि धोने से लाभ होता है। ताजे पत्ते का रस कर्णपीड़ा में हित-

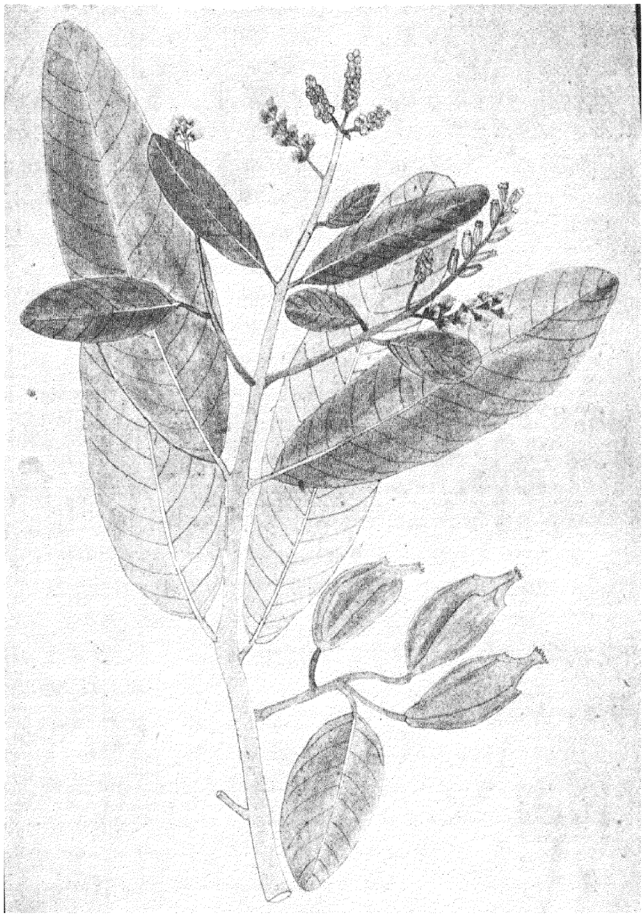

अर्जुन

कारी है। २. हृदय रोग में छाल को केवल दूध में औटकर पिलाने से अथवा इसको पानी, दूध और गुड़ के साथ औटाकर पिलाने से लाभ होता है। ३. टूटी हड्डी (भग्नरोग) जोड़ने के लिये जड़ के चूर्ण की फंकी देते हैं। ४. चोट पर जमे हुए रुधिर को दूर करने के लिये इसकी जड़ के चूर्ण का दूध के साथ, सेवन कराते हैं। ५. फोड़े और घाव को इसके काढ़े से धोना गुणकारी है। ६. ज्वर में इसके काढ़े का सेवन लाभदायक है। ७. मुखपाक में तिल के तेल में इसका चूर्ण मिलाकर कुल्ले करने से फायदा होता है। ८ कर्णशूल में पत्तों का स्वरस कान में डालना हितकारी है। ९ विषैले जीवों के दंश पर इसकी छाल पीसकर लेप करना चाहिए। १०. रक्तातिसार मे इसका फांट लाभकारी है। ११ चोट की सूजन पर इसकी छाल को पीस, गरम कर लेप करने से सूजन का नाश होता है। १२. टूटी हुई हड्डी पर पीसी हुई छाल गरम कर लेप करने से फायदा होता है। १३. पेट के यंत्रों के बहाव की रुकावट में इसका फल खाना गुणकारी है। १४. मूत्रवेग रोकने से उत्पन्न हुए उदावर्त्त में छाल का काढ़ा पीना चाहिए। १५. पित्त-विकार पर इसके चूर्ण को जल के साथ सेवन करना लाभदायक है। १६. मुख की छाया पर इसकी अंतरछाल को मधु के साथ पीसकर लेप करने से फायदा होता है। १७. मूत्राघात में छाल का काढ़ा लाभदायक है। १८. हृदय रोग में छाल के द्वारा सिद्ध किया हुआ घृत अथवा अंतरछाल का चूर्ण घृत या मक्खन के साथ सेवन करना हितकारी है। १९. रक्तपित्त में अंतरछाल का चूर्ण दूध के साथ सेवन करना चाहिए। २०. जीर्णज्वर में इसके चूर्ण को गुड़ के शर्बत के साथ सेवन करने से लाभ होता है। २१ हृदयरोग पर इसके चूर्ण को बेल की जड़ के काढ़े के साथ सेवन करना चाहिए। सके चूर्ण में मुलेठी का चूर्ण मिलाकर दूध के साथ सेवन करना गुणकारी है। गेहूँ और इसकी अंतरछाल के चूर्ण को तेल, गुड़ और घृत में पकाकर दूध के साथ सेवन करने से लाभ होता है। गेहूँ और अंतरछाल का चूर्ण, बकरी के दूध और गाय के घी में पकाकर मिस्री और मधु के साथ सेवन करने से फायदा होता है। २२. वातज रोग में इसकी और गँगेरन की छाल के चूर्ण को दूध के साथ सेवन करना चाहिए।

[हिं०] २. साजड़। अर्जुन भेद। ३. तिनिश नं० १। ४ [फा०] चेना। दुखन।

अर्जुनगाछ–[बँ०] अर्जुन। ककुभ वृक्ष।

अर्जुनत्वक–[सं०] अर्जुन की छाल। अर्जुनवल्कल।

अर्जुननामाख्य–[सं०] अर्जुन। कोह वृक्ष।

अर्जुन साजड़ा–[गु०]
अर्जुन साडडो–[गु०] } अर्जुन। ककुभ वृक्ष। कोह।

अर्जुन साढ़ड़ा–[म०]
अर्जुन सादड़ा–[म०]
अर्जुनाख्य–[सं०] } अर्जुन। ककुभ वृक्ष। कोह।

अर्जुनी–[सं०] गो। गवि। गाय।

अर्जुनोपम–[सं०] १. सागोन। शाल वृक्ष। २. साखू। सखुआ।

अर्ण–[सं०] १. सागोन। शाल वृक्ष। सागवान। २. जल। पानी।

अर्णभव–[सं०] शंख। संख।

अर्णव–[सं०] १. रत्न। मणि। २. समुद्र। सागर।

अर्णवज–[सं०] समुद्रफेन। अब्धिकफ।

अर्णवज मल–[सं०]
अर्णवफेन–[सं०]
अर्णवमल–[सं०] } समुद्रफेन। अब्धिकफ। कफेदरिया।

अर्णवोद्भव–[सं०] अंबर। अग्निजार।

अर्णस–[सं०] जल। पानी।

अर्णोद–[सं०] मोथा। मुस्तक।

अर्णोभव–[सं०] शंख। शङ्ख।

अर्तगल–[सं०] कटसरैया नीली। नील झिंटी। नीले फूल की कटसरैया।

अर्तगाँ–[यू०] एक यूनानी औषधि जो इसी नाम से प्रसिद्ध है। यह पत्थर की जाति की लाल और पीले रंग की होती है तथा स्वाद में फीकी होती है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—पहले दर्जे में ठंडा और रूक्ष, व्रण को भरनेवाला, अवयवों के बाह्य शोथ का नाश करनेवाला, व्रण को स्वच्छ करनेवाला तथा वृक्क, पथरी और शर्करा को दूर करनेवाला है।

अर्थचंपिका–[सं०] काकड़ासिंगी। कर्कटशृंगी।

अर्थप्रसादिनी–[सं०] धामिन। धन्वंग।

अर्थसाधक–[सं०] पितवंजिया। पुत्रजीव। जियापोता।

अर्थसाधन–[सं०] १. पितवंजिया। पुत्रजीव वृक्ष। २. रीठा करंज। फेनिल।

अर्थसिद्ध–[सं०] १. पितवंजिया। पुत्रजीव वृक्ष। २. निर्गुंडी। सँभालू। सेंधुआर। मेवड़ी।

अर्थसिद्धक–[सं०] १. पितवंजिया। पुत्रजीव वृक्ष। २. निर्गुंडी। सँभालू। मेवड़ी।

अर्थ्य–[सं०] शिलाजीत। शिलाजतु।

अर्द्रका–[सं०] पेऊ। बन आदी।

अर्दनंद–[हिं०, सिं०, द०] किंकिणीभेद। हिंस। उलटकाँटा।

अर्दयून–[अ०] सूरजमुखी। (फूल)

अर्दित–[सं०] वातरोग-विशेष। मुख का टेढ़ा होना। लकवा। [अं०] Facial Paralysis.

अत्यंत ऊँचे स्वर से बोलने से, अत्यंत कठिन पदार्थों के भक्षण करने से, बहुत जोर से हँसने से, बहुत जँभाई लेने से, बोझ ढोने से और ऊँचे-नीचे स्थान में सोने से कुपित हुआ वायु मस्तक, नाक, होंठ, ठोढ़ी, ललाट और नेत्रों की संधियों में प्राप्त होकर एक ओर के मुख को टेढ़ा कर अर्दित रोग उत्पन्न करता है। इसमें आधा मुख टेढ़ा हो जाता है, गरदन नहीं मुड़ती, सिर हिलने लगता है, बोला नहीं जाता, नेत्रादि बिगड़ जाते हैं। जिस अंग की ओर टेढ़ा होता है, उसी ओर की गरदन टेढ़ी और दाँतों में दर्द होता है।

इस रोग के होने के पहले रोम खड़े होते हैं, देह काँपता है, नेत्र मलयुक्त हो जाते हैं, वायु ऊपर को गमन करता है, त्वचा शून्य हो जाती है, सूई चुभने की सी पीड़ा होती है तथा मन्या नाड़ी और ठोढ़ी जकड़ जाती है।

तद्रोगनाशक औषधि और प्रयोग-संख्या—अकरकरा नं० ४। अखरोट का तेल नं० ४। अमलतास नं० १५। उड़द नं० ४। कौंछ नं० १०। जायफल नं० २३। नकछिकनी नं० ८। निर्गुंडी नं० ४। फरफयून नं० १। बच नं० ३२। बरियार नं० १५, १८। बीरबहूटी नं० ७। रीठा नं० ३३। लहसुन नं० २१, २७। शिलाजीत नं० ३६।

अर्द्धकंटिका–[स०] सतावर बड़ी। महाशतावरी। बड़ी सतावर।

अर्द्धचंद्र–[सं०] मोर के पर का चाँद। मयूरपुच्छ।

अर्द्धचंद्रिका–[सं०] १ कनफोड़ा लता। कर्णस्फोटा। २. निसोथ काली। कृष्ण त्रिवृत्त। काली निशोथ।

अर्द्धतिक्त–[स०] १. नेपाली चिरायता। नेपाल किरात। २ नेपाली नीम। नेपाल निंब।

अर्द्धपादा–[सं०] भुइँ आँवला। भूम्यामलकी। पाताल आँवला।

अर्द्धपारावत–[सं०] १ बनमुरगा। वनकुक्कुट। २. तीतर। तित्तिर पक्षी।

अर्द्धपुष्पा–[सं०] सहदेई। महाबला।

अर्द्धवीरत्ता–[सं०] दूब नीली। नीलदूर्वा।

अर्द्धसह–[सं०] उल्लू। पेचक।

अर्द्धांगवात–[सं०] पक्षाघात। पक्षवद्ध।

अर्धावभेदक–[सं०] आधासीसी। अधकपारी।

अर्धी सुपारी–[मरा०] सागूदाना। साबूदाना।

अर्नेबुलवर्री–[अ०] खरगोश। खरहा।

अर्वेद–[ता०] सिताब भेद। सर्पदंष्ट्रा भेद।

अर्वुद–[स०] अदीठ। रिसौली। रसौली। [अ०] सलाआ। तालू में अथवा आँख की पलक के नीचे किंचित् लाल रंग की गाँठ का उत्पन्न होना और पीड़ा करना। थोड़ा अन्न और अधिक मांस भक्षण करने से, त्रिदोष दूषित होकर, रुधिर मांस को बिगाड़, सर्व शरीर अथवा किसी एक विशेष भाग में एक बड़ी, गोल, स्थिर, अल्पपीड़ायुक्त, दृढ़, बलवाली, विलंब से बढ़ने और पकनेवाली ऊँची गाँठ उत्पन्न करते हैं। यह रोग "रक्तार्बुद" और "मांसार्बुद" दो प्रकार का होता है।

तद्रोगनाशक औषधि और प्रयोग-संख्या—कुकुरभँगरा नं० २५। पीपल नं० ३८। पोई नं० ८। बड़ नं० ६। बालंगा नं० ४। शंख नं० ४।

अर्भ–[स०] १. कुश। कुशा। २. दाभ। दर्भ। ३. सुगंधबाला। नेत्रबाला।

अर्भक–[सं०] १. कुश। कुशा। २. दाभ। दर्भ। ३. सुगंधबाला। नेत्रबाला।

अर्भा–[सं०] गूगल। गुग्गुल। गुगुल।

अर्म्म–[सं०] नेत्ररोग भेद। आँख के सफेद भाग में मांस उत्पन्न होना।

अर्म्मण–[स०] एक द्रोण। ३२ सेर।

अर्म्मन–[स०] नेत्ररोग भेद। अर्म्म रोग।

अर्म्मसुरी–[गोंड०] विकंकत। कंटाई। बंज।

अर्य्यमा–[सं०]
अर्य्यमान्–[सं०] } आक। अर्क वृक्ष। मदार।

अर्रचिरतीली–[ते०] रक्तवल्ली। रक्तपित्त।

अर्रनेल्लि–[क०] भुइँ आँवला। भूम्यामलकी।

अर्वेद–[ता०] सिताब भेद। सर्पदंष्ट्रा भेद।

अर्व्वगंधर्व–[सं०] घोड़ा। घोटक।

अर्व्वटी–[सं०] घोड़ी। घोटकी।

अर्व्वण–[सं०]
अर्व्वा–[सं०]
अर्व्वान्–[सं०] } घोड़ा। अश्व। घोटक।

अर्व्वुद–[स०] अर्बुद। रसौली।

अर्व्वुदाकार–[स०] लिसोढ़ा। बहुवार वृक्ष।

अर्व्वुदाद्रिज–[सं०] मेढ़ासिंगी। मेषशृंगी।

अर्व्वूर–[सं०] तरवड़। आहुल्य।

अर्श–[सं०] अर्श रोग। [हिं०] बवासीर। बावसीर। [अं०] Piles.

वात, पित्त, कफोत्पादक, उष्ण, चिकनी और मीठी वस्तुओं के अधिक खाने से तथा त्रिदोषकारी मिथ्या आहार-विहारादि करने से त्रिदोष कुपित होकर त्वक्, मांस और मेद को बिगाड़ गुदा में अनेक प्रकार के मांसांकुर (मस्से) उत्पन्न करते हैं। इसी को अर्श कहते हैं। यह गुदा की तीन वलियों के अंदर उत्पन्न होता है। वातज, पित्तज, कफज, त्रिदोषज, रक्तज और सहज (शरीर के साथ ही उत्पन्न) इन भेदों से यह ६ प्रकार का होता है।

जब यह रोग उत्पन्न होने को होता है, तब अन्न का परिपाक ठीक तरह से नहीं होता, अन्न कोख में रह जाता है, देह में दुर्बलता, कोख में अफरा, अग्निमांद्य, अधिक डकार, जाँघ में

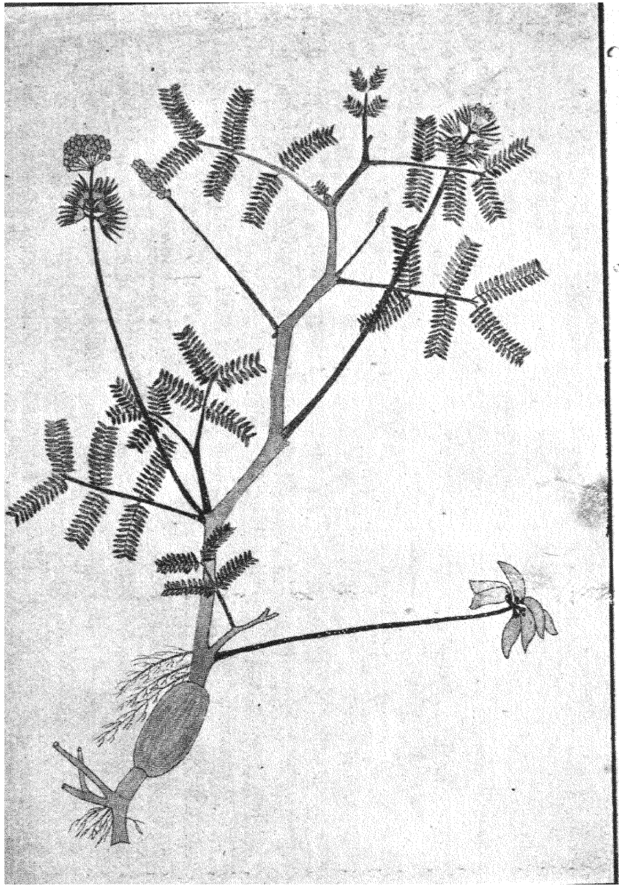

अलंबुषा

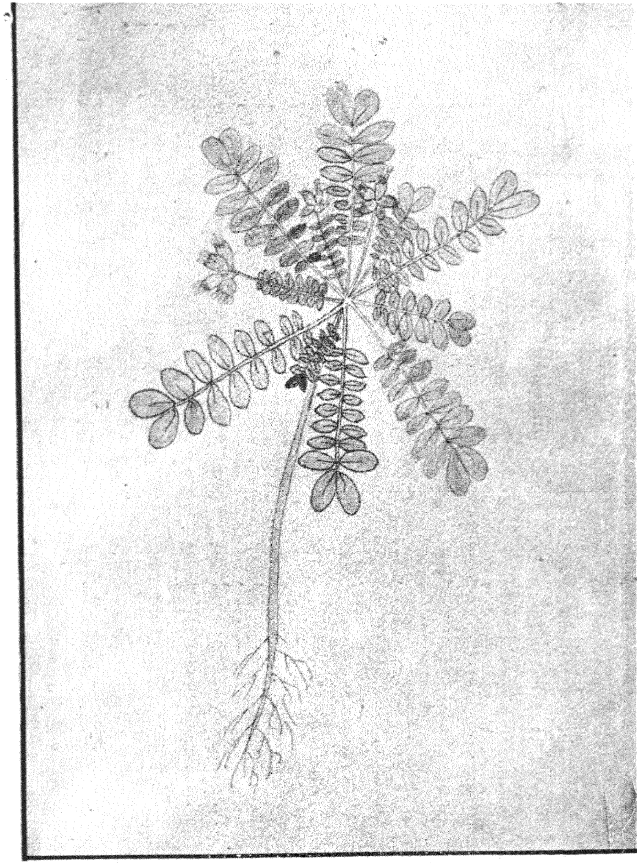

अलंबुषा भेद

पीड़ा, दस्त की कमी, संग्रहणी और पांडु रोग की भ्रांति तथा उदर रोग की शंका इत्यादि होती है।

इस रोग की नाशक औषधियाँ और उनकी प्रयोग-संख्या—अखरोट का तेल नं० ३। अनार नं० २७। अबरक नं० १६, २०। अरनी नं० १२। आम नं० २२, ३१, ३२। आँवला नं० २०। इनारू नं० २८। एरंड नं० ३३। ओंगा नं० ४१। अड़हुल नं० १८। कंघी नं० ४, १०। कड़वी तूँबी नं० ३। कनेर सफेद नं० १३। करंज नं० २७। करंड नं० २। करिंदा नं० २। करेला नं० २६। कुसुम नं० २। कायफल नं० २२। काला जीरा नं० ४। किंकिणी नं० ३। कुकरौंदा नं० ६, १२, २४, ३०। कुड़ा नं० ४, ११। कहरुबा नं० ३। खपरिया नं० २। खैरसार नं० ३४, ३५। गिलोय का सत्त नं० १६। गुंजा नं० १२। गुड़ नं० १३। गेंडा नं० २। गेंदा नं० ४। गोभी नं० ८। घीकुवार नं० ३७। घीकुवार लाल नं० १। चमगादड़ नं० १। चाँदी नं० १३। चीता नं० ११, १७। चीता लाल नं० १५। छुहारा नं० ३। जमींकंद नं० ३, ६। जलकुंभी नं० ३। जलनीम नं० १३। जवासा नं० ३, १३। जामुन नं० ३५। झिंगनी नं० ११। ढाक नं० २३। ढाक के पत्ते नं० ७। ढेरा नं० २। तक्र नं० १४। तिल नं० १६। तीसी का तेल नं० ६। तुलसी नं० ३४। थूहर नं० १५। दही नं० १६। दाख नं० ४। दूध नं० २। देवदाली नं० ६, १२, १७। धतूरा नं० ७। धतूरा काला नं० ३८। धतूरा सफेद नं० ५। नीम नं० १४, १७, ८३। नीम के फल नं० २, ५, ७, ८। नील नं० ११। पपीता नं० २। प्याज नं० ५८। पीपल (वृक्ष) नं० २३। पीपल नं० १३, २५। पीपलु नं० ७। पुनर्नवा सफेद नं० १८, २५। बकायन नं० २२, २८। बच नं० १५। बथुआ नं० ४। बरोह नं० २। बर्बरी नं० १७। बायविडंग भेद नं० २। बीरबहूटी नं० ६। बेल नं० ३४। भाँग नं० ३, ७। मँगरेला नं० १६। मिर्च नं० ३। माजूफल नं० ३। मुंडी नं० ११, १८, २६, ४८। मुचकुंद नं० ४। मुसब्बर नं० २३। मूँग नं० १०। मूली नं० ७। मोठ नं० ६। रसौत नं० ७। राल नं० ११। लजालू नं० ५। लटूकरी नं० ३। लताकरंज नं० ३०। लताकस्तूरी भेद नं० ३। शिलाजीत नं० ४१। सत्यानाशी नं० २५। समुद्रफल नं० २१, ४८। सहिंजन नं० ३६। साँप की केंचली नं० ३, ७, ६। सिरस के बीज नं० ४। सोंठ नं० २२। सोनापाठा नं० १२। हरताल नं० ५। हरीतकी नं० १५, १६। हलदी नं० १२। हारसिंगार नं० १६। हुरहुर नं० ६।

अर्शघ्न–[सं०] जमींकंद। सूरन। ओल।

अर्शःसूदन–[सं०] जमींकंद। सूरन।

अर्शोघ्न–[सं०] १. जमींकंद। ओल। सूरन। २. भिलावाँ। भल्लातक। ३. सज्जी। स्वर्जिक्षार। सज्जी खार। ४. तेजबल। तेजवती। ५. सरसों सफेद। श्वेत सर्षप।

अर्शोघ्नवल्कला–[सं०] तेजबल। तेजोवती।

अर्शोघ्नी–[सं०] मुसली। तालमूली।

अर्शोज–[सं०] भगंदर रोग।

अर्शोहित–[सं०] भिलावाँ। भल्लातक।

असतेगा–[मै०] कदम। कदंब।

अहम–[सं०] सोना। स्वर्ण।

अर्हा–[सं०] त्रायमान। त्रायमाणा।

अलंगई–[ता०] कर्पूरवल्ली। कपूरवल्ली।

अलगी–[ता०] ढेरा। अंकोट वृक्ष।

अलंब मुष्कक–[सं०] मोखा। मुष्कक।

अलंबी–[मरा०] भुइँ आँवला। भूम्यामलकी। पाताल आँवला।

अलंबुजा–[सं०] मुंडी बड़ी। महामुंडी।

अलबुद–[सं०] सुगंधबाला। नेत्रबाला।

अलंबुष–[सं०] भुइँ कदंब। भूकदंब।

अलंबुषा–[सं०] १. अलंबुषा। खरत्वक्। मेदोगला आदि। [हि०] लजालू। लजालू का भेद। लजवंती। लजौनी। ताल की लजालू। [बँ०] फूल शोला। फूल सोला। पानी नाजक। पानी लाजक। [पट०] लजालू। लाज आलु। [मु०] पनी लजक। [ता०] संदे किरय। [तै०] निरुतलपु। निद्रयुंग। [मला०] निट्टीटोड्डवड्डी। [लै०] Neptussia Aleracea. [अं०] A kind of sensitive plant.

यह भारतवर्ष के अधिकांश भागों में, विशेषकर तालाबों के किनारे, अधिक पाई जाती है।

इसके पत्ते स्पर्श से संकुचित हो जाते हैं; इस कारण इसको भी लजालू कहते हैं तथा यह लजालू का भेद है।

इसका चित्र भी एक प्रकार के लजालू का है। यह बंगाल, बिहार आदि प्रांतों के खँडहरों, ऊसर भूमि और अरहर आदि के खेतों में बरसात के अंत से लेकर शीत ऋतु तक में बहुत पाई जाती है। अनेक वैद्य इसको "लजालू" मानते हैं, क्योंकि इसके पत्ते स्पर्श से सिकुड़ जाते हैं; और कुछ वैद्य "अलंबुषा" भी कहते हैं, क्योंकि इसके फूल पीले होते हैं।

"अलंबुषा" का क्षुप प्रसर के समान भूमि पर फैला हुआ रहता है। शाखाएँ ऊपर को उठी हुई कम देखने में आती हैं, तथा क्षुप वर्षजीवी होता है। पत्ते लजालू के पत्तों के समान और सींकों पर १०–१५ जोड़े लगते हैं। स्पर्श से इसके पत्ते भी सिकुड़ जाते हैं। फूल पीले आते हैं। फलियाँ चिपटी, गोल, आध से १ इंच तक लंबी होती हैं। इनमें ६ से १० तक बीज होते हैं।

गुण—हलका, स्वादिष्ट तथा कृमि, कफ और पित्त-नाशक है। यह शीतल और संकोचक समझा जाता है। इसका अर्क

कृमि, पित्त और कफ को दूर करनेवाला है।

२. मुंडी। मुंडीतिका। ३. भुइं कदंब। भूकदंब।

अलंसुदा–[सं०] राजमाष। लोबिया।

अल–[सं०] १. हरताल। २. [ता०] बड़। वट वृक्ष। बरगद।

अलक–[सं०] १. हरिताल। हरताल। २. आक सफेद। श्वेतार्क। मदार।

अलक-उल्-वतम–[फा०] एक यूनानी औषधि, जो वतम नामक वृक्ष का गोंद है। इसका वृक्ष बड़ा होता है। पत्ते चौड़े और बीज सुमाक तथा मसूर के समान होते हैं। इसके फल सुगंधित मींगी के चारों तरफ महीन हरापन लिए काले छिलके सहित होते हैं। कुछ हकीम इसको पिस्ता मानते हैं।

अलकप्रिय–[सं०] १. भिलावाँ। भल्लातक। २. विजैसार। असनवृक्ष।

अलकम–[अ०] इनारू। इंद्रवारुणी। इंद्रायण।

अलकरूमी–[अ०] रूमी मस्तकी। मस्तकी।

अलका–[सं०] चर्बी। वसा।

अलकाह्वय–[सं०] नीम। निंब वृक्ष।

अलकुलवत्तम–[फा०] अलक-उल्-वतम।

अलकुसा–[बँ०] कौंछ। किवाँछ। कपिकच्छु।

अलक्त–[सं०] १. लाख। लाक्षा। लाही। २. महावर। लाक्षारस।

अलक्तक–[सं०] महावर। लाक्षारस।

अलक्ता–[सं०] लाख। लाक्षा। लाही।

अलगजरी–[संता०] १. अमरबेल नं० १। आकाशपवन। २. अमरबेल नं० २। आकाशवल्ली।

अलगिज़ाल–[अ०] हरिन। हिरन। मृग।

अलगुलहाज–[अ०] जवासा। यवास।

अलगुसी–[बँ०] अमरबेल नं० १। आकाशवल्लरी। अमरलता।

अलत्ता–[बँ०] महावर। लाक्षारस।

अलमिस्रो–[गोआ०] कडू जंगली। बनकडू। जंगली कडू।

अलमिरो–[फा०] गोभी। गोजिह्वा।

अलर्क–[सं०] आक सफेद। श्वेतार्क।

अलले–[मै०] हरीतकी नं० १। हर्रे।

अलवण–[सं०] मालकंगनी। ज्योतिष्मती।

अलवाचा कांदा–[मरा०]
अलवी–[गु०]
} गजकर्ण आलू। घुइयाँ। बंडा।

अलश–[ं०] अमलतास। आरग्वध। धनबहेड़ा।

अलशा–[गु०]
अलशी–[मरा०]
} तीसी। अतसी। मसीना।

अलसंदि–[क०]
अलसंदुलु–[तै०]
अलसंदे–[क०]
} राजमाष। लोबिया। बरवटी कलाय।

अलस–[सं०] १. हंसपदी। गोधापदी। हंसपागी। २. अलसक रोग।

अलसक–[सं०] क्षुद्र रोग विशेष। पाद रोग। खरुआ। खारुआ। पाँवों की उँगलियों के तलवे भींगे रहने से और सड़े हुए कीचड़ तथा मेघादिक के जल में बहुत फिरने से उंगलियों के बीच में सफेद दाग हो जायँ, उनमें अत्यंत खुजली, दाह और पीड़ा हो तो उस रोग को अलसक कहते हैं।

उक्त रोग-नाशक औषधि और प्रयोग-संख्या—आम नं० १७। कटसरैया पीली नं० ३। काजू नं० १।

अलसकापहा–[सं०] तोरी। तुवरक।

अलसा–[म०] हंसपदी। गोधापदी।

अलसिवित्तु–[तै०]
अलसी–[गु०, हि०]
अलसीविरई–[ता०]
} तीसी। अतसी। मसीना।

अलसुंदी–[तै०]
अलसुदा–[म०]
} राजमाष। लोबिया।

अलसेलका–[सं०] हंसपदी। गोधापदी।

अला–[ता०] बड़। वट वृक्ष। बरगद।

अलात–[सं०] कोयला। अंगार।

अलावु–[सं०] १. अरनी। अग्निमंथ। २. कद्दू। अलावु। लौका। कदुआ।

अलावा–[कुर०] गूलर। उदुंबर।

अलावु–[सं०] कद्दू। लौकी।

अलावुका–[सं०] कड़वी तूँबी। कटु तुंबी। तितलाऊ।

अलावु के बीज–[हिं०] कद्दू लंबे के बीज। लौकी के बीज।

अलावुनी–[स०] १. कड़वी तूँबी। कटु तुंबी। २. कद्दू। अलावु। लौकी।

अलावुसुहृत्–[सं०] अमलबेंत। अम्लवेतस।

अलावू–[हिं०] कड़वी तूँबी। कटु तुंबी।

अलासंदी–[खा०] राजमाष। लोबिया।

अलिपक–[सं०] १. कमलकेशर। पद्मकेशर। २. कोयल। कोकिल पक्षी। ३. मधुमक्खी। मधुमक्षिका। ४. कुत्ता। कुक्कुर।

अलिबक–[सं०] १. कमलकेशर। पद्मकेशर। २. मधुमक्खी। मधुमक्षिका। ३. कोयल। कोकिल पक्षी। ४. कुत्ता। कुक्कुर।

अलि–[सं०] १. भौंरा। भ्रमर। २. मदिरा। मद्य। दारू। ३ कौआ। काक पक्षी। ४. कोयल। कोकिल पक्षी। ५. बिच्छू। वृश्चिक। बिच्छी। ६. रत्न। मणि। जवाहर।

अलिक–[सं०] १. गाल। कपोल। २. ललाट। लिलार।

अलिकुलप्रिया–[सं०] सेवती। काष्ठसेवती।

अलिकुलसंकुल–[सं०] कूजा। कुब्जक पुष्प वृक्ष।

अलिकुलसंकुला–[स०] १. सेवती। सेवतीभेद। २. कूजा। कुब्जक।

अलिजिह्वा–[सं०]
अलिजिह्विका–[सं०] } जीभ के ऊपर की जीभ। तालू के ऊपर की छोटी जीभ।

अलिता–[सं०] महावर। अलक्तक।

अलिदूर्वा–[सं०]
अलिदूर्व्वा–[सं०] } माला दूब। माला दूर्वा।

अलिपक–[सं०] १. भौंरा। भ्रमर। २. कोयल। कोकिल पक्षी। ३. कुत्ता। श्वान। कुक्कुर।

अलिपत्रिका–[सं०] वृश्चिकाली। बरहंटा।

अलिपर्णिका–[सं०]
अलिपर्णी–[सं०] } वृश्चिकाली। बरहंटा। बिछुटी।

अलिप्रिय–[सं०] १. कमल लाल। रक्तोत्पल। लाल कमल। २. धारा कदंब। नीप। ३. आम। आम्र वृक्ष। ४. कदम। कदंब वृक्ष। ५. पाढ़र। पाटला वृक्ष। पाडरि।

अलिमंजिगे–[क०] तक्र। मठा।

अलिमक–[सं०] १. कमलकेशर। पद्मकेशर। २. महुआ। मधूक वृक्ष। ३. कोयल। कोकिल पक्षी। ४. भौंरा। भ्रमर। ५. मेढ़क। भेक। बेंग।

अलिमोदा–[सं०] अरनी। गणिकारिका।

अलिमोहिनी–[सं०] केविका। केवार।

अलिवल्लभा–[सं०] पाढ़र। लाल पाढ़र। रक्त पाटला।

अलिवाहिनी–[सं०] केविका। केवेर।

अलिविरै–[द्रा०]
अलिवेरई–[ता०] } चनसुर। चंद्रशूर। हालो।

अलिष्ट–[सं०] तिल। तिल वृक्ष।

अलिसिविरै–[द्रा०] तीसी। अतसी।

अली–[सं०] १. बिच्छू। वृश्चिक। बिच्छी। २. भौंरा। भ्रमर। ३. [पं०] अमलतास। आरग्वध। ४. [गोंड०] पीपल। अश्वत्थ वृक्ष।

अलीनक–[सं०] रांगा। बंग। कलई।

अलु–[सं०] १. आलू। आलुक। अलुई। २. तुलसी। सुरसा।

अलुआ–[हिं०] रतालू। शकरकंद।

अलुआ सफेद–[हिं०] शंखालु। शंखारु।

अलुई–[हिं०] आलू। आलुक।

अलुक–[सं०] १. आलू। आलुक। २. आलूबुखारा। म्लेच्छामिलका।

अलुकी–[सं०] अरवी। घुइयाँ। पेपची।

अलुगुणि–[क०]
अलुगोन–[क०] } रुद्रवंती। रुदंती। संजीवनी बूटी।

अलुवचेहली–[ते०] पोई। उपोदिका।

अलेवेरी–[बं०] चनसुर। चंद्रशूर।

अलोबी–[सं०] भुइँछत्ता। संस्वेदज शाक।

अलोहित–[सं०] कमल लाल। रक्तपद्म।

अलौंगीमर–[ता०] सोनापाठा। श्योनाक वृक्ष। अरलू।

अल्क-उल्-बतम–[फा०] अलक-उल्-वतम। पिस्ता।

अल्तवा अलावा–[अ०] रंगलता। मरोड़फली। ऐंठी जोड़ठी।

अल्पक–[सं०] १. जवासा। धमासा भेद। यवास। २. धमासा। दुरालभा।

अल्पकेशिका–[सं०] गंधमांसी। सुगध जटामांसी। भूतकेशी।

अल्पकेशी–[सं०] १. भूतकेश। गोलोमी। २. गंधमांसी। सुगध जटामांसी।

अल्पक्षुप–[सं०]
अल्पक्षुपा–[सं०] } विपरीत लजालू। ह्रस्वलज्जालु।

अल्पगंध–[सं०] १. कुमुद लाल। रक्त कैरव। लाल कुमुद। २. कमल लाल। रक्त पद्म।

अल्पघंटिका–[सं०] शणपुष्पी। बनसनई।

अल्पदाह–[सं०]
अल्पदाहिष्ट–[सं०]
अल्पदाहिष्टकापथ–[सं०] } खस। उशीर। वीरणमूल।

अल्पपत्र–[सं०] १. तुलसी। क्षुद्रपत्र तुलसी। छोटे पत्तों की तुलसी। २. कमल लाल। रक्त पद्म। लाल कमल।

अल्पपत्रिका–[सं०] ओंगा लाल। रक्तापामार्ग। लाल चिचड़ा।

अल्पपत्री–[सं०] १. सौंफ। मिश्रेया। २. मूसली। तालमूली। मूसली।

अल्पपद्म–[सं०] कमल लाल। रक्त पद्म।

अल्पपर्णिका–[सं०]
अल्पपर्णी–[सं०] } बनमूँग। मुद्गपर्णी। मुँगवन।

अल्पपुष्पिका–[सं०] कनेर लाल। रक्त करवीर। लाल फूल का कनेर।

अल्पप्रमाणक–[सं०] खरबूजा। दशांगुल।

अल्पमस्तक–[सं०] चीता। चित्रक।

अल्पमारिष–[सं०] १. मरसा। मारिष शाक। मरसा साग। २. चौलाई। तंडुलीय शाक।

अल्परसा–[सं०] सत्यानाशी। स्वर्णक्षीरी। घमोय। भरभाँड।

अल्पवर्त्तक–[सं०] तीतर। तित्तिर पक्षी।

अल्पवर्त्तिका–[सं०] बटेर। वर्त्तक पक्षी।

अल्पास्थि–[सं०] फालसा। परुपक।

अल्पिका–[सं०]
अल्पिकापद्या–[सं०] } बनमूँग। मुद्गपर्णी।

अल्फखह–[अ०] पनीरमाया। चम्ता चाख।

अल्मास–[अ०] हीरा। हीरक। (रत्न)

अल्लं–[ते०]
अल्ल–[क०] } अदरक। आर्द्रक। आदी।

अल्लक–[सं०] १. शीतलचीनी। कक्कोल। २. धनियाँ। धान्याक।

अल्लका–[स०] धनियाँ । धान्याक ।
अल्लम–[ते०] १. अदरक । आर्द्रक । आदी । २. सोंठ । शुंठी ।
अल्लवत्सल–[ते०] पोई लाल । रक्तोपोदिका । लाल पोई शाक ।
अल्ला–[स०] धनियाँ । धान्याक ।
अल्लिआकु–[ते०] } अंजन वृक्ष । लिंब ।
अल्लिचेट्टु–[खा०] }
अल्लितामरै–[द्रा०] } १. कुमुद नीला । नीलोत्पल । २. कुमुद लाल । रक्तोत्पल ।
अल्लिफुल–[द०] }
अल्लिबीज–[क०, खा०] चनसुर । चंद्रशूर । हालो ।
अल्लू–[सं०] आलू । आलुक । अलुई ।
अवंतिसोम–[सं०] } काँजी । कांजिक ।
अवंतीसोम–[स०] }
अवंभिसोम–[सं०] }
अवकेर–[अ०] शोरा । सूर्य्यक्षार ।
अवक्र–[स०] धूपसरल । सरल वृक्ष ।
अवगुड़हरागु–[क०] इनारू लाल । महाकाल लता । माहरी ।
अवचि बावचि–[गु०] रामतुलसी । तुलसीभेद ।
अवदंत–[स०] सुगधबाला । बालक ।
अवदंश–[सं०] सहिंजन । शोभांजन वृक्ष ।
अवदात–[सं०] सहिंजन । शोभांजन ।
अवदान–[स०] खस । उशीर ।
अवदाह–[स०] } लामज्जक । पीला बाला । सुगध खस । वीरणमूल ।
अवदाहक–[सं०] }
अवदाहेष्ट–[स०] }
अवदाहेष्टकापथ–[स०] खस । उशीर ।
अवदोह–[स०] दूध । दुग्ध ।
अवना–[स०] } त्रायमान । त्रायमाणा । बालाडुमर ।
अवनी–[स०] }
अवनीगृह–[स०] पिठवन । पृश्निपर्णी ।
अवनीसारा–[सं०] केला । कदली ।
अवपाटिका–[स०] रोग विशेष । छोटी योनि के छिद्रवाली स्त्री के साथ बलपूर्वक संभोग करने से अथवा हाथ की चोट लगने से या जोर से लिंग के चर्म को उलटने से चर्म फट जाय तो उसको "अवपाटिका" कहते हैं ।
अवर–[मला०] तरवड । आहुल्य ।
अवरक–[हि०] } अबरक । अभ्रक ।
अवरख–[हि०] }
अवरा–[मला०] तरवड़ । आहुल्य ।
अवरिका–[स०] धनियां । धान्याक ।
अवरुगंगि–[ते०] खस । उशीर ।
अवरेके–[खा०] तरवड । आहुल्य ।
अवरेटपंग–[मग०] बेल । बिल्व वृक्ष ।
अवरेशम–[यू०] अबरेशम । इबरेशम ।
अवरोहक–[स०] असगंध । अश्वगंधा ।
अवरोह शाखी–[स०] पाकर । प्लक्ष ।
अवरोहि–[स०] बड़ । वट वृक्ष ।
अवरोहिका–[स०] असगंध । अश्वगंधा ।
अवरोहिन्–[स०] } बड़ । वट वृक्ष । बरगद ।
अवरोहो–[स०] }
अवल–[अ०] १. ऊँट । उष्ट्र । २. [गु०] तरवड । आहुल्य ।
अवलगुज–[स०] बकुची नं० २ ।
अवला–[स०] १. स्त्री । नारि । औरत । २. रत्न । जवाहर । ३. प्रियंगु । फूलप्रियंगु । दहिंगना । ४. [कच्छ०] तरवड । आहुल्य ।
अवलेह–[स०] } लेह औषधि । चाटने की दवा । औषधियों के काढ़े को फिर से औंटते औंटते जब गाढ़ा लुआब सा चाटने योग्य हो जाय तो उसे "अवलेह" या "लेह" कहते हैं ।
अवलेहिका–[सं०] }
अवलेहवत–[क०] मूँगा । प्रवाल ।
अवलो–[ते०] १. राई । राजिका । २. राई काली । कृष्ण राजिका ।
अवल्क–[स०] मेढ़ासिंगी । मेषशृंगी ।
अवल्गजा–[स०] } बकुची । सोमराजी । वापची ।
अवल्गुज–[सं०] }
अवल्गजा–[स०] }
अवष्टंभ–[स०] सोना । स्वर्ण ।
अवसादनी–[स०] महाकरंज । बड़ा करंज ।
अवसि–[ते०] अगस्त । मुनिद्रुम ।
अवसूदन–[अ०] प्रमेह । धातुक्षीणता ।
अवाक्लुत्र–[स०] सोंठ । शुंठी ।
अवाक्पुष्पा–[स०] सौंफ । मिश्रेया ।
अवाक्पुष्पी–[स०] १. जूही पीली । हेमपुष्पिका । स्वर्णयूथिका । २. अंधाहुली । अधःपुष्पी । ३. सोआ । शतपुष्पा । ४. सौंफ । मिश्रेया ।
अवारिका–[स०] धनिया । धान्याक ।
अवारी–[ता०] तरवड । आहुल्य ।
अवालु–[ते०] सरसों । सर्षप ।
अवाविल–[यू०] } अबाबील । टेरी । मयानीपट । (पक्षी)
अवावील–[यू०] }
अवि–[स०] १. भेड़ । मेष । २. भेड़ी । मेषी । ३. मूसा । मूषिक । ४. कंबल । मेषादि लोम-रचित वस्त्र । ५. बनकुलथी । कुलत्थिका ।
अविक–[सं०] हीरा । हीरक ।

अविगंधनी–[सं०]
अविगंधा–[सं०] } तिलवन। अजगंधा।

अविगंधिका–[सं०] १. तिलवन। अजगंधा। २. बर्बरी। बनतुलसी।

अविगंधी–[सं०] तिलवन। अजगंधा।

अविघ्न–[सं०]
अविघ्न–[सं०] } १. करौंदा। करमर्द। २. पानी आँवला। पानी आमलक।

अविच्छेदी विषम ज्वर–[सं०] सतत ज्वर।

अवित्यज–[सं०] पारा। पारद।

अविदग्ध–[सं०]
अविदुग्ध–[सं०]
अविदुष्य–[सं०]
अविदूष्य–[सं०] } भेड़ी का दूध। मेषी-दुग्ध।

अविद्धकर्ण–[सं०] १. पाठा। पाढ़ी। २. जायफल। जातीफल। ३. भँगरा। भृंगराज। भँगरैया।

अविद्धकर्णिका–[सं०]
अविद्धकर्णी–[सं०] } पाठा। पाढ़ी। पुरइनपाती।

अविप्रिय–[सं०] सावाँ। श्यामक।

अविप्रिया–[सं०] १. अनंतमूल। शारिवा। २. श्वेता। कन्ना। केना।

अविभुक्–[सं०] शेर। व्याघ्र। बाघ।

अविमुक्तक–[सं०] माधवी लता। अतिमुक्तक। माधवी।

अविमुक्तका–[सं०] तेंदू। तिंदुक।

अवियज़्वरिस–[अ०]
अवियज़्वारिस–[अ०] } जरश्क। जरिश्क।

अविलबौंड़ी–[हिं०] विषांबिल। वृक्षाम्ल।

अविला–[सं०] भेड़ी। मेषा।

अविवृत्त–[सं०] मेढ़ासिंगी। मेषशृंगिक।

अविशिर–[म०] हुरहुर। आदित्यभक्ता।

अविषा–[सं०] १. अतीस। अतिविषा। २. निर्विसी। निर्विषी तृण।

अविसि–[ते०] १. मौलसिरी बड़ी। वकुल वृक्ष। बड़ी मौलसरी। २. अगस्त। मुनिद्रुम। हथिया वृक्ष।

अवी–[सं०] १. बनकुलथी। वनकुलत्थ। २. ऋतुमती स्त्री।

अवीजा–[सं०] किशमिश। द्राक्षाभेद।

अवीदशिकरान–[अ०] खुरासानी अजवायन। पारसीक यवानी।

अवीदुग्ध–[सं०] भेड़ी का दूध। मेषीदुग्ध।

अवीमूत्र–[सं०] भेड़ी का मूत। मेषीमूत्र।

अवुक–[सं०] बकरा। छाग।

अवुखलसा–[अ०] दंती बड़ी। बृहद्दंती।

अवेरी–[ता०] नील। नीली वृक्ष।

अव्यंग–[सं०]
अव्यंगा–[सं०] } कौंछ। किवाँछ। कपिकच्छु।

अव्यंड–[सं०]
अव्यंडा–[सं०] } १. भुईं आँवला। भूम्यामलकी। २. कौंछ। कपिकच्छु। किवाँछ।

अव्यक्ता–[सं०] मूर्वा काली। कृष्ण गोकर्णी लता। मरोड़फली।

अव्यथा–[सं०] १. स्थलकमल। स्थलपद्म। २. मुंडी बड़ी। महामुंडी। गोरखमुंडी। ३. हरीतकी। हड़। हर। ४. आँवला। आमलकी।

अव्यथि–[सं०]
अव्यथी–[सं०] } घोड़ा। घोटक। अश्व।

अव्यथ्या–[सं०] हरीतकी। हड। हर्रे।

अव्यया–[सं०] मुंडी बड़ी। महामुंडी। गोरखमुंडी।

अव्वगुणपंडु–[ते०] इनारू लाल। महाकाल लता। माहरी।

अशंत–[सं०] कौआ। काक पक्षी।

अशकुंभी–[सं०] जलकुंभी। वारिपर्णी।

अशखार–[फा०] सज्जी। सर्जिका।

अशखीश–[फा०] अपराजिता। कोयल।

अशता–[मरा०] पीपल छोटी। अश्वत्थिका।

अशथ्व–[बँ०] पीपर। अश्वत्थ वृक्ष।

अशन–[सं०] १. चीता। चित्रक। २. भिलावाँ। भल्लातक वृक्ष। ३. बिजैसार। असन वृक्ष। असना।

अशनपर्णी–[सं०] बिजैसार। पीतशाल।

अशनमल्लिका–[सं०] आस्फोता लता। हापर माली।

अशना–[सं०] १. निष्पाव। राजशिंबी। भटवाँस। २. [हिं०] बिजैसार। पीतशाल।

अशनान–[फा०] अस्नान। यह घास की जाति की एक यूनानी बूटी जिसके पत्ते और शाखें टेढ़ी और बहुत बारीक होती हैं।

अशनाया–[सं०] १. निष्पाव। राजशिंबी। भटवाँस। २. क्षुधा। भूख।

अशनी–[सं०] हीरा। हीरक।

अशम–[ता०]
अशमता ओमान–[ता०]
अशमदागा वोमा–[ते०] } अजमोदा। अजमोदिका। अजमोद।

अशाका–[सं०]
अशाखा–[सं०] } शूली तृण। सूली घास।

अशानागंधाढ्या–[सं०] आँबा हलदी। आम्रगंध हरिद्रा। आमा हलदी।

अशारुन–[अ०] तगर। तगरपादुका।

अशितलता–[सं०] दूब नीली। नीलदूर्वा।

अशिर–[सं०] हीरा। हीरक। वज्र।

अशिंशिबी–[सं०] समचमरिया। दधिपुष्पी।

अशीता–[सं०] बिदारीकंद। भूमिकुष्मांड।

अशुंकर–[खा०] अशोक वृक्ष।

अशुक्लजा–[सं०] धान। धान्य।

अशुक्ला–[सं०] बिदारीकंद। भूमिकुष्मांड।

अशोरिया–[गु०]
अशोलिया–[गु०] } चनसुर। चंद्रशूर। हालो।

अशोलियो–[गु०] १. चनसुर। चंद्रशूर। २. कटसरैया। सैरेयक।

अशोक–[सं०] हेमपुष्प। वंजुल। ताम्रपल्लव। कंकेलि। पिंडपुष्प। गधपुष्प। नट इत्यादि। [हिं०] असोक। अशोग। अशोगि। असोग। आसापाला। [बं०] अस्पाल। असोक। अशोक। [मा०] आशोपालो। [पं०] अशोक। [द्रा०] अशोकम्। [ते०] अशोकमु। [गु०] आशोपालो। [क०] अशोक। अशोके। [कट०] असेक। [खा०] अशुंकर। [मु०] जासुंदी। असोक। [लै०] Saraca Indica. Syn: Jonesia Asoka.

१. अशोक दो प्रकार का होता है, एक वह जो औषधि-प्रयोग में आता है और दूसरा वह जिसकी टहनियाँ और पत्ते उत्सव के समय शोभा के लिये व्यवहार में लाते हैं। पहला अशोक कम मिलता है, इस कारण कुछ वैद्य दूसरे ही को औषधि-प्रयोग में लाते हैं, किंतु इसका व्यवहार अनुपयोगी होता है। पहले हम उस अशोक का वर्णन करते हैं जिसको औषधि-प्रयोग में लेना चाहिए। दूसरे प्रकार के अशोक को बंगाल में "देवदारु" कहते हैं। इसका हमने "अशोक भेद" के नाम से वर्णन किया है।

अशोक मध्य और पूरब हिमालय, कुमाऊँ, पूरब बंगाल और दक्षिण भारत तथा अनेक प्रांतों की वाटिकाओं में देखने में आता है।

इसका वृक्ष बड़ा, झोंपड़ेनुमा, सुहावना, सायेदार, सीधा और बारहों मास हरा-भरा दिखाई पड़ता है। इसकी लकड़ी किंचित् लालिमायुक्त भूरे रंग की और हलकी होती है। इसकी नई-नई टहनियाँ झुकी हुई, लाल रंग की और मनोहर देख पड़ती हैं। पत्ते सघन और चिकने तथा ३ से ६ इंच तक लंबे अनीदार होते हैं तथा टहनियों पर ३ से ६ जोड़े लगते हैं। फूल सघन, गुच्छों में ३-४ इंच के घेरे में नारंगी के रंग के से अत्यंत रक्तवर्ण परम सुहावने आते हैं। फलियाँ ६ से १० इंच तक लंबी, चिपटी तथा १-२ इंच चौड़ी होती हैं। प्रत्येक फली में एक या डेढ़ इंच लंबे ४ से ८ तक चिपटे बीज होते हैं। इसी वृक्ष की वाटिका में श्रीजानकीजी को रावण ने हरण करके रखा था।

जिस प्रकार साधारण वृक्ष रोपण किए जाते हैं, उसी प्रकार इसको भी रोपण करना चाहिए। विशेषकर कुछ नीची जमीन में इसके वृक्ष अच्छी तरह बढ़ते हैं।

गुण-दोष—शीतवीर्य, कड़वा, कसैला, धारक, वर्ण को उज्ज्वल करनेवाला, हड्डी को जोड़नेवाला, स्त्रियों के शोक को हरण करनेवाला, मलरोधक तथा त्रिदोष, अपची, प्यास, दाह, कृमि, सूजन, शोष, विष और रुधिर-विकार का नाश करनेवाला है।

प्रयोग—१. कहते हैं कि इस वृक्ष के नीचे निवास करने से शोक का हरण होता है। इसकी छाल रक्त-प्रदर का नाश करती है, किंतु फल खाने योग्य नहीं होते और बीज औषधि-प्रयोग में कम आते हैं। छाल मूत्ररोग पर, विशेषतः स्त्रियों के प्रदर रोग में, बहुत लाभकारी है। इसके लिये छाल का काढ़ा दूध में दिया जाता है। फूलों को पीसकर उसे पानी में मिलाकर प्रदर रोग से उत्पन्न हुए आमातिसार में देते हैं। २. रक्त-प्रदर में इसकी छाल के काढ़े में दूध मिलाकर देने से लाभ होता है। इस काढ़े में दो बूँद गंधक का तेजाब मिलाकर पिलाना गुणकारी है। छाल और रसौत को चावल के पानी में पीसकर पिलाने से भी फायदा होता है। ३. रक्तार्श में इसकी छाल के काढ़े का पान करना हितकारी है। ४. रक्तातिसार में फूलों को जल में पीसकर पिलाना चाहिए। ५. बालक को वमन कराने के लिये फूलों को पीसकर स्तन पर लेप कर उसका पान कराना चाहिए। ६. श्वेत प्रदर में ५ तोले छाल को पाव भर पानी में भिगो प्रातःकाल अर्द्धावशेष काढ़ा बनाकर दो आने भर शुद्ध आमलासार गंधक का बारीक चूर्ण खिलाकर उक्त काढ़ा पिलाना चाहिए। ७. श्वास पर बीजों का एक चावल की मात्रा से दोषानुसार प्रति दिन ५-७ बार पान की बीड़ी में रखकर सेवन करने से लाभ होता है। ८. श्वेत प्रदर में अशोक की छाल, आम की छाल और बड़ के अंकुर के काढ़े में मधु मिलाकर पान करने से लाभ होता है।

२. अशोक भेद। ३. पारा। पारद।

अशोक भेद–[हिं०] अशोक। असोक। देवदारी। देवदारु। देवदार। [बं०] देवद। देवदारु। [उ०] देवदारु। [मु०] असोक। असोका। असोपुलव। असुपाल। आसुपाल। [गु०] आशोपलो। आसोपुलो। अशोपुलो। [ते०] देवदारु। असोक। अशोकम्। असोकम्। [ता०] अस्सोथि। [खा०] असोक। पुत्रजीव। [सिला०, ता०] मरइल्लुपइ। [लै०] Polyalthia Longifolia. Syn: Gualteria Longifolia.

यह प्रायः सभी प्रांतों में पाया जाता है, विशेषकर तंजौर और पश्चिम प्रायद्वीप में सड़कों के किनारे रोपण किया जाता है। सीलोन और बंबई की वाटिकाओं में अधिक लगाया जाता है। बंबई की सड़कों के किनारे बहुत देखने में आता है।

इसका वृक्ष सीधा, खड़ा, पतली पतली शाखाओं पर मुड़े हुए किनारेवाले चमकीले पत्तों से बहुत सुहावना दिखाई पड़ता है। छाल पतली और लकड़ी किंचित् पीलापन लिए

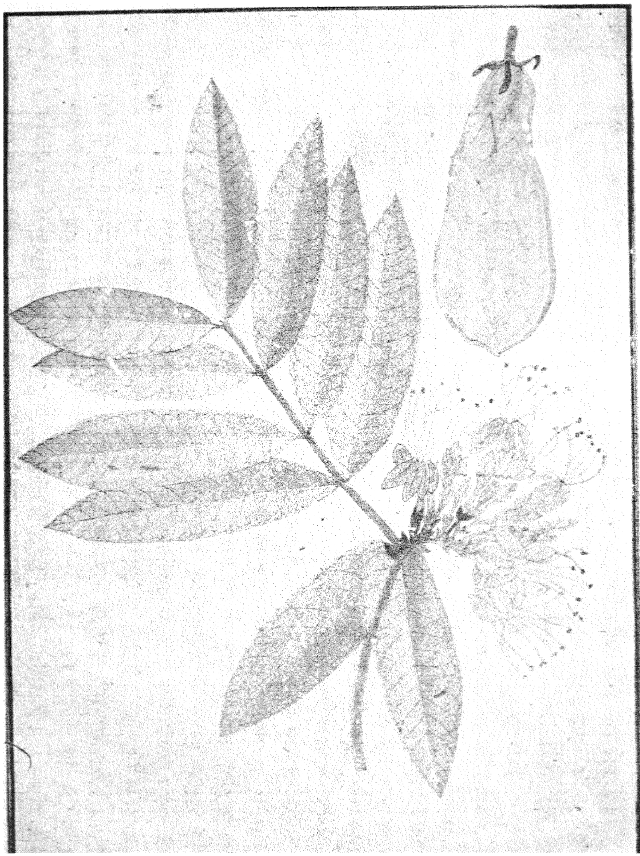

अशोक (तर भूमि का)

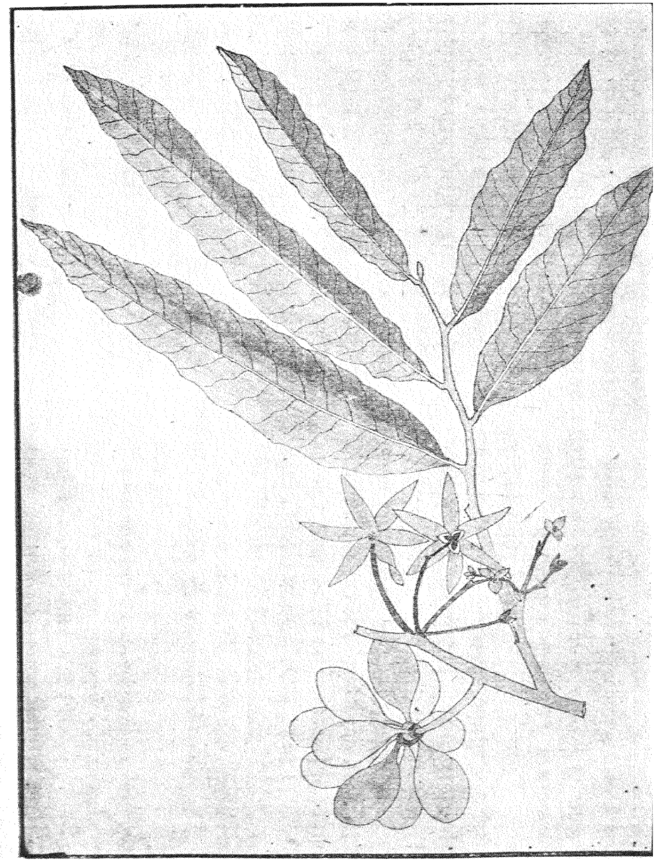

अशोक भेद (फूल और फल)

सफेद होती है। पत्ते ६ से ९ इंच तक लंबे, किंचित् अंडाकार, अनीदार और किनारीदार होते हैं। फूल हरापन लिए पीले रंग अथवा सफेदी लिए पीले रंग के निकलते हैं और वे पाँच दल-वाले होते हैं। प्रत्येक दल आध इंच लंबा और अनीदार होता है। फल चौमासे के आरंभ में लगता है। इसका आकार जामुन के आकार के सदृश होता है। कच्चे फल का रंग नीला और पके का लाल सा होता है।

प्रयोग—यह औषधि-प्रयोग में बहुत कम आता है। त्योहार अथवा उत्सव के समय इसकी डाली और पत्तों से मंडप या मकानों को सुसज्जित करते हैं। उड़ीसा के बालासोर जिले में यह ज्वरनाशक के समान व्यवहार में आता है। इसका फल खाने के योग्य नहीं होता।

अशोकमु–[ते०] अशोक। ताम्रपल्लव।

अशोकरोहिणी–[सं०]
अशोका–[सं०] } कुटकी। कटुकी। कटु रोहिणी।

अशोकारि–[सं०] कदम। कदंब वृक्ष।

अशोके–[क०]
अशोग–[हिं०]
अशोगि–[हिं०] } अशोक। ताम्रपल्लव। वंजुल।

अशोपुलो–[गु०] अशोक भेद।

अश्क–[अ०] कांदर। ओशह।

अश्कपेंचा–[यू०] इश्कपेचाँ। इश्कपेंचा।

अश्त–[मरा०] पीपल छोटी। अश्वत्थिका।

अश्तरखार–[फा०] ऊँटकटीरा। उष्ट्रकंट।

अश्ता–[मरा०] पीपल छोटी। अश्वत्थिका।

अश्नह–[अ०] छरीला। शैलेय।

अश्नान–[यू०] अश्नान। असनान। अशनान। [फा०] गाशूल। यह घास की जाति की एक यूनानी बूटी है। इसकी शाखाएँ और पत्ते टेढ़े और बहुत बारीक होते हैं। इसका रंग हरा तथा स्वाद कड़वा होता है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—पहले दर्जे में गरम और दूसरे में रूक्ष, मूत्रल, मल को स्वच्छकारक तथा जलोदर को लाभकारी है। यह वस्ति को हानिकारी है।

दर्पनाशक—मधु।

प्रतिनिधि—साबुन।

मात्रा—१ से १॥ माशे तक।

प्रयोग—१. यह साबुन के समान साफ करनेवाला है। अरब-वासी इससे साबुन की तरह कपड़े धोते हैं। रेशमी वस्त्र इससे अच्छी तरह साफ होता है। २. गर्भपात कराने के लिये ११ माशे की मात्रा दी जाती है। ३. घाव पर पीसकर लगाने से लाभ होता है। ४. मासिक धर्म को खोलने के लिये ३॥ माशे की मात्रा से इसका सेवन करना चाहिए। ५. इसके मंजन से दाँत साफ होता है। इसकी अधिक मात्रा हानिकर भी होती है।

अश्मंत–[सं०] १. अश्मंतक। आबुटा। २. पाषाणभेद। पाथरचूर। ३ लिसोड़ा। बहुवार वृक्ष। ४. कचनार सफेद। कोविदार। सफेद कचनार।

अश्मंतक–[सं०] १. पाषाणभेद। पाथरचूर। २. लिसोड़ा। बहुवार वृक्ष। ३. कचनार सफेद। कोविदार। ४. चांगेरी। अंबिलोणा। अमता। ५. अश्मंतक। ताम्रपत्रक आदि। [हिं०] कचनार। कचनारभेद। आबुटा। [बँ०] आबुटा। [मरा०] आपटा। पिपळा। कांचन। [मा०] कचनार का भेद। [ते०] आरेचेट्टु। [ता०, ते०] कंचनी। कांचनी। [गु०] आशोदरो। असुंद्रो। [को०] चामल। [मद०] एस मडुग।
[लै०] Bauhinia Tomentosa.

यह कचनार का भेद है। संयुक्त प्रांत तथा पश्चिमोत्तर प्रदेश से सीलोन तक एवं भारतवर्ष के अनेक प्रांतों में पाया जाता है।

इसका झाड़ बड़ा और सीधा होता है। शाखाएँ झुकी हुई रोएँदार होती हैं। पत्ते कचनार के पत्तों के समान द्वितल, लंबाई से चौड़ाई में अधिक, १ से ३ इंच तक लंबे, तिहाई इंच कटे हुए और प्रत्येक दल अंडाकार एवं सात रेशेवाला होता है। फूल पाँच दलवाले घंटाकार २–२॥ इंच लंबे, पीले तथा सफेद आते हैं। फलियाँ ४–५ इंच लंबी, चिपटी, चाथाई से आध इंच तक चौड़ी होती हैं। इनमें ८, १० छोटे छोटे बीज होते हैं। इसका स्वाद कसैला और मीठा होता है।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—मधुर, कसैला, शीतल तथा कृमिरोग, यकृत के रोग, प्रमेह, दाह, प्यास, छर्दि, विषम ज्वर, चातुर्थिक ज्वर, भूतबाधा, शर्कराश्मरी, कोढ़, गुदभ्रंश, गंडमाला, व्रण, कंठरोग, रुधिर-विकार, गल-गंड, विष, अतिसार और कफ-पित्त का नाश करनेवाला है।

प्रयोग—१. इसकी छाल, फली और पत्ते औषधि-प्रयोग में आते हैं। बीजों का तेल निकाला जाता है। फली संशोधक होती है। छाल का फाँट या हिम संकोचक है और गरगरे के समान व्यवहार किया जाता है। कटे या मरोड़े अंगों पर छाल को पीसकर लगाते हैं। दक्षिण भारत में सूखी हुई कलियों और कोमल पत्तों को आम-रक्तातिसार पर व्यवहार में लाते हैं। मालाबार के लोग जड़ की छाल का काढ़ा फेफड़े की उष्णता पर देते हैं और इसको कृमिघ्न के समान व्यवहार में लाते हैं। २. आमातिसार में सूखी कलियों का अथवा कोमल पत्तों का चूर्ण हितकारी होता है। ३. यकृत के पित्तज शोथ पर जड़ की अंतरछाल का काढ़ा देना लाभकारी है। ४. मुख-पाक पर तथा दाँतों को दृढ़ करने के लिये जड़ की अंतरछाल के काढ़े से कुल्ले करना हितकारी है। ५. विषैले जीवों के दंश पर अथवा विष से उत्पन्न हुए घाव पर इसके बीजों को

सिरके में पीसकर लेप करने से लाभ होता है। ६. कृमिरोग पर अंतरछाल का काढ़ा देना चाहिए।

अश्म–[सं०] १. सोनामक्खी। स्वर्णमाक्षिक। २. लोहा। लौह धातु।

अश्मकंदिका–[सं०] असगंध। अश्वगंधा।

अश्मकदली–[सं०] केला (पहाड़ी)। पार्वतीय कदली। पहाड़ी केला।

अश्मकरम्–[सं०] १. सोना। स्वर्ण। २. रत्न। जवाहर।

अश्मकुल्लुह–[सं०] बेलंतर। विल्वांतर वृक्ष। बेलतरु।

अश्मकेतु–[सं०] पाषाणभेद। पत्थरचूर।

अश्मगर्भ–[सं०] पन्ना। मरकत मणि।

अश्मगर्भक–[सं०] तिनिश। जारूल।

अश्मगर्भज–[सं०] पन्ना। मरकत मणि।

अश्मघ्न–[सं०] पाषाणभेद। पत्थरचूर।

अश्मज–[सं०] १. शिलाजीत। शिलाजतु। २. गेरू। गैरिक। गेरू मिट्टी। ३. लोहा। मुंड लौह।

अश्मजतु–[सं०]
अश्मजतुक–[सं०] } शिलाजीत। शिलाजतु।

अश्मपुष्प–[सं०] छरीला। शैलेय।

अश्मभांड–[सं०]
अश्मभाल–[सं०] } लौहभांड। लोहे का खरल। हामिल-दस्ता। इमामदस्ता। हावनदस्ता।

अश्मभित्–[सं०] कवाट वक्र। कवाट चक्र। कराटिया। कवाट वेट्टु वृक्ष।

अश्मभेद–[सं०]
अश्मभेदक–[सं०] } पाषाणभेद। हिमसागर। पत्थरचूर।

अश्मयोनि–[सं०] १. पन्ना। मरकत मणि। २ नीलम। नील मणि। ३. अश्मंतक। आवुटा।

अश्मरी–[सं०] रोग-विशेष। पथरी रोग। [फा०] संगगुर्दः [अ०] हिसआत। मूत्राशय में रहता हुआ वायु वस्तिगत शुक्र के साथ मूत्र को अथवा पित्त के साथ कफ को सुखाकर उसी प्रकार क्रम क्रम से पथरी उत्पन्न करता है जिस प्रकार गाय के पित्त में गोरोचन बढ़ता है। उस दशा मे पेट फूलता है, लिंगेंद्रिय, मूत्राशय और अंडकोषादि में अत्यंत पीड़ा होती है, बकरे के मूत्र की गंध के समान गंध आने लगती है, मूत्रकृच्छ्र, ज्वर और अरुचि होती है, नाभि, सीवन, मूत्राशय और सिर मे पीड़ा होती है, मूत्र की धार रुक रुककर गिरती है और मूत्र-मार्ग रुक जाता है। जब पथरी मूत्र-मार्ग से हट जाती है, तब मूत्र गोमेद मणि के समान स्वच्छ और पीड़ारहित उतरता है। पर पथरी से मूत्र-मार्ग बन्द होने पर अत्यंत वेदनायुक्त लाल मूत्र उतरता है। यह रोग वातज, पित्तज, कफज और शुक्रज चार प्रकार का होता है।

उक्त रोग-नाशक औषधि और प्रयोग-संख्या—अज-मोदा नं० १७। अनंतमूल सफेद नं० २। इलायची बड़ी नं० १३। ईंट नं० २। ककड़ी के बीज नं० ६। कबूतर नं० ४। करंज नं० २८, २६। कास नं० १। कुलथी नं० ३। केसर नं० ३२। गुड़ नं० १०। गोखरू नं० १०। गोखरू बड़ा नं० १३, २०, २७। गोरखपान नं० ५। चनाखार नं० ६। चौलाई नं० ११। जामुन नं० ३०। तालमखाना नं० ६, १३। तिल नं० ११, २०। त्रिफला नं० ५। दाख नं० २, १२। नीम नं० ५४। पंचमूल लघु नं० ३। पखाख नं० ३। पाठा नं० ४। पालक नं० २। पाषाणभेद न० २। पोई नं० ७। बरुन नं० १३, १४, १५। बांझ खेखसा नं० १५। बुकन नं० २। मकई नं० ६। मुनक्का नं० १६। मूली नं० ३, १३, १४। मेंहदी नं० १०। मोरशिखा नं० ७। लजालू नं० ४। लिसोड़ा नं० १३। शिलाजीत नं० २५। सतावर नं० १६। सनाय नं० ५। सहदेई नं १४। सहिंजन नं० ६, ४४। शोरा नं० २।

अश्मरीकृच्छ्र–[सं०] मूत्रकृच्छ्र। सूजाक।

अश्मरीघ्न–[सं०] बरुन। वरुण वृक्ष।

अश्मरीप्रिय–[सं०] शालिधान। महाशालि।

अश्मरीभेद–[सं०]
अश्मरीभेदन–[सं०] } पाषाणभेद। पत्थरचूर।

अश्मरीरिपु–[सं०] मकई। महाकाय।

अश्मरी शर्करा–[सं०] रोग-विशेष। अश्मरी रोगभेद। जो अश्मरी वायु से भिन्न भिन्न होकर खंड खंड शर्करा के समान होती है, उसको "शर्करा अश्मरी" कहते हैं। शर्करा और सिकता प्रमेह शरीर को भस्म करनेवाला है और निश्चयतः यह पथरी रोग भी उत्पन्न करता है। अतएव शर्करा प्रमेह को पथरी के समान कष्टकारी समझना चाहिए। वाताधिक्य में सूक्ष्म कणों से युक्त जो शर्करा बाहर निकलती है, वह वात से भिन्न शर्करा पथरी कही जाती है। इसके प्रकोप से हृदय में पीड़ा, नसों में दर्द, कँपकँपी सहित कोख में शूल, प्यास, डकार, दुर्बलता होकर शरीर पीला तथा काला पड़ जाता है। इसमें अरुचि से पाचन-शक्ति नष्ट हो जाती है और वह मूत्र-मार्ग में प्रविष्ट होकर अनेक प्रकार के उपद्रव करती है।

अश्मरीहर–[सं०] १. पुनेरा। यवनाल। देवधान्य। २. बरुन। वरुण वृक्ष।

अश्मलाक्षा–[सं०]
अश्मलाक्षा–[सं०] } शिलाजीत। शिलाजतु।

अश्मसंभव–[सं०] शिलाजीत। शिलाजतु।

अश्मसार–[सं०] लोहा। लौह धातु।

अश्मसारा–[सं०] काठकेला। काष्ठ कदली।

अश्मसुता–[सं०] पाठा। पाढ़ी।

अश्महन्-[सं०] } पाषाणभेद । पत्थरचूर ।
अश्महा-[सं०]

अश्मह्रत-[सं०] कवाटवक्र चुर । कवटवेटु । कराडिया ।

अश्मांतक-[सं०] कचनार सफेद । श्वेत कांचनाल वृक्ष ।

अश्मीर-[सं०] मूत्रकृच्छ्र । सूजाक ।

अश्मोत्थ-[सं०] शिलाजीत । शिलाजतु ।

अश्यामा-[सं०] निसोथ सफेद । श्वेत त्रिवृत्त । सफेद निसोत ।

अश्र-[सं०] १. नेत्रजल । आँसू । २. रुधिर । रक्त । लहू । खून ।

अश्रु-[सं०] नेत्रजल । आँसू ।

अश्रुनाली-[सं०] भगंदर रोग ।

अश्व-[सं०] घोड़ा । घोटक ।

अश्वकंदक-[सं०] } असगंध । अश्वगंधा ।
अश्वकंदिका-[सं०]

अश्वक-[सं०] गौरैया । चटक पक्षी ।

अश्वकर्ण-[सं०] } शाल । सखुआ । साखू ।
अश्वकर्णक-[सं०]
अश्वकर्णिका-[सं०]

अश्वकातरा-[सं०] } हयकातरा । घोड़े का थर । घोड़े का थरा ।
अश्वकातरिका-[सं०]
अश्वकाथरिया-[सं०]

अश्वक्षुरा-[सं०] } अपराजिता । विष्णुक्रांता । कोयल ।
अश्वक्षुरिका-[सं०]
अश्वक्षुरी-[सं०]

अश्वखरज-[सं०] खच्चर । अश्वतर ।

अश्वखुर-[सं०] १. घोड़े का खुर । घोटक खुर । २. नखी । व्याघ्रनखी ।

अश्वखुरा-[सं०] } अपराजिता । विष्णुक्रांता । कोयल ।
अश्वखुरी-[सं०]

अश्वगंडी-[ता०] असगंध । अश्वगंधा ।

अश्वगंध-[सं०] } असगंध । असगंद ।
अश्वगंधा-[सं०]

अश्वगंधा-[सं०, बँ०] } काकनर नं० २ । काकना ।
अश्वगंधाभेद-[सं०]

अश्वगंधिका-[सं०] } असगंध । अश्वगंधा ।
अश्वगंधी-[ता०]

अश्वघ्न-[सं०] कनेर सफेद । श्वेत करवीर । सफेद कनेर ।

अश्वजीवन-[सं०] चना । चणक । बूट ।

अश्वतर-[सं०] खच्चर । अश्वखरज ।

अश्वत्थ-[सं०] पीपल वृक्ष ।

अश्वत्थक-[सं०] मल्लिका । मोतियाभेद ।

अश्वत्थफलका-[सं०] } हाऊबेर । हवुषा ।
अश्वत्थफला-[सं०]

अश्वत्थभित्-[सं०] } बेलिया पीपल । नंदी वृक्ष ।
अश्वत्थभेद-[सं०]

अश्वत्थसन्निभा-[सं०] पीपल छोटी । अश्वत्थिका ।

अश्वत्था-[सं०] १. पीपल छोटी । अश्वत्थिका । २. श्रीवल्ली । सीका काई ।

अश्वत्थिका-[सं०] पीपल छोटी । अश्वत्थसन्निभा ।

अश्वत्थी-[सं०] १. पीपल छोटी । अश्वत्थिका । २. श्रीवल्ली । सीका काई ।

अश्वद-[अ०] सीसा । नाग । सीसक धातु ।

अश्वदंष्ट्रक-[सं०] } गोखरू । गोक्षुर ।
अश्वदंष्ट्रा-[सं०]

अश्वनाश-[सं०] } कनेर सफेद । श्वेत करवीर । सफेद कनेर ।
अश्वनाशक-[सं०]
अश्वनाशन-[सं०]

अश्वपर्णिका-[सं०] } गंधमांसी । भूतकेशी ।
अश्वपर्णी-[सं०]

अश्वपुच्छा-[सं०] १. पिठवन । पृश्निपर्णी । पिठोनी । २. मषवन । माषपर्णी । बनउड़दी ।

अश्वपुच्छिका-[सं०] } मषवन । माषपर्णी । माषानी ।
अश्वपुच्छी-[सं०]

अश्वपुत्री-[सं०] १. सेमल । शाल्मली वृक्ष । २. मूसाकानी । द्रवंती ।

अश्वपुष्प-[सं०] छरीला । शैलेय ।

अश्वबला-[सं०] १. मेथी । मेथिका । २ नाड़ी का शाक । नालता भाजी ।

अश्वबाल-[सं०] काँस । काशतृण ।

अश्वमार-[सं०] कनेर । करवीर ।

अश्वमारक-[सं०] १. कनेर सफेद । श्वेत करवीर । २. कनेर । करवीर । कनैल । ३. पालक । पालंक शाक । ४. पोई । उपोदिका ।

अश्वमारख्य-[सं०] कनेर सफेद । श्वेत करवीर । सफेद कनैल ।

अश्वमूत्रिका-[सं०] } सलई । शल्लकी वृक्ष । सलैया ।
अश्वमूत्री-[सं०]

अश्वमोहक-[सं०] कनेर सफेद । श्वेत करवीर । सफेद कनैल ।

अश्वरिपु-[सं०] १. भैंसा । महिष । २. कनेर । करवीर । कनैल ।

अश्वरोधक-[सं०] कनेर सफेद । श्वेत करवीर वृक्ष ।

अश्वरोहका–[सं०] } असगंध । अश्वगंधा ।
अश्वरोहा–[सं०] }

अश्ववराह–[सं०] वाराहीकंद । गेंठी ।

अश्वहन–[सं०] कनेर । करवीर ।

अश्वहा–[सं०] कनेर सफेद । श्वेत करवीर । सफेद कनैल ।

अश्वांतक–[सं०] १. कनेर सफेद । श्वेत करवीर । २. कुलथी । कुलत्था ।

अश्वा–[सं०] १. घोड़ी । घोटकी । २. अजमोदा । अजमोद । ३. चिचड़ा । ओंगा । अपामार्ग । ४. असगंध । अश्वगंधा । ५. इंद्रायन । इंद्रवारुणी । इनारू ।

अश्वाच–[सं०] देवसर्षप । देवसरसों ।

अश्वारि–[सं०] १. कनेर । करवीर । कनैल । २. भैंस । महिष ।

अश्वारोह–[सं०] } असगंध । अश्वगंधा ।
अश्वारोहक–[सं०] }

अश्वारोहा–[सं०] १. इंद्रायन । इंद्रवारुणी । इनारू । २. असगंध । अश्वगंधा ।

अश्वाल–[सं०] खस । उशीर ।

अश्वालु–[मरा०] इक्षुदर्भ । मीठा डाभ ।

अश्वावरोहक–[सं०] } असगंध । अश्वगंधा ।
अश्वावरोहिका–[सं०] }

अश्वासना–[सं०] १. ऋद्धि नामक औषधि । २. घोड़ी । घोटकी ।

अश्वाह्वा–[सं०] असगंध । अश्वगंधा ।

अश्वाह्वादिखुरा–[सं०] } अपराजिता सफेद । श्वेतापराजिता । सफेद कोयल ।
अश्वाह्वादिखुरी–[सं०] }

अश्विनी–[सं०] जटामांसी । बालछड़ ।

अश्विभेषज–[सं०] मेढ़ासिंगी । मेषशृंगी ।

अश्वी–[सं०] घोड़ी । घोटकी ।

अश्वेता–[सं०] १. अपराजिता नीली । कृष्णापराजिता । नीली कोयल । २. अतीस । अतिविषा । ३. गंभारी । गम्हार ।

अषनी–[हिं०] अखनी । तक्रमांस । यखनी ।

अष्टक्षीर–[सं०] आठ जीवों का दूध । यथा—बकरी, भेंड़ी, गाय, स्त्री, घोड़ी, ऊँटनी, हथिनी और भैंस इन आठों का दूध ।

अष्टगंध–[सं०] आठ सुगंधित पदार्थ । यथा—कपूर, चंदन, नागरमोथा, केसर, देवदारु, गोरोचन, नागकेसर और खस ।

अष्टधातु–[सं०] १. सोना, चाँदी, ताँबा, लोहा, जस्ता, पारा, राँगा और सीसा । २. सोना, चाँदी, काँसा, ताँबा, सीसा, राँगा, लोहा और पीतल ।

अष्टपदी–[सं०] बेला । भद्रवल्ली ।

अष्टपात–[सं०] } मकड़ी । ऊर्णनाभि ।
अष्टपाद–[सं०] }

अष्टपादिका–[सं०] १. बेला । शरद्मल्लिका । २. आस्फोता । हापरमाली ।

अष्टमंगल घृत–[सं०] घृत-विशेष । वच, कुट, सरसों, अनंतमूल, सेंधा नमक, पीपल और ब्राह्मी के कल्क से सिद्ध किया हुआ घृत ।

गुण—इसको जो बालक प्रति दिन पीता है, उसकी मेधाशक्ति की वृद्धि होती है और स्मरण-शक्ति प्रबल होती है ।

अष्टमवैद्य–[सं०] बूई । कपूरमधुरा ।

अष्टमान–[सं०] कालिंगमान तौल जिसका परिमाण एक कुडव है । १६ तोले या ३२ तोले ।

अष्टमिका–[सं०] कालिंगमान तौल जिसका परिमाण एक शुक्ति है । २ तोले या ४ तोले ।

अष्टमी–[सं०] क्षीरकाकोली । पयस्या ।

अष्टमूत्र–[सं०] आठ प्रकार के जीवों का मूत्र; यथा—बकरी, भेड़ी, गाय, भैंस, घोड़ी, हथनी, गधी और ऊँटनी का मूत्र ।

अष्टमौक्तिक स्थान–[सं०] मोती के रहने की आठ जगहें; यथा—शंख, हाथी, साँप, मछली, मेघ, सूअर, बाँस और सीपी ।

अष्टलोहक–[सं०] } आठ धातुएँ । अष्टलौह धातु; यथा–सोना, चाँदी, राँगा, ताँबा, सीसा, कांत लोहा, इस्पात लोहा और फौलाद लोहा ।
अष्टलौहक–[सं०] }

अष्टवर्ग–[सं०] औषधाष्टक; यथा—जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि, काकोली और क्षीरकाकोली ।

गुण—शीतल, मधुर, पुष्टिकारक, वीर्य्यवर्द्धक, भारी, टूटे हुए स्थान को जोड़नेवाला, कामजनक, कफवर्द्धक, बलकारी तथा वात, रक्त, पित्त, प्यास, दाह, ज्वर, प्रमेह और क्षय रोग का नाश करनेवाला है ।

प्रयोग—यह राजाओं को भी दुष्प्राप्य है, इसलिये इसके अभाव में इसके समान गुणकारी ओषधियाँ लेनी चाहिएँ; यथा–सतावर, बिदारीकंद, असगंध और वाराहीकंद ।

अष्टवर्ग-प्रतिनिधि–[सं०] अष्टवर्ग के अभाव में काम में आनेवाली ओषधियाँ; यथा–मेदा और महामेदा के अभाव में सतावर, जीवक और ऋषभक के अभाव में बिदारीकंद, काकोली और क्षीर काकोली के अभाव में असगंध तथा ऋद्धि और वृद्धि के अभाव में वाराहीकंद ।

अष्टांग–[सं०] आयुर्वेद के आठ अंग; यथा–शल्य, शलाका, कायचिकित्सा, भूतविद्या, कौमारभृत्य, अगद तंत्र, रसायन और बाजीकरण ।

अष्टादश धान्य–[सं०] अठारह प्रकार के धान्य (अन्न); यथा–मटर, गेहूँ, अरहर, जौ, ज्वार, शालि धान्य, चना, मसूर, तीसी, मूँग, कुलथी, तिल, साँवाँ, उड़द, राजमाष, केराव, कँगनी और मडुआ ।

अश्मन्तक

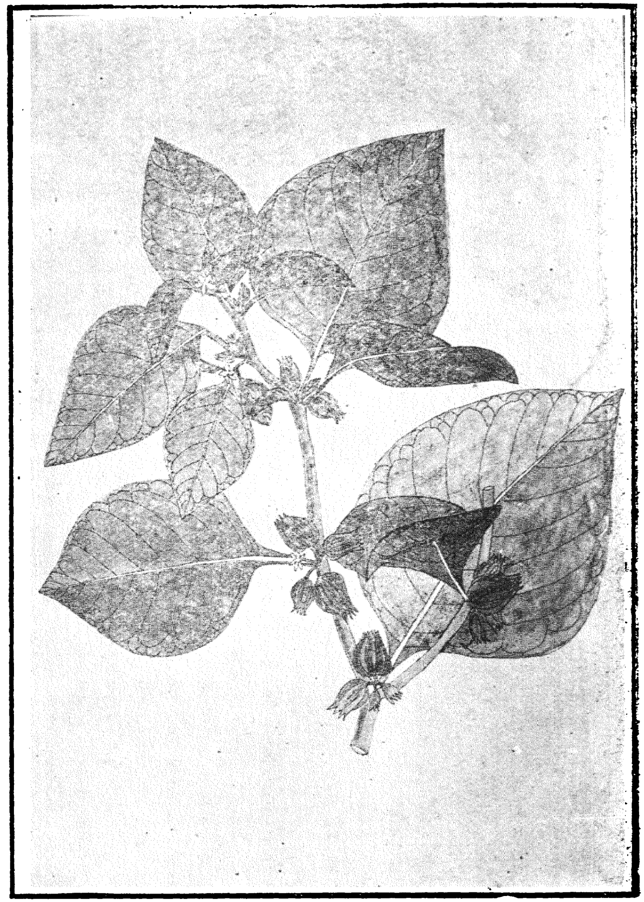

असगंध

[पृ० ९०]

अष्टापद–[सं०] १. धतूरा । धुस्तूर वृक्ष । धतूर । २. सोना । स्वर्णधातु । ३. मकड़ी । ऊर्णनाभि । ४. शेर । महासिंह ।

अष्टापदी–[सं०] चंद्रमल्लिका (फूल) ।

अष्टाम्लवर्ग–[सं०] आठ खट्टी ओषधियाँ; यथा–जँभीरी नींबू, बिजौरा नींबू, बड़ा जँभीरी नींबू, महादा, चागेरी, इमली, बेर और करौंदा ।

अष्ठिला–[सं०] } वात-व्याधि-विशेष । इसमें मूत्राशय में अफरा होने के कारण मल-मूत्र रुक जाता है और वस्ति में पीड़ा होती है ।
अष्ठिलिका–[सं०]
अष्ठिली–[सं०]

अष्ठीवात–[सं०] } जानु । घुटना । घुट्टी ।
अष्ठीवान–[सं०]

असकील–[अ०] बनप्याज । वनपलाडु । जंगली प्याज ।

असगंद–[हिं०] } असगंध । नागौरी असगंध । अकसन । [सं०] अश्वगंधा । हयाह्वया । वराहकर्णी । वरदा । बलदा । कुष्ठगंधिनी । तथा अश्ववाचक शब्दों और गंधवाचक शब्दों के यौगिक । [बँ०] अश्वगंधा । असुगधा । [मरा०] ढोरगंज । असगंध । [गु०] आसोंध । घोड़ा आकुन । घोड़ा आसुन । सांढिमाना पोटपा । आसुन । घोड़ा आसोन । आचंद्य । आखसंधु । [मा०] आसगंध । [क०] आसोद । अगवेरू । हिरेवेरू । अमाकीरे । हिरेमहिनवेरू । [कच्छी०] असुढ़ं । [ते०] पेन्नेरु गड्डु । पिल्ली आंगा । पिल्लि आंडा । पेन्नेरू । अश्वगंधी । पिनिरू । पेनिरू । [ता०] अश्वगंडी । अमुक कुरविड्ई । [ते०] बुनेरगड्डु विच्चुलु । [मल०] अमकिट पिव्रेट । [मला०] पिवेत्ती । पिवेट्टी । [फा०] हरिमद्दु । [द०] नटी की असगंध । [सिं०] बदामन । [फ़ा०] बेहमनवर्रा । बेहमनवर्री । [लै०] Withania Somnifera Syn: Physalis Flexusa. [अं०] Winter Cherry.
असगंध–[हिं०]

यह भारतवर्ष के कुछ गरम और साधारण प्रांतों में, विशेषकर पश्चिम की ओर, अधिक पाई जाती है, किंतु बंगाल में कम देखने में आती है। यह क्षुप जाति की वनौषधि चौमासे में अधिक मिलती है और कहीं कहीं बारहों मास भी पाई जाती है। इसका क्षुप बनभंटे के समान झाड़दार २ से ५ फुट तक ऊँचा होता है और इससे उग्र गंध आती है। शाखें टेढ़ी होती हैं। पत्ते विषमवर्त्ती, १ से ४ इंच तक लंबे तथा पौन से २ इंच तक चौड़े, हरे रंग के गोलाकार होते हैं। कोमल पत्तों और शाखों पर सफेद रंग के सूक्ष्म रोएँ होते हैं। पत्ते उग्र गंध वाले और स्वाद में कड़वे तथा चरपरे होते हैं। वर्षा ऋतु के अंत और शरद् ऋतु के आरंभ में फूलता-फलता है। फूल घंटाकार, सूक्ष्म पीलापन लिए हरे रंग के होते हैं और गुच्छों में लगते हैं। फल चने अथवा चिरपोटे के फल के समान गोल, पतले छिलके के पर्दे में रहते हैं तथा पकने पर रक्तवर्ण हो जाते हैं। इनसे बनभंटे के समान छोटे छोटे बीज निकलते हैं। इसकी जड़ प्रायः ओषधि-प्रयोग में आती है। यह कुछ मोटी और पीले रंग की होती हैं और भूमि में दूर तक घुसी रहती है। इसके चारों ओर बारीक शोरी रहती है। जड़ की छाल ऊपर भूरी और अंदर से सफेद होती है। इसका स्वाद उग्र गंध-युक्त चरपराहट लिये रूक्ष होता है। जड़ को उखाड़कर सुखा लेते हैं और उसी को असगंध कहते हैं। इसका क्षुप प्रायः ४-५ वर्ष पीछे सूख जाया करता है।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—गरम, चरपरी, कड़वी, बलकारक, रसायन, कसैली, वीर्य को अत्यंत बढ़ानेवाली तथा वात, कफ, सफेद कोढ़, शोथ, क्षयरोग, आमवात, घाव, खांसी, श्वास, कृमि, विष और खुजली का नाश करनेवाली है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—तीसरे दर्जे में गरम और रूक्ष, शरीर, कमर, ओज और गर्भाशय को बलकारी तथा कास, श्वास और अवयवों के शोथ को गुणकारी तथा उष्ण प्रकृतिवाले को हानिकारक है।

दर्पनाशक—कतीरा।

प्रतिनिधि—कुट और बालछड़।

मात्रा—३ से १० माशे तक।

प्रयोग—१. इसकी जड़ प्रायः ओषधि-प्रयोग में आती है। यह बलकारी, स्वास्थ्य-सुधारक, मद्यकारक, निद्रादायक, संशोधक तथा क्षयरोग, दुर्बलता, वृद्धावस्था की निर्बलता, बालकों की क्षीणता और आमवातादि पर लाभकारी है। इसकी जड़ और पत्तों को पीसकर मसूड़े की सूजन, घाव और शोथ पर लगाने से लाभ होता है। पत्ते कड़वे और ज्वर में उपयोगी होते हैं। इसके बीजों में दूध जमाने की शक्ति होती है। वे संशोधक और निद्राकारक होते हैं तथा उनमें एक प्रकार का विष होता है। वैद्य लोग बहुत समय से खाँसी, श्वास, क्षयरोग, वातरोग, शरीर की कृशता और वीर्य-संबंधी विकारों में इसका सादर व्यवहार करते आते हैं। डाक्टर लोग भी इसकी कई प्रकार से परीक्षा कर वैद्यों की नाईं श्वास-कासादि रोगों में इसका व्यवहार करते हैं। प्राचीन चिकित्सा-पद्धति के अनुसार इसका चूर्ण या काढ़ा खाँसी में व्यवहार किया जाता है; परंतु आजकल डाक्टरी पद्धति के अनुसार इसका एक प्रकार का शर्बत बनाया जाता है जिसको अँगरेजी में "चेरी सिरप" कहते हैं। इसके सिवा डाक्टर लोग नींद लाने के लिये उन्निद्र रोग में भी इसका प्रयोग करते हैं। वंगसेन में लिखा है कि असगंध का चूर्ण, मिस्री और घी तीनों को एक साथ मिलाकर सेवन करने से गई हुई निद्रा फिर आ जाती है। इसको खाने से अफीम के समान एक प्रकार का नशा होकर नींद आने लगती है। २. इसमें पौष्टिक गुण अधिक होने के कारण शरीर की क्षीणता में वैद्य और डाक्टर दोनों इसका अधिक प्रयोग करते हैं। यह शरीर की सब प्रकार की क्षीणता को दूर करके शरीर को पुष्ट और बलिष्ट

बनाती है। रसायन और वाजीकरण के लिये इसका चूर्ण, अवलेह, मोदक, घृतादि बनाकर सेवन किया जाता है। वीर्य-संबंधी रोग, धातुदौर्बल्य, वीर्य्यस्राव, वीर्य्य की तरलता, चंचलता आदि में घृत, दुग्धादि पौष्टिक पदार्थों के योग से बना हुआ असगंध का पाक बहुत ही गुणकारी होता है। हृदय की दुर्बलता और शरीर की क्षीणता में इसका आसव उपकारी होता है। ३. जिस प्रकार असगंध पौष्टिक गुण-सम्पन्न है, उसी प्रकार इसमें वात-नाशक शक्ति भी भरी हुई है। वात रोग में खाने और लगाने दोनों प्रकार से इसका उपयोग होता है। वातरक्त, फिरंग, उपदंश आदि रोगों में भी यह लाभकारी है। स्त्रियों के गर्भशूल या गर्भस्राव को रोकने की यह अच्छी दवा है। प्रदर रोग में भी यह उपयोगी है। स्त्रियों के आर्त्तव को शुद्ध करती और गर्भाशय की वायु को दूर करती है। ४. इसके काढ़े और कल्क के द्वारा पकाया हुआ तेल साधारण वायु की पीड़ा को दूर करता है। ५. सूजन पर इसको गोमूत्र में पीसकर लेप करना चाहिए। ६. मधुमेह और बहुमूत्र रोग में सम भाग असगंध और विधारे के चूर्ण को ४ माशे की मात्रा से दोनों समय ताजे दूध के साथ सेवन करने से लाभ होता है। ७. गंडमाला, ग्रंथि और अपची आदि पर इसके पत्तों की पुल्टिस बाँधने से फायदा होता है। ८ इसको खांड़ और मधु के साथ खाने से नष्ट हुई निद्रा ठीक हो जाती है और मनुष्य सुखपूर्वक सोता है। ९. धातुक्षीणता पर असगंध और सोंठ के सम भाग चूर्ण को गोदुग्ध के साथ सेवन करने से बहुत लाभ होता है। १०. फोड़ा शीघ्र पकाने के लिये इसके पत्तों की पुल्टिस बाँधनी चाहिए। ११. अदीठ पर, पत्तों पर एरंड का तेल चुपड़ गरम करके बाँधने से फायदा होता है। १२. बल बढ़ाने के लिये इसके चूर्ण को दूध के साथ सेवन करना चाहिए। १३. मूत्र साफ लाने के लिये इसके बीजों को शीतल जल के साथ सेवन करते हैं। १४. गठिया में इसके पंचांग का रस २॥ से ५ तोले तक की मात्रा से सेवन करने से लाभ होता है। १५. वातविकार पर इसके पाक का सेवन हितकारी है। १६. राजयक्ष्मा में इसके चूर्ण को अडूसे के काढ़े के साथ सेवन करने से फायदा होता है। १७. वृद्धावस्था की निर्बलता पर इसके चूर्ण में बंग-भस्म मिलाकर गरम दूध के साथ सेवन करना चाहिए। १८. रुधिर शुद्ध करने के लिये सम भाग असगंध और चोबचीनी के चूर्ण को मधु के साथ सेवन करने से लाभ होता है। १९. पुरुषार्थ बढ़ाने के लिये मूसली आदि धातुवर्द्धक औषधियों के साथ इसका सेवन करना गुणकारी है। २०. शरीर की पुष्टि अथवा शरीर मोटा करने के लिये इसके चूर्ण का सेवन कर अंगूर खाना अथवा अंगूर का रस पीना चाहिए। २१. इसके बीजों को दूध के साथ सेवन करने से नष्ट हुई निद्रा आने लगती है। २२. इसको शीतल जल के साथ सेवन करने से मूत्र की वृद्धि होती है। २३. गठिया पर इसका लेप करना लाभकारी है। २४. वातरक्त में असगंध और चोबचीनी के काढ़े का पान करना गुणकारी है। २५. हृदय की वातज पीड़ा में असगंध और बहेड़े के चूर्ण को गुड़ के साथ गोली बनाकर गरम जल के साथ सेवन करने से लाभ होता है। २६. कटिशूल पर इसके चूर्ण को घृत और मिस्री के साथ सेवन करने से लाभ होता है। २७. गर्भाधान के लिये इसके काढ़े में पकाया हुआ घृत मासिक धर्म से शुद्ध हुई स्त्री को पिलाना चाहिए। २८. बल-बुद्धि बढ़ाने और शरीर पुष्ट करने के लिये एक भाग असगंध का कल्क और आठ भाग गोदुग्ध में एक भाग गोघृत को सिद्ध कर पान करना चाहिए। २९. नहरुए पर इसकी छाल को तेल में पीसकर लेप करने से फायदा होता है। ३०. गर्भाधान के लिये इसके चूर्ण को ३॥ से ७ माशे तक की मात्रा से रजोदर्शन के पूर्व से ही दूध के साथ सेवन करना और दूध-चावल का पथ्य देना चाहिए। ३१. रक्तप्रदर पर इसके चूर्ण में सम भाग मिस्री मिलाकर १ तोले की मात्रा से जल के साथ सेवन करने से लाभ होता है। ३२. असगंध के योग से नाना प्रकार की पुष्टिकर औषधियाँ, आसव, अरिष्टादि बनते हैं।

असगंधबाला–[सं०] } तगर। तगरपादुका।
असगंधवाला–[सं०] }

असगे–[क०] तीसी। अतसी। अलसी।

असजार–[अ०] सिरस। शिरीष वृक्ष।

असद–[अ०] शेर। व्याघ्र। बाघ।

असन–[सं०] १. बिजैसार। पीतशाल। २. बिजैसार नं० १। ३. बिजैसार नं० २।

असनपर्णिका–[सं०] अपराजिता। विष्णुक्रांता। कोयल लता।

असनपर्णी–[सं०] १. बिजैसार। पीतशाल वृक्ष। २. अपराजिता। विष्णुक्रांता। कोयल लता।

असनान–[यू०] अश्नान। गासूल।

असनान-उल-ज़ायदा–[अ०] खल्लीवर्द्धन। दाँत के ऊपर दाँत जमना।

असनाने–[फा०] मोरशिखा। मयूरशिखा।

असनो–[मु०, गु०] एकवीर। असाण।

असपरग–[हिं०] स्पृक्का। असबरग।

असफ़ाक–[फा०] त्रायमान। त्रायमाणा।

असफ़ार–[अ०] गौरैया पक्षी। चटक।

असबरग–[हिं०] स्पृक्का। पिंडी शाक।

असबेअउल्‌सफर–[अ०] हथजोड़ी। हत्थाजोड़ा। करजोरी।

असमद–[अ०] सुरमा। स्रोतोजन।

असमरिघ्न–[सं०] बरुन। बरना गाछ।

असरंज–[फा०] सिंदूर। सेंदुर।

असरु–[सं०] कुकुरौंदा। कुक्कुद्रु।
असल–१. [स०] लोहा। लौह धातु। २. [अ०] मधु। मध। शहद।
असलक–[अ०] १. सँभालू। सिंदुवार। २. निगुंडी। नील सिंदुवार।
असल राई–[हि०] राई काली। राजिका।
असलान–[फा०] मोरशिखा। मयूरशिखा।
असलुअ–[अ०] सँभालू। सिंदुवार।
असलुम् सुस् मुकस्सरब्ब सूस–[अ०] मुलेठी। यष्टि-मधु। मुलेठी।
असलुल-एजि-यानज–[अ०] सौंफ। मिश्रेया। मधुरिका।
असलुल्-काजी–[अ०] केवड़े की जड़। केतकीमूल।
असलुल् किब्र–[अ०] किब्र की जड़।
असलुल् खतमी–[अ०] खतमी की जड़।
असलुल्-नहल–[अ०] मधु। शहद।
असलुल् फिल्फिल–[अ०] पीपलामूल। पिप्पलीमूल।
असलुल् रजियंज–[अ०] सौंफ की जड़। मधुरिकामूल।
असलुल्लास–[अ०] हब्बुल्लास की जड़।
असलुस्सूस–[अ०] मुलेठी। यष्टिमधु।
असलेलुबनी–[अ०] शिलारस। सिल्हक।
असवद–[अ०] निगुंडी। नील सिंदुवार।
असवरग–[हिं०] स्पृक्का। पिंडी शाक।
असही–[हिं०] कंघी। ककही। अतिबला।
असाइटस–[अं०] जलोदर। जलंधर।
असाणा–[मरा०] १. बिजैसार। असन वृक्ष। २. [मरा०, मा०] एकवीर। एकवीरु वृक्ष।
असाना–[मा०, कच्छ०] } एकवीर। एकलकंटो।
असानो–[मु०, गु०] }
असाब-एल-फ़ुतियात–[अ०] करनफल-इ-बुस्तानी।
असार–[स०] १. काष्ठागर। काष्ठागुरु। २. अगर। अगुरु। ३. एरंड। अरंड वृक्ष। ४. जमालगोटा। जैपाल।
असारन–[कु०] तगर नं० १। तगरपादुका।
असारा–[सं०] केला। कदलीवृक्ष।
असारुं–[फा०] सुगधबाला। बालक।
असारून–[फा०] १. तगर। तगरपादुका। २. तगर नं० १।
असालूं–[मरा०] चनसुर। चंद्रशूर।
असिकि–[ते०] बरुन। वरुण वृक्ष।
असित–[सं०] १. धौ। धव वृक्ष। नंदीतरु। २. काष्ठागर। काष्ठागुरु।
असितजफल–[सं०] नारियल। नारिकेल।
असिततिल–[स०] तिल। तिल्ली।
असितद्रुम–[सं०] ताड़। ताल वृक्ष।
असितपल्लवा–[स०] जामुन छोटी। क्षुद्रजंबु। कठजामुन।
असितफल–[स०] मधुनारियल। मधुनारिकेल वृक्ष।
असितवलमोटा–[सं०] जैंती। कृष्ण जयंती वृक्ष। जैंत।
असितवल्ली–[स०] दूब नीली। नीलदूर्वा।
असितवेत्र–[स०] अनंतमूल काली। श्यामा लता। काली अनंतमूल।
असितसार–[सं०] } तेंदू। तिंदुक। गाब।
असितसारक–[सं०] }
असितांजनी–[स०] काली कपास। कालांजनी।
असिता–[स०] नील। नीली वृक्ष।
असितानन–[स०] बंदर। कपि। वानर।
असिताभ्रशेखर–[सं०] नील। नीली वृक्ष।
असिता लता–[स०] १. दूब नीली। नीलदूर्वा। २. अनंत-मूल काली। श्यामा लता। काली अनंतमूल।
असितालु–[स०] नील आलु। नीलालु।
असितोत्पल–[स०] कमल नीला। नीलोत्पल।
असिदंत–[स०] १. मछली। मत्स्य। २. घड़ियाल। मगर-मच्छ।
असिदंष्ट्र–[स०] १. मछली। मत्स्य। २. घड़ियाल। मगर।
असिदंष्ट्रक–[स०] घड़ियाल। मगर।
असिधेनु–[स०] } पालक। पालंक शाक।
असिधेनुका–[स०] }
असिपत्र–[स०] १. ईख। इक्षु। ऊख। २. थूहर। सेहुंड वृक्ष। सीज। ३. गुंड तृण। गुंडा घास। ४ दाभ। दर्भ।
असिपत्रतृण–[स०] गुंड तृण। गुंडा घास।
असिपुच्छ–[स०] } जलचर। जल में रहनेवाले जीव।
असिपुच्छक–[स०] }
असिमेद–[स०] १. दुर्गंध खैर। विट् खदिर। बबुरी। २. खैर। खदिर।
असीतक–[स०] काष्ठागर। काष्ठागुरु।
असीतका–[स०] अपराजिता नीली। विष्णुक्रांता।
असुंद्री–[गु०] अश्मंतक। आवुटा।
असुगंधा–[बं०] असगंध। अश्वगंधा।
असुग्रं–[हिं०] हींग। हिंगु।
असुद–[गु०] असगंध। अश्वगंधा।
असुपाल–[मु०] अशोकभेद। देवदारु।
असुर–[स०] १. पांगा नमक। सामुद्र लवण। २. देवदारु। देवदार। ३. [कश्मी०] राई। राजिका।
असुरणता–[स०] सौंफ। मिश्रेया।
असुरसा–[स०] बबेरी। वनतुलसी।
असुरा–[स०] १. हलदी। हरिद्रा। २. रात्रि। रजनी। रात।

असुराह्व–[सं०] } कांसा । कांस्य धातु ।
असुराह्वा–[सं०] }

असुरी–[सं०] राई । राजिका ।

असुरु–[ने०] तगर फूल । तगर ।

असूखत–[आसा०] आच्छुक नं० २ ।

असृक–[सं०] १. स्पृक्का । असबरग । २. केसर । कुंकुम । जाफरान । ३. रुधिर । लहू । खून ।

असृकप–[सं०] } जोंक । जलायुका । जलौका ।
असृकपा–[सं०] }

असृगुत्थ–[सं०] } केसर । कुंकुम । जाफरान ।
असृज–[सं०] }

असृण–[सं०] सोनगेरू । स्वर्णगैरिक ।

असृमवेद–[सं०] बूई । कपूरमधुरा ।

असेक–[कट०] अशोक । ताम्रपल्लव ।

असेटो–[मु०] आच्छुक नं० १ ।

असेलियो–[गु०] चनसुर । चंद्रशूर ।

असोक–[हिं०] १. अशोक । हेमपुष्प । २. [हिं०, मु०, ते० खा०] अशोकभेद । देवदार ।

असोकम–[ते०] } अशोकभेद । देवदारु । अशोक ।
असोका–[मु०] }

असोग–[हिं०] } अशोक । ताम्रपल्लव ।
असोगि–[हिं०] }

असोपुलर–[मु०] अशोक भेद । देवदार ।

असौंद्रा–[हि०] तिनिश नं० २ ।

अस्कपन्चा–[हिं०] इस्कपेचाँ । अस्कपेचा ।

अस्करतेजन–[सं०] } बाँस । वंश । तृणध्वज ।
अस्करतेजना–[सं०] }

अस्कील वसलुल् फार–[फा०] प्याज । पलांडु ।

अस्तमती–[सं०] सरिवन । शालिपर्णी ।

अस्तर–[फा०] खच्चर । अतिभारग ।

अस्तरखार–[फा०] ऊँटकटीरा । उष्ट्रकंट ।

अस्तिसंहारी–[सं०] हड़जोड़ी । अस्थिसंहार ।

अस्त्र–[गौड०] कचनार सफेद । श्वेत कांचन वृक्ष ।

अस्त्रजित–[सं०] कवाटचक्र । कवाटवक्र । कंटारिया । वेटुया ।

अस्था–[हिं०] कचनार सफेद । श्वेत कांचनार वृक्ष । सफेद कचनार ।

अस्थि–[सं०] हड्डी । हाड़ ।

अस्थिकी–[सं०] काकोली । काउली ।

अस्थिफल–[सं०] कटहर । पनस वृक्ष ।

अस्थिभंग–[सं०] काडभग्न । भग्न रोग भेद । हड्डी का टूटना ।

अस्थिभक्ष–[सं०] १. कुत्ता । श्वान । २. शृगाल । सियार । गीदड़ ।

अस्थिभग्न–[सं०] हड्डी का टूटना । भग्न रोग भेद । कांडभग्न ।

अस्थियुक्–[सं०] हड़जोड़ी । अस्थिसंहारी । हड़संहारी ।

अस्थिरगंधिक–[सं०] हिंताल ।

अस्थिशृंखला–[सं०] }
अस्थिशृंखलिका–[सं०] }
अस्थिशृंखली–[सं०] } हड़जोड़ी । हड़संकरी । हड़जोड़वा ।
अस्थिसंघार–[हिं०] }

अस्थिसंधानकर–[सं०] लहसुन । लशुन ।

अस्थिसंधानजनी–[सं०] } हड़जोड़ी । अस्थिसंहारी ।
अस्थिसंधिक–[सं०] }

अस्थिसंवर्धन–[सं०] राल । धूना ।

अस्थिसंहति–[सं०] }
अस्थिसंहार–[सं०] }
अस्थिसंहारक–[सं०] } हड़जोड़ी । हरसंकरी । हड़जोड़वा ।
अस्थिसंहारिका–[सं०] } अस्थिशृंखला ।
अस्थिसंहारी–[सं०] }
अस्थिसंहृत–[सं०] }

अस्नान–[यू०] असनान नाम की यूनानी बूटी जिससे धोबी कपड़े साफ करते हैं ।

अस्निग्धदारु–[सं०] } देवदारु चिकना । स्निग्ध देवदारु ।
अस्निग्धदारुक–[सं०] } चिकना देवदार ।

अस्पंद–[यू०] सिताब । सर्पदंष्ट्रा । इस्पंद ।

अस्प–[फा०] घोड़ा । घोटक । अश्व ।

अस्पगोल–[यू०] ईशबगोल । यशबगोल ।

अस्पर्क–[हि०] स्पृक्का नं० २ । पिंडी शाक ।

अस्पर्शा–[सं०] अमरबेल । आकाशवल्ली ।

अस्पानाख–[फा०] पालक । पालंक शाक ।

अस्पाल–[बं०] अशोक । ताम्रपल्लव ।

अस्पेदाज–[अ०] सफेदा । सफेदा काशगरी ।

अस्फानाख–[फा०] पालक । पालंक शाक ।

अस्फिदाज़–[यू०] } सफेदा । श्वेतनाग । सफेदा काशगरी ।
अस्फेदाज़–[अ०] }

अस्फोत–[सं०] कचनार । कांचनवृक्ष ।

अस्फोता–[हि०] आस्फोता । हापरमाली ।

अस्बंद–[हिं०] सिताब । सर्पदंष्ट्रा । हरमल ।

अस्थिरायु–[सं०] सेमल । शाल्मलि वृक्ष ।

अस्र–[सं०] १. रुधिर । लहू । खून । २. केश । बाल । ३. केसर । कुंकुम । जाफरान । ४. आँसू । नयन-जल ।

अस्रखदिर–[सं०] खैर (लाल) । रक्त खदिर । लाल खैर ।

अस्रगंधा–[सं०] १. कपूर । कर्पूर । काफूर । २. हलदी । हरिद्रा ।

अस्रघ्न–[सं०] तेजबल । तेजोवती ।

अस्त्रज-[सं०] मांस। कलिया।
अस्त्रप-[सं०] जोंक। जलायुका। जलौका।
अस्त्रपत्र-[सं०]
अस्त्रपत्रक-[सं०] } भिंडी। भिंडा। रामतरोई।
अस्त्रपा-[सं०] जोंक। जलौका।
अस्त्रफला-[सं०]
अस्त्रफली-[सं०] } शालई। शल्लकी वृक्ष। सलई।
अस्त्रबिंदुच्छदा-[सं०] लक्ष्मणा। लक्ष्मणाकंद।
अस्त्रयष्टिका-[सं०] मजीठ। मंजिष्ठा।
अस्त्ररेणु-[सं०] सिंदूर। सेंदुर।
अस्त्ररोधिका-[सं०]
अस्त्ररोधिनी-[सं०] } जलालू। लज्जावंती। लजौनी। छुईमुई।
अस्त्रविंदुच्छदा-[सं०] लक्ष्मणा। लक्ष्मणाकंद।
अस्त्रार्जक-[सं०] तुलसी। रक्त तुलसी। श्वेत तुलसी।
अस्त्राह्व-[सं०] केसर। कुंकुम। जाफरान।
अस्लहब्बुस्सलातीन-[अ०] दंती। दात्यूनी।
अस्लुस्सूस-[अ०] मुलेठी। यष्टिमधु।
अस्लुस्सोसन-[अ०] सोसन की जड़।
अस्लेलुब्नी-[अ०] शिलारस। सिल्हक।
अस्वप्न-[सं०] निद्रानाश। अनिद्रा।
अस्वरथम-[ता०] पीपल। अश्वत्थ वृक्ष।
अस्वल-[सं०] ऊपल तृण। ऊखल घास।
अस्वली-[मरा०] शतावर। शतावरी।
अस्वत्त-[खा०] पीपल। अश्वत्थ वृक्ष।
अस्सरसोना-[हिं०]
अस्सरसौना-[हिं०] } सोनापाठा। श्योनाक वृक्ष। अरलु।
अस्सालिया-[मु०] चनसुर। चंद्रशूर।
अस्सुमार-[गु०] कोसम। कोसाम्र।
अस्सोधि-[ता०] अशोक भेद। देवदारु।
अहउना-[सथा०] आक। अर्क वृक्ष।
अहतुनाकुलरहम-[अ०] वातगुल्म। वायुगोला नामक रोग।
अहत्ति-[द्रा०] अगस्त। मुनिद्रुम।
अहन-[फा०] लोहा। लौह।
अहरदक-[सं०] गिद्ध। गृध्र पक्षी।
अहरु कट्टइ-[द्रा०]
अहरुकट्टे-[द्रा०] } अगर। अगरु। अगुरु।
अहर्पत्र-[सं०] मांस। गोश्त।
अहर्पति-[सं०]
अहर्बांधव-[सं०]
अहर्मणि-[सं०] } आक। अर्कवृक्ष। मदार। अकवन।
अहलद-[खा०] बड़। वट वृक्ष।

अहलीज अस्फर-[अ०]
अहलीज अस्वद-[अ०]
अहलीज-[अ०] } हरीतकी। हड़। हर।
अहलु-[सं०] बंदा नं० ५। बंदाक।
अहस्कर-[सं०]
अहस्पति-[सं०] } आक। अर्कवृक्ष। मदार।
अहार-[हिं०] भोजन। आहार।
अहालिब-[मरा०]
अहालिम-[हिं०]
अहालिव-[मु०]
अहालीब-[मरा०] } चनसुर। चंद्रशूर। हालों।
अहिंस्रा-[सं०] हंस। कंटकपाली वृक्ष।
अहि-[सं०] १. सीसा। सीसक धातु। नाग। २. अफीम अहिफेन। ३. थूहर। वज्री वृक्ष। सीज। ४. साँप। सर्प।
अहिक-[सं०]
अहिका-[सं०] } सेमल। शाल्मलि वृक्ष। सेमर।
अहिकांड-[सं०]
अहिकांत-[सं०] } वायु। हवा। पवन।
अहिकुटि-[सं०] लवा। भरद्वाज पक्षी।
अहिच्छत्रा-[सं०] सौंफ। मिश्रेया।
अहिगंधफला-[सं०] सलई। शल्लकी वृक्ष।
अहिगंधा-[सं०] नकुलकंद। नाकुली।
अहिच्छत्र-[सं०] मेढ़ासिंगी। मेषशृंगी।
अहिच्छत्रा-[सं०] १. सौंफ। शताह्वा। २. चीनी। शर्करा। ३. मेढ़ासिंगी। मेषशृंगी।
अहिजिह्विका-[सं०] सतावर बड़ी। महाशतावरी। बड़ी सतावर।
अहित्थ-[सं०] वनमेथी। वनमेथिका।
अहिद्विट्-[सं०] १. मोर। मयूर पक्षी। २ नेवला। नकुल।
अहिनिर्मोक-[सं०] साँप की केंचली। सर्पनिर्मोक। केंचुल।
अहिपर्णी-[सं०] पिठवन। पृश्निपर्णी।
अहिपुष्प-[सं०] नागकेसर। नागपुष्प।
अहिपूतन-[सं०] बालरोग-विशेष। मलमूत्र से सने हुए बालक की गुदा को न धोने से, पसीना आने से अथवा स्नान न कराने से रुधिर और कफ दूषित होकर खुजली उत्पन्न करते हैं, फिर खुजलाने से तत्काल फुंसी उत्पन्न हो जाती है और उनमें से चेप निकलता है। जब वे सब फुंसियाँ एकत्र होकर छत्ते की तरह हो जाती हैं, तब यह भयंकर रोग अहिपूतन कहलाता है।
अहिफल-[सं०]
अहिफला-[सं०] } चिचड़ा। चिचिंडा।

अहिफेण–[सं०]
अहिफेन–[सं०]
अहिफेनक–[सं०] } अफीम। अफयून।

अहिफेनबीज–[सं०] पोस्तदाना। खसखस।

अहिभज–[सं०] १. गरुड़ पक्षी। २. मोर। मयूर पक्षी। ३. नेवला। नकुल। न्योला।

अहिभयदा–[सं०] भुइँ आँवला। भूम्यामलकी।

अहिभुक्–[सं०] १ मोर। मयूर पक्षी। २. नकुलकंद। नाकुली। रास्नाभेद।

अहिभुज्–[सं०]
अहिमर्दनी–[सं०] } नकुलकंद। नाकुली। हरकाई चंदा।

अहिमार–[सं०]
अहिमारक–[सं०]
अहिमेद–[सं०]
अहिमेदक–[सं०] } दुर्गंध खैर। विट्खदिर। बबुरी।

अहिरावन-महिरावन–[मु०] गोरखपान नं० १।

अहिरिपु–[सं०] मोर। मयूर पक्षी।

अहिरु–[मरा०] भीरु नाम की मछली। मत्स्य विशेष।

अहिरुकट्टई–[द्रा०]
अहिरुकट्टै–[द्रा०]
अहिलकट्टे–[द्रा०] } अगर। अगरु।

अहिलता–[सं०] १. नकुलकंद। सर्पलता। अहिविषापहा। २. पान। तांबूल। नागरवेल।

अहिलोकिका–[सं०] भुइँ आँवला। भूम्यामलकी। पाताल आँवला।

अहिल्या–[सं०] वनमेथी। वनमेथिका।

अहिवल्ली–[सं०] पान। तांबूल।

अहिविषापहा–[सं०] नकुलकंद। नाकुली।

अहींद्र–[सं०] अनंतमूल। शारिवा।

अहीदीप्य–[सं०] सांप दोमुखा। द्विमुख सर्प। दो मुख-वाला सांप।

अहीरणी–[सं०] सांप दोमुखा। द्विमुख सर्प। दो मुख-वाला सांप।

अहुअन–[खा०] धाराकदंब। केलिकदंब।

अहेरु–[सं०] सतावर। शतावरी।

अहेरा–[सिं०] चनसुर। चंद्रशूर।

अह्लला–[सं०] भिलावाँ। भल्लातक वृक्ष।

आ

आँककई–[मरा०] कंघी। अतिबला। ककहिया।

आँकड–[बं०] ढेरा। अंकोट। ढेला।

आँकड़ा–[गु०]
आँकडो–[गु०] } आक लाल। रक्तार्क। लाल आक। अकवन।

आँकनादि–[बं०] पाठा। पाढ़ी।

आँकरा–[गु०] आक लाल। रक्तार्क। लाल आक। अकवन।

आँकुल–[मरा०]
आँकोड–[बं०] } ढेरा। अंकोट वृक्ष। अंकोल।

आँक्मे–[अ०] ओंगा। अपामार्ग। चिचड़ा। लटजीरा।

आँख–[हिं०] नेत्र। नयन। चक्षु।

आँख आना–[हिं०] अभिष्यंद। सर्वाक्षि रोग। नेत्ररोग विशेष।

आँख-कलम–[हिं०] वृक्षों के उत्पन्न करने के लिये कलम लगाने की एक रीति। वृक्षों को लगाने के लिये उनके बीज अथवा कोई अंश लेकर पौधे तथा वृक्ष तैयार किए जाते हैं। अंशों के आधार पर लगनेवाले वृक्षों में "कलम" प्रधान है। कलम करने की कई रीतियाँ हैं। उनमें एक "आँख कलम" भी है जिसकी क्रिया नीचे लिखी जाती है।

जिन वृक्षों के बीज बहुत कठोर होते हैं, जैसे सप्तालुक, बेर इत्यादि, उन्हीं से आँख-कलम काटना अच्छा होता है। आँख-कलम और गाँठ-कलम पर्यायवाची शब्द हैं। वृक्षों की गाँठ, जो आँख के समान होती है और जिससे शाखा निकलने की संभावना होती है, उसी को आँख कहते हैं और उसी को उठा कर दूसरे पौधों पर रोपण करने को आँख-कलम करना कहते हैं।

आँख-कलम में यह भी एक सुभीता है कि प्रत्येक आँख से एक स्वतंत्र वृक्ष हो सकता है और एक वृक्ष पर अनेक वृक्षों की आँखें लगाने से वह वृक्ष अनेक प्रकार के फल दे सकता है जिसे देख कर लोग आश्चर्य कर सकते हैं।

जिन दिनों वृक्षों के फूलने अथवा नए पत्ते लेने का समय रहता है, उन दिनों वृक्षों की शिरा प्रफुल्लित रहती है और छाल भी प्रायः वृक्षों से स्वतंत्र रहती है। ऐसे ही समय फागुन से लेकर आश्विन तक (बैसाख और जेठ को छोड़कर) आँख-कलम करना अच्छा है।

छोटे बड़े सभी वृक्षों में आँख-कलम बैठाई जा सकती है। जिस पौधे पर आँख-कलम बैठाना हो, उसे लगभग एक वर्ष का होना चाहिए; और जिस डाली पर उसे बैठाना हो, वह अधपकी होनी

चाहिए। इस प्रकार डाली और दूसरे वृक्ष की पुष्ट अधपकी आँख को निश्चय कर एक बहुत तेज चाकू से, डाली को हिलाकर, आँख को वृक्ष पर से लिखने की कलम के समान, आधा इंच नीचे से छाल तथा कुछ काष्ठ सहित उठाकर, भींगे कपड़े या जल-युक्त पात्र में रख, उस नियत किए हुए बीजवाले पौधे के पास आकर निश्चय की हुई डाली की छाल को इस प्रकार चाकू से उठावे, जिसमें उपर्युक्त उठी हुई आँख ठीक बैठ जाय और छाल भी पृथक् न हो। उस आँख को उसमें बैठा, उस छाल को भी बैठाई हुई आँख के अगल-बगल काष्ठरहित खाली स्थान में आँख की छाल से सटाकर कोमल बंधन (सूत, सन, पटुआ इत्यादि) से अच्छी तरह इस प्रकार बाँधे जिसमें आँख बंधन से ढँक न जाय। फिर जोड़-कलम का मरहम लगाकर कड़ी धूप से बचाना चाहिए और उचित रक्षा भी करते रहना चाहिए।

आँख दुखना-[हि०] } सर्वाक्षो रोग। अभिष्यंद रोग।
आँखदुखनी रोग-[हि०] } नेत्ररोग-विशेष।

आंख्यनुभरण-[गु०] बनकुलथी। कुलत्था। जंगली कुलथी।

आंख्यफुटामणी-[गु०] परवल कड़वा। तिक्त पटोल। तीता परवल।

आँगार-[बं०] कोयला। अंगार।

आंगिक-[म०] पीपल। अश्वत्थ वृक्ष।

आँचगाछ-[बं०] आच्छुक। रंजनद्रु।

आँची-[कच्छ०] नरसल। नरकट।

आँजन-[हि०] सुरमा। स्रोतोंजन। अंजन।

आंजिनेय-[स०] अञ्जनी नामक जंतु।

आंजीर-[बं०] अंजीर। काकोदुंबरिका।

आँड़-[हि०] अंडकोष। बैजा।

आंडु-[ते०] कुंदुरु। गुंदबरोसा।

आँत-[हि०] अँतड़ी। पचौनी।

आँतमूल-[हि०] अंतमल। जंगली-पिकवान। [बं०] आँतोमूल। अंतोमूल। [मु०] पितम्री। खराकी रासना। [ता०] नाच चुरुप्पान। नेपलई। पेयपपलइ। [ते०] वेरीपाला। कुक्कपाल। [मला०] वल्लिपाल। [उ०] मेन्दी। [मरा०] पित्तकारी। [खा०] अदुमुहड। [लै०] Tylophora Asthmatica. Syn: Asclepias Asthmatica.

उत्तर और पूरब बंगाल, आसाम, कछार, चटगाँव और दक्खिन प्रायद्वीप में यह पाया जाता है।

यह लता जाति की वनस्पति वर्षजीवी होती है। जड़ अनेक शोरियोंवाली, लंबी और गूदेदार होती है। डंठल पतला, बहुत लंबा तथा वृक्ष की डालियों से खूब लिपटनेवाला और सूक्ष्म रोएँदार होता है। इस पर शाखाएँ बहुत कम होती हैं। इसके पत्ते २ से ४ इंच तक लंबे, अनियमित चौड़े, गोलाकार, अंडाकार और अनीदार होते है तथा जड़ की ओर प्रायः गोलाकार होते हैं। इसके पत्तों की डंडी तिहाई इंच से पौन इंच तक लंबी होती है। फूल आध इंच के घेरे में, बाहर से पीलापन लिए और भीतर की ओर नीलापन लिए लाल रंग का होता है। बीजकोष छोटे-बड़े अनियमित होते हैं और बीज चौथाई इंच से तिहाई इंच तक लंबा होता है।

गुण और प्रयोग—इसके सूखे पत्ते वमनकारक, स्वेदक, कफ-निस्सारक तथा पेट के भारीपन एवं वमन योग्य रोगों में लाभकारी तथा आमातिसार और प्रतिश्याय में हितकारी हैं। यह अँगरेजी औषधि "आइपेकाकुआन्हा" (Ipecacuanha) की जगह व्यवहार में लाया जा सकता है। कारोमंडल के किनारे यह बूटी उक्त औषधि की जगह व्यवहृत होती है और लाभकारी भी सिद्ध हुई है। अधिक मात्रा में वमनकारक और कम मात्रा में कई बार देने से विरेचक है। ३-४ इंच लंबी ताजी जड़ की छाल पानी में खूब बारीक पीसकर देने से प्रायः तत्काल दस्त आने लगते हैं।

कोंकण में १-२ तोले रस वमन कराने के लिए दिया जाता है। इसको सुखाकर गोलियाँ बनाकर 'आम रक्तातिसार' आदि में देते हैं।

आँतमोड़ा-[बं०] रंगलता। ऐंठी जोईंठी। आवर्त्तनी लता।

आंतरिक्ष जल-[स०] } जल वर्षा का। आकाशसलिल।
आंतरीक्ष जल-[स०] } वर्षा का पानी।

आंतरोग-[हिं०] उदावर्त। उदर शूल।

आँतोमूल-[बं०] आंतमूल। जगली पिकवान। अंतमल।

आँदा-[बं०] अदरक। आर्द्रक। आदी।

आंदु-[ते०] कुंदुरु। गदबरोसा।

आँधीझाड़ा-[हिं०] }
आँधीझाड़ो-[मा०] } आँगा। अपामार्ग। चिचड़ा। लट-
आँधीझारा-[हिं०] } जीरा। चिचड़ी।
आँधीझारो-[मा०] }

आंध्रदेश पूग-[स०] } सुपारी आंध्र देश की। आंध्रोद्भव
आंध्राद्भव पूग-[स०] } पूग। आन्ध्र देश की सुपारी।

आंब-[हिं०] आम। आम्र। रसाल।

आंबचार-[मरा०] अमडा। आम्रातक।

आँबट-[हिं०] अमावट। आम्रवर्त।

आंबट चुका-[मरा०] } चूका। चुक्रिका। शाक।
आंबट चूका-[मरा०] }

आंबट वेल-[मरा०] अस्थिमूलपर्णी। रामचना। हुमिर्ता।

आँवडा-[हिं०] }
आँवरी-[मु०] } आँवला। आमलकी।
आँवला-[हिं०] }

आंवली-[गु०] इमली । तिंतड़ीक ।
आंववंती-[मरा०] चांगेरी । खटकल । अमता ।
आंववत्तो-[मरा०] चूका । चुक्रिका शाक ।
आंबा-[मरा०] आम्र । आम ।
आंबाडा-[मरा०] १ माचिका । मोइया । २ अमड़ा । आम्रातक ।
आंबानु झाड़-[गु०] } आम । आम्रवृक्ष । रसाल ।
आंबामुझाड़-[गु०] }
आंवारा-[हिं०] अमड़ा । आम्रातक ।
आंबाहलद-[गु०] } अँबिया हलदी । आम्रगंध हरिद्रा । आम आदा ।
आंबाहलदर-[गु०] }
आंबाहलदी-[गु०] }
आंबिलोणा-[हिं०] } चांगेरी । खटकल । अमता ।
आंबिलोना-[हिं०] }
आंबे हलद-[मा०] अंबिया हलदी । आम्र हरिद्रा । आम आदा ।
आंबो-[गु०] आम । आम्र ।
आंबो डेयकायि-[क०] अमड़ा । आम्रातक ।
आंबोत्तो-[गु०] चांगेरी । क्षुद्राम्ला ।
आंबो हलद-[म०] अँबिया हलदी । आम्रगंध हरिद्रा ।
आंब्याचे सार-[मरा०] अमावट । आम्रावर्त ।
आंभसिरु-[स०] मछली । मत्स्य ।
आँव-[हिं०] प्रवाहिका । अतिसार रोग भेद । पेचिश की बीमारी ।

जठराग्नि की दुर्बलता से आहार का सार भाग रस अच्छी तरह रुधिर में परिणत न होकर आमाशय आदि स्थानों में संचित होता है। उसी संचित और चिपचिपे पदार्थ को 'आँव' कहते हैं।

आँवला-[हिं०] आमला । आँवरा । आंवड़ा । आंवड़ा । औंडा । औंरा । [सं०] आमलक । धात्री । आमलकी । तिष्यफला । अमृता । आणोरा । अमृतफल । श्रीफल इत्यादि । [बं०] अमला । आमलकी । आम्ला । आमरो । [मरा०] आमले । आँवली । आँवल काटी । [मा०] आंवला । अँवला । [पं०] अंबुल । अँवली । आमला । [गु०] आंबला । [क०] नेल्लि । नेल्लिकाय । [ते०] उसरि काय । उसर काय । [ता०] नेल्लि । नेल्लिक्इ । [उ०] अंडा । [आसा०] अमला । आमलकी । [गा०] अंबरी । [बा०] शब्जु । जिफि पुसी । [फा०] अमेलह । आमलह । आमलाह । आमलजं । आमलज् । आमलय । [अ०] अंबली । [लै०] Phycllanthys Emblica. Syn. Emblica Officinalis. [अं०] Emblic Myrobalan.

भारतवर्ष के प्रायः सभी गर्म प्रांतों में बागी और जंगली दोनों प्रकार के वृक्ष पाए जाते हैं। हिमालय पहाड़ के नीचे जंबू से पूरब की ओर तथा दक्षिण की ओर सीलोन तक पाया जाता है। उत्तर भारत, अवध, बिहार और पूर्वीय प्रांतों मे इसकी उपज अधिक होती है।

इसका वृक्ष प्रायः मध्यमाकार का सुहावना देख पड़ता है। कहीं कहीं इसका बड़ा वृक्ष भी देखने में आता है। छाल चौथाई इंच तक मोटी, हलकी, खाकी और छिलकेदार होती है। लकड़ी किंचित् लाल रंग की और दृढ़ होती है, किंतु उसमे सारभाग नहीं होता। पत्ते इमली के पत्तों के समान तिहाई इंच से आध इंच तक लंबे और पतली पतली सीकों पर रहते हैं। फूल बारीक, हरापन लिए पीले, मंजरी में आते हैं और वे शाखाओं मे लगते है। वसंत ऋतु में यह वृक्ष फूलता है; और फूलों में से नींबू के फूल के समान मंद सुगंध आती है। फल डालियों में सटे हुए देख पड़ते हैं। ये गोल, चमकदार, ६ रेखाओं से युक्त, आध से पौन इंच तक तथा इससे भी अधिक के घेरे मे गोल, फीके पीले रंग के होते हैं। कच्ची अवस्था में हरे रंग, पकने पर हरापन लिये पीले रंग और सूखने पर काले रंग के होकर इनकी फाँके पृथक् पृथक् हो जाती है और इनकी गुठली भी फट जाती है। उनमें से त्रिकोणाकार छोटे छोटे बीज निकलते है। उन बीजों से तेल निकाला जाता है। आँवले का फल तौल में १ तोले से ४ तोले तक होता है। बनारस के आँवले बड़े होते हैं तथा दूर देशों में प्रसिद्ध हैं।

इसका वृक्ष थोड़े ही यत्न से साधारण वृक्षों की भांति उत्पन्न होता है। प्रायः बीज से इसके पौधे उत्पन्न होते हैं। दाबा कलम और काँट कलम से भी पौधे तैयार किए जाते हैं। दुम्मट मिट्टी में इसके वृक्ष अच्छे होते है।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—यह त्रिदोष-नाशक है। यथा—खट्टेपन से वात को नाश करनेवाला, मधुर और शीतलता से पित्त को शांत करनेवाला तथा रूखेपन और कसैलेपन से कफ का नाश करनेवाला है।

आँवला हरा—शीतल, कसैला, खट्टा, किंचित् मधुर, कटुरस, तीखा, सारक (मल, मूत्र और अधोवायु को निकालनेवाला), रुचिकारक, धातु को पुष्ट करनेवाला, इंद्रिय की शक्ति को बढ़ानेवाला, केशों और नेत्रों को हितकारी, वीर्य-वर्द्धक तथा रक्तपित्त, प्रमेह, मलमूत्र का विबंध, आध्मान, विष्टंभता, श्रम, मूत्राघात, दाह, विष-विकार, सूजन, शोष, तृषा, रुधिर-विकार, कफ, पित्त, जरा (बुढ़ापा) और तीनों दोषों से उत्पन्न हुए समस्त विकारों को शांत करनेवाला है।

आँवला सूखा—कड़वा, खट्टा, चरपरा, ग्राही, मधुर, कसैला, बालों को काला करनेवाला, टूटी हड्डी को जोड़नेवाला, शरीर की संपूर्ण धातुओं को पुष्ट करनेवाला एवं आँखों को हितकारी है। इसको जल में पीसकर शरीर पर लेप करने से त्वचा के अनेक रोगों का नाश होता है तथा यह शरीर में कांति पैदा

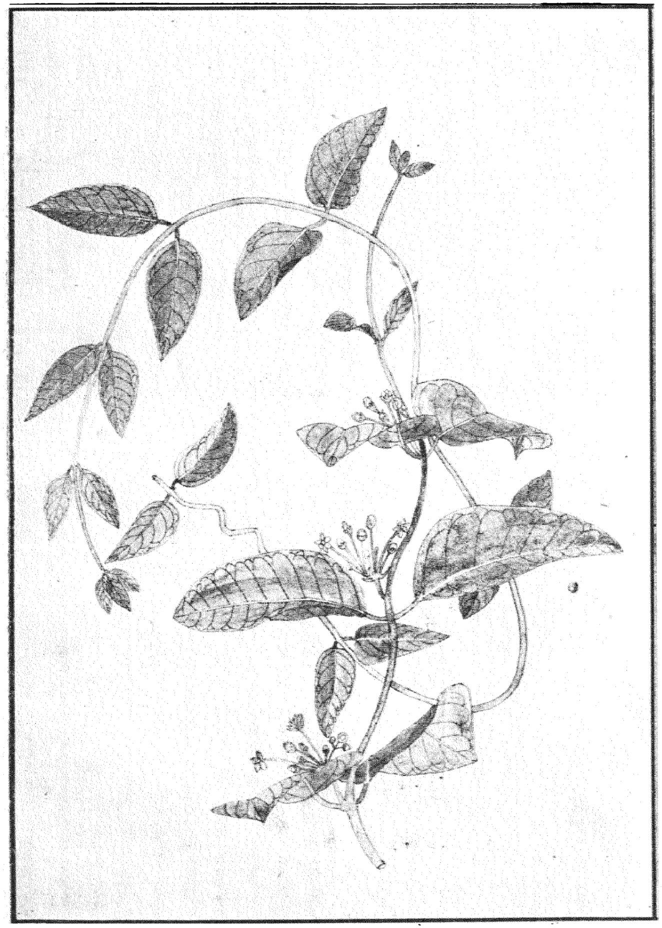

आंतमूल

आँवला

करता है। यह नेत्ररोग, कफ, पित्त, तृषा, पसीने की वृद्धि, वात-रक्त और विष-विकार को दूर करता है।

आँवले के बीजों की गूदी—कसैली, मधुर शुक्रजनक तथा प्रदर रोग, वमन, वात, पित्त, ज्वर श्वास और खाँसी को दूर करनेवाली है।

आँवले का अर्क—त्रिदोष, रक्त-पित्त और मोहनाशक है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—दूसरे दर्जे में ठंढा और तीसरे में रूक्ष है; वद्धक, पक्वाशय, आमाशय और अग्नि के ऊपरी मल को गिरने से रोकनेवाला, दोषों को शमन करनेवाला, वातज मल को शोधनेवाला, हृदय को प्रसन्न करनेवाला, बल को बढ़ानेवाला, नेत्र, मस्तिष्क और स्नायुओं को बल देनेवाला और ओज को चालन करनेवाला है। इसका मुरब्बा हृदय, मस्तिष्क-संबंधी अवयव और आमाशय को बलकारी है। ज्वर में विरेचन के बाद इसका सेवन करना हितकारी है। इसका गाढ़ा लेप नकसीर का रुद्धक है। यह तिल्ली को हानिकारक और गुल्म को उत्पन्न करनेवाला है।

दर्पनाशक—मधु और बादाम रोगन।

प्रतिनिधि—काबुली हर्रे।

मात्रा—५ से १० माशे तक।

प्रयोग—१. प्रायः इसके सूखे फल औषधि-प्रयोग में आते हैं। इसका चूर्ण संकोचक, शोषक, रक्तार्श के रुधिर को बंद करनेवाला तथा अतिसार और आमातिसार में लाभकारी है। ताजे फलों का रस शीतल, आर्द्री, संशोधक, संस्रन, मूत्रजनक और मृदु विरेचन है। इसकी छाल शोषक और अतिसारनाशक है। कोंकण में सूजाक पर ताजी छाल के रस में मधु और हलदी का चूर्ण मिलाकर देते हैं। फूल शीतल और सारक होता है। २. मूत्र अधिक आने पर इसके स्वरस में मधु मिलाकर देने से लाभ होता है। ३. पांडु, कामला और मंदाग्नि में इसके चूर्ण को लोह-भस्म के साथ देना चाहिए। मूत्राशय की पीड़ा में फलों को पीस पेड़ू पर लेप करने से लाभ होता है। ४. कामला, मंदाग्नि और कफ में इसका अर्क देना गुणकारी है। ५. खुजली और खसरे में फलों का गाढ़ा काढ़ा लगाना हितकारी है। ६. मूत्रकृच्छ्र में ताजी छाल के रस में मधु और हलदी का चूर्ण मिलाकर पान करना चाहिए। ७. संग्रहणी में इसके पत्ते और मेथी के काढ़े का सेवन करना उपकारी है। फोड़े पर इसका दूध लगाने से फायदा होता है। ८. कब्जियत में आँवले और हर्रे के चूर्ण का सेवन हितकारी है। ६. नेत्ररोग में फलों के हिम से आँख धोने से फायदा होता है। १०. मूत्र के साथ रुधिर आने पर मिस्री के साथ इसका बना हुआ शर्बत उपकारी है। ११. तृषा में इसकी जड़ का काढ़ा उपकारी है। १२. कफज रोग में इसको मुलेठी के साथ सेवन करने से लाभ होता है। १३. गठिया में २ तोले सूखे आवले और २-४ तोले गुड़ को एक पाव जल में चतुर्थांश काढ़ा बनाकर सेवन करने से लाभ होता है (पथ्य-हवा से बचना, अलोनी रोटी, सेंधा नमक और मिर्च सहित पकी हुई दाल)। १४. आँखों की सफेदी के शोथ पर वृक्ष पर लगे हुए आँवले को ले तत्काल उसका रस निकालकर आँख के ऊपर चारों ओर से लगाना चाहिए। १५ पुरानी सूखी खाँसी पर इसके चूर्ण में मिस्री मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है। १६ पानी साफ करने के लिये इसकी लकड़ी के टुकड़ों को पानी में रखना चाहिए। १७ स्वर-भंग में इसके चूर्ण को दूध के साथ सेवन करने से फायदा होता है। १८. प्रदर रोग में इसके चूर्ण को मधु के साथ सेवन करना उपकारी है। १६. तृषा में आँवले और कत्थे को मुख में रखने से लाभ होता है। २०. अर्श पर आँवले और मेंहदी के १५-१५ माशे पत्तों का पाव डेढ़ पाव पानी में हिम बनाकर पान करने से लाभ होता है। २१. जाला आदि नेत्र-रोगों पर इसको कूटकर दो घंटे तक पानी में औटा छानकर आँख में टपकाने से फायदा होता है। २२. मूत्राघात पर इसको पानी में पीसकर नलों पर लेप करने से उक्त रोग शांत होता है। २३. पित्तज शूल में इसके चूर्ण को मधु के साथ अथवा इसके स्वरस में मिस्री मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है। २४ उदावर्त्त में इसके स्वरस या काढ़े का पान करना गुणकारी है। २५. दाह और शूल सहित मूत्रकृच्छ्र में इसके काढ़े में गुड़ मिलाकर पिलाना चाहिए। २६. प्रमेह में इसके स्वरस में मधु मिलाकर सेवन करने से फायदा होता है। २७. कण्ठ और गले के व्रण में आँवले और मुलेठी के काढ़े में मधु मिलाकर कुल्ले करने से लाभ होता है। २८. मूत्रकृच्छ्र में इसके रस में छोटी इलायची का चूर्ण मिलाकर सेवन करना गुणकारी है। २६ पित्ताभिष्यंद में इसकी टिकिया बनाकर आँखों पर बाँधने से फायदा होता है। ३०. सोम रोग पर इसका स्वरस, पका केला, मधु और मिस्री एकत्र कर सेवन करने से लाभ होता है। ३१. योनि-दाह में इसके रस में मिस्री मिलाकर पिलाना हितकारी है। ३२. विसर्प रोग में इसके रस में घृत मिलाकर पान करना गुणकारी है। ३३. रसायन और पुरुषार्थ के लिये इसके चूर्ण में इसी के स्वरस की २१ बार भावना देकर सुखावे और उसको चूर्ण कर ३ माशे से ६ माशे तक की मात्रा में घी और मधु के साथ सेवन कर दूध का अनुपान करना चाहिए। ६ महीने इसका सेवन करना उचित है। ३४. वमन में इसका स्वरस, मधु और सफेद चंदन के चूर्ण का सेवन हितकारी है। ३५. मद और मूर्च्छा पर इसके स्वरस के द्वारा सिद्ध किए हुए घृत का सेवन लाभकारी है। ३६. श्वेत प्रदर में बीजों को पानी के साथ पीस छानकर उसमें मधु और मिस्री मिलाकर सेवन करने से लाभ होता

है। ३७. नासिका, मुख और गुदा के रुधिर-स्राव पर इसके स्वरस में मिस्री और मधु मिलाकर पान करने से फायदा होता है। ३८. मूत्र-दाह में सम भाग इसके चूर्ण और मिस्री को कच्चे दूध के साथ सेवन करना चाहिए। ३९. आमातिसार और रक्तातिसार पर इसके तीन माशे चूर्ण में ३ माशे मस्तकी मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है। ४०. मूत्राघात में आँवला, जीरा और गुलाब के फूलों के चूर्ण को खाँड के शर्बत के साथ सेवन करना गुणकारी है। ४१. पित्तज दाह पर आँवले और धनिये का हिम लाभकारी है। ४२. पित्त-ज्वर, तृषा, दाह, भ्रम, मूर्च्छादि पर आँवले और गिलोय का हिम मधु या मिस्री के साथ पान करने से फायदा होता है। ४३ श्वेत प्रदर और स्वप्नदोष पर इसके चूर्ण में मधु मिलाकर चावलों के माँड़ के साथ सेवन करने से लाभ होता है। ४४. शिरपीड़ा में घी और मधु के साथ इसके चूर्ण का सेवन गुणकारी है। ४५ खुजली पर इसका चूर्ण मलना लाभकारी है। ४६. पुराने घाव पर इसको आग में जला मक्खन में मिलाकर लगाने से लाभ होता है। ४७. हृदय की व्याकुलता पर आँवले और मिस्री का शर्बत हितकारी है। ४८. अफीम के विष पर इसके पत्तों को पानी में घोंट छानकर ३–४ बार पिलाने से लाभ होता है। ४९. श्वेत प्रदर पर सूखे आँवलों के ४ माशे चूर्ण को एक तोले मधु में मिलाकर सेवन करना अथवा ताजे आँवलों के २ तोले स्वरस में एक तोला मधु मिलाकर पान करना हितकारी है। आँवले, गोखरू और गिलोय के तीन तोले हिम में एक तोला मधु मिलाकर पान करना भी गुणकारी है। इसके बीजों को जल में पीस उसमें मधु और मिस्री मिलाकर सेवन करने से भी लाभ होता है। ५०. आँवले के स्वरस में मधु मिलाकर पान करने से वमन, हल्दी का चूर्ण मिलाकर सेवन करने से प्रमेह, काले नमक के साथ सेवन करने से शूल रोग, जवाखार के साथ सेवन करने से प्रबल मूत्रावरोध और आध्मान, सेंधा लवण के साथ सेवन करने से खाँसी तथा जामुन के बीजों के साथ सेवन करने से बहुमूत्र रोग का शमन होता है। ५१. आँवले की गुठली की मींगी को मधु के साथ सेवन करने से श्वेत प्रदर में अत्यंत लाभ होता है। ५२. सूखे आँवलों को काँजी या छाछ के साथ पीसकर लेप करने से त्वचा का दाह और गर्मी दूर होती है। ५३. शिरपीड़ा में आँवला और धनिया पानी के साथ पीसकर किंचित् कपूर मिला लेप करने से शिर का दाह और पीड़ा नष्ट होती है। ५४. अतिसार और विशूचिका में जब अत्यंत पतले दस्त, दाह और पीड़ा होती है, तब रोगी की नाभि के चारों ओर पीसे हुए आँवले की दीवार सी बना, उसके बीच में अदरक का रस भर देने से पेट की पीड़ा और दाह तत्काल शांत हो जाता है और दस्त गाढ़ा हो जाता है। ५५. विशूचिका रोग में मूत्रावरोध होने पर दो तोले आँवले और २ तोले कलमी शोरे को एक साथ पीसकर पेड़ू के ऊपर लेप करने से मूत्र उतर जाता है। ५६. सूखे आँवले के चूर्ण को हरे आँवले के स्वरस में २१ बार भावना दे सुखाकर चूर्ण करे और चूर्ण के समान भाग उत्तम गोघृत और मधु, चौथाई भाग मिस्री तथा अष्टमांश पीपल का चूर्ण, सबको एकत्र मिलाकर एक उत्तम पात्र में रख वर्षा के आरंभ में धानों की राशि में गाड़ दे और वर्षा के अंत में निकालकर इसको व्यवहार में लावे। इसकी मात्रा ३ से ६ माशे तक की है। यह योग वृद्धावस्था को आने से रोकनेवाला (रसायन तथा कांति, पुष्टि, मेधा, स्मरण-शक्ति, शरीर की शक्ति और स्फूर्ति को बढ़ानेवाला) एवं अनेक प्रकार के रोगों को शमन करनेवाला है।

आँवली–[हिं०] १. भुइँआँवला। भूम्यामलकी। पाताल आँवला। २. [मा०] इमली। तिंतिड़ी।

आँवले का अचार–[हिं०] बनाने की क्रिया—बिना रेशे का बनारसी बड़ा आँवला १०० ले बाँस की पतली सींकों से प्रत्येक के चारों ओर भली प्रकार गूँद तीन दिन फिटकिरी के पानी में अथवा लाल मिट्टी के पानी में भिगोकर चौथे दिन साफ पानी से धोकर कषाय दूर करे और मिट्टी के बर्त्तन में मंद आग पर पकावे। नरम होने पर उतारकर पानी गिराकर एक घड़ी कड़ी धूप में फैलाकर रख दे। जीरा १ छटाँक, लाल मिर्च आध पाव, मेथी, मँगरैला और धनिया एक एक पाव तथा हलदी आध सेर लेकर सबको कूट पीसकर तवे पर भूने और कपूर एक तोला, राई का चूर्ण आध सेर और नमक एक सेर मिलाकर कड़ुए तेल में मले तथा उसका मसाला तैयार करे। फिर एक अच्छी हाँड़ी में २०, २५ आँवले रख ऊपर मसाला बिछावे। इसी प्रकार और आँवले रखकर मसाला फैलाता जाय और मसाले तथा आँवलों की तह जमाकर कड़ुआ तेल इतना डाले कि जिसमें आँवला और मसाला तेल से तर रहें। फिर हाँड़ी का मुख बंद कर एक सप्ताह धूप में सुखावे और पश्चात् छाया में रख दे। यह उक्त क्रियाओं के चार महीने बाद व्यवहार में लाने से उत्तम होता है।

गुण—रुचिकारक, अग्निप्रदीपक, कफ तथा पित्त को दूर करनेवाला है।

आँवले का तेल–[हिं०] गुण—शीतल, कसैला, व्रण-शोधक, दाह-निवारक, शोथनाशक, बालों को हितकारी तथा सिर की गर्मी, खुश्की और पीड़ा को दूर करनेवाला है।

आँवले का मुरब्बा–[हिं०] बनाने की क्रिया–उपर्युक्त प्रकार से कषाय निकाल सिझाए हुए आँवले को उसी प्रकार बनाना चाहिए जिस प्रकार आम का मुरब्बा बनाने की रीति लिखी गई है।

प्रयोग—१. अत्यंत बल-वर्धक तथा पित्त-विकार, दाह, हृदय की दुर्बलता और मस्तिष्क की वेदना को शमन करने-

आक लाल

आक सफेद जंगली

वाला है। दिल और दिमाग की ताकत के लिये एक मुरब्बे मे १॥ माशे छोटी इलायची का चूर्ण और चांदी का १ वर्क मिलाकर दोनों समय सेवन करने से लाभ होता है। बल-वृद्धि और प्रसन्नता के लिये एक या दो मुरब्बे को सोने के वर्क में लपेटकर सेवन करना चाहिए। गर्मी के दिनों में पित्त की बाधाओं से बचने के लिए प्रति दिन इसका सेवन करना बहुत लाभकारी होता है। यदि पित्त की पीड़ा बहुत भयंकर हो तो आँवले के मुरब्बे को जल में धोकर उसमें थोड़ा घी मिला सेवन करने से तत्काल पित्त के संपूर्ण उपद्रव शांत हो जाते हैं। २. सूजाक पर आँवले का मुरब्बा प्रथम दिन एक, दूसरे दिन दो और क्रमशः एक एक बढ़ाते हुए सातवें दिन सात तथा पुनः एक एक घटाते हुए एक और उसी प्रकार फिर सात तक पहुँचाकर खिलाने से अत्यधिक लाभ होता है। इस प्रयोग में दूध सर्वथा त्याज्य है।

आंवळे-[मरा०] आंवला। आमलकी।

आँवेसा-[फा०] आलुबालू।

आइएडकिरद-[ता०] पुदीना नं० २।

आइरि-[बं०] अरहर। आढ़की। रहर।

आइस-[मो०] अतीस। अतिविषा।

आउपम-[ने०] एकवीर। एकवीरु।

आक-[बं०] ईख। इक्षु। ऊख।

आकंद-[बं०, मरा०] आक लाल। रक्तार्क।

आक-[हिं०] आक। अकाव। अकवन। अकौआ। मदार। [सं०] क्षीरदल। शुक फल। तूल फल। अर्क। अलर्क। मंदार इत्यादि। [बं०] आकंद। [मरा०] रूई। मादार। [मा०] आकडो। [गु०] आकडो। [क०] अक्के। यक्कद-गिड। पक्के। [ते०] जिल्लेद चेट्ट। जिल्लेडु। [द्रा०] येरिक्के। [फा०] खरक। खुर्क। [अ०] उशर। उषर। [लै०] Calotropis Gigantea. Calotropis Procera.

सफेद और लाल फूलों के भेद से आक दो प्रकार का होता है। आक लाल का वृक्ष छोटा और आक सफेद का बड़ा यथा २ फुट से ६-१० फुट तक ऊँचा होता है। दोनों के पत्ते मोटे दलवाले, बड़ के पत्ते के समान देखने में प्रायः एक ही प्रकार के होते हैं। पत्ते सफेदी लिए हरे दिखाई पड़ते हैं, क्योंकि इनके ऊपर एक प्रकार की सफेद धूल सी लगी रहती है जो छुड़ाने से सहज में छूट जाती है। पत्तों और डालियों को तोड़ने से उनमें से सफेद रंग का दूध निकलता है जो प्रायः हवा में उड़ जाता है। फूल गुच्छों में आते हैं और फल परवल के समान कोमल तथा टेढ़ होते हैं। यह वसंत ऋतु में फूलता फलता है और गर्मी में फल सूखकर फट जाते हैं और उनमें से रूई निकलती है जो हवा में उड़ जाती है।

दोनों प्रकार के आक जंगली उत्पन्न होते हैं, विशेष कर लाल फूलवाला जंगल, झाड़ी तथा ऊसर भूमि में अधिकता से पाया जाता है और सफेद फूल का आक वाटिकाओं में अधिक देखने में आता है।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण दोष दोनों प्रकार के आक कड़वे, लवणरसयुक्त, पचने में कटु, उष्णवीर्य, सारक तथा कफ, वात, कुष्ठ, खुजली, विषविकार, व्रण, प्लीहा, यकृत, गुल्म, बवासीर और कृमि रोग को दूर करनेवाले हैं।

फूल—लघु, अग्निप्रदीपक, पाचक, अत्यंत वृष्य तथा कफ, उदर रोग, अरुचि, मुखस्राव, खाँसी, श्वास और अर्श-रोग का नाश करनेवाले हैं।

दूध—तिक्त, लवण रसयुक्त, हलका, स्निग्ध, गरम तथा कुष्ठ रोगनाशक है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—इसका दूध तीसरे दर्जे में गरम और रूक्ष, पुष्पादि दूसरे दर्जे में गरम और रूक्ष, दूध मांसवर्द्धक, त्वचा में घाव उत्पन्न करनेवाला; पत्ते—शीत तथा शोथनाशक, शीत की पीड़ा को शांतिकारक और उदर कृमिनाशक है। फूल—आहार को पचानेवाला तथा पक्वाशय के रोगों को गुणकारी है। यकृत और फेफड़े को हानिकारक है।

दर्पनाशक—घी।

प्रतिनिधि—शबरम।

मात्रा—१ से ३ माशे तक।

प्रयोग—१. इसकी रूई से तकिए बनाए जाते हैं। वे चिकने, रेशम के समान कोमल और कफ-वातनाशक होते हैं, इसलिये बालकों और रोगियों के लिये अच्छे समझे जाते हैं। इससे सूत भी तैयार किया जाता है, किंतु इसकी रूई सूत बनाने के लिये अधिक उपयोगी नहीं होती। इसके बनाने में बहुत सावधानता की आवश्यकता होती है।

लाल आक के केवल फूल ही व्यवहार में लाने चाहिएँ। यह मधुर, तिक्त रसयुक्त तथा कुष्ठ, कृमि रोग, बवासीर, विष-विकार, कफज रोग और रक्त-पित्त को दूर करनेवाला एवं गुल्म रोग और शोथ में विशेष उपयोगी है।

सफेद आक की अपेक्षा लाल आक गुणों में कुछ हीन होता है। किंतु सफेद आक के फूलों की अपेक्षा लाल आक के फूल अधिक गुणकारी होते हैं। यह धारक और रक्तपित्त-नाशक है तथा सफेद आक का फूल कुछ दस्तावर होता है। खाँसी मिले रक्तपित्त रोग में लाल आक के फूलों का रस विशेष उपयोगी होता है। आक के दूध को शरीर पर मालिश करने से त्वचा-संबंधी सब विकार नष्ट होते हैं तथा यह गुल्म, उदर रोग और विरेचन के लिये बहुत उत्तम है।

आक लाल-[हिं०] लाल आक। अकवन। अकौआ। आंकड़ा। अकाव। मदार। आक। आग। आर्क। आकोंद। आकान।

[सं०] अर्क। सदापुष्प। तूलफल। शुक्लफल। क्षीरदल इत्यादि। [बं०] आकंदा। आकोंद। लाल आकंद। गौरता कंद। [मरा०] लाल मांदार। आकंद। रुई। [मा०] एरुक्कु। येरिका। वेलेरिका। [मरा०] अकदचा झाड़। [गु०] रातो मंदार। अकड़ो। आकदानूँ झाड़। धोला आकड़ो। [ता०] यरक्म। यरुकम। एरुक्कु। एरुकम। [तै०] नील जिल्लेडे धोली। जिल्लेडु। जिल्लेरु। नेल्ला-जिल्लेरु। मंदारमु। जिल्ले डुचेट्टु। [क०] मांदार अक्के। [व्रज०] अतौआ। [संता०] अहउना। [ने०] श्रोक। [मु०] अकर। रुई। अकंदा। मंदारा। [सिं०] विजे लोशा। [खा०] येका। येक्केमाची। येकड़ा। [फा०] खुर्ग। खरक। जहर नाक। बहुक। जहल मदार। [अ०] उशर। ऐन। ऐन-उल्-अदनिया। चशममाख। [यू०] हजाक्यूस। [लै०] Calotropis Gigantea. [अ०] Syn: Asclepias Gigantea.

यह भारतवर्ष के प्रायः सभी प्रांतों में ऊसर भूमि में अधिकता से पाया जाता है। यह जगली वृक्ष बीज के गिरने से ही उत्पन्न होता है और प्रायः बरसात में नष्ट हो जाया करता है, परंतु बरसात बीत जाने पर पुरानी जड़ से पौधे तैयार होकर गर्मी में हरे-भरे दिखाई पड़ते हैं यदि यह जड़ सहित न उखाड़ा जाय, जड़ छोड़कर वृक्ष काट लिया जाय तो फिर दूसरे साल पौधे तैयार हो जाते हैं।

इसका वृक्ष ३-४ फुट से अधिक ऊंचा देखने में नहीं आता। लाल आक कहने से लाल फूलवाला आक समझा जाता है; किंतु वास्तव में फूलों का रंग रक्तवर्ण नहीं होता और न लाल रंग के फूल देखने में आते हैं। फूलों का रंग बैंगनी होता है, सो भी समस्त फूल बैंगनी नहीं होता। भीतर की ओर किंचित् सफेदी लिए बैंगनी और बाहर की ओर बैंगनी लिए सफेद रंग का होता है।

गुण-दोष—दस्तावर तथा वात, कोढ़, खुजली, विष, घाव, प्लीहा, गुल्म, अर्श रोग, कफ, बरवट, तिल्ली और कृमि-नाशक है।

विषनाशक—इमली नं० ४१।

इसका फूल—मधुर, कड़वा, ग्राही तथा कोढ़, कृमि, कफ, अर्श, विष, रक्तपित्त, गुल्म और सूजन का नाश करनवाला है।

आक का दूध—कड़वा, नमकीन, गरम, स्निग्ध, हलका, दस्तावर तथा कोढ़, गुल्म और उदर रोग का नाशक है।

आक की जड़ की छाल—वमनकारक, पसीना लानेवाली, कफ को निकालनेवाली तथा श्वास, उपदंश, अतिसार, रक्तपित्त, शीतपित्त (जूड़पित्ती) संग्रहणी और प्रदर रोग को दूर करने-वाली है।

इसका क्षार कफ-नाशक है।

आक का अर्क—वायु, कोढ़, खुजली, घाव और विष-नाशक है।

डाक्टरी मतानुसार—आक की जड़ की छाल परिवर्त्तक, बलकारक, स्वेदजनक, आमरस पाचक तथा ज्वरनाशक है। इसकी अधिक मात्रा वमनकारक और विलायती एपिकाकूयाना के समान गुणकारी है। इस कारण डाक्टर लोग इसे हिंदुस्तानी इपिकाकूयाना कहते हैं।

प्रयोग—१. आक का पंचांग और रस औषधि प्रयोग में आता है विशेषकर दूध, ताजे फूल और जड़ की छाल। रेतीली भूमि में उत्पन्न हुए वृक्ष की जड़ को अप्रैल या मई में लाकर छाया में रख दें और जब वह इतना सूख जाय कि काटने से उसमें से दूध न निकले तो छाल को उतार, छाया में सुखा चूर्ण कर कागदार बोतल में रख देना चाहिए। इसकी पूर्ण मात्रा ३० ग्रेन से ६० ग्रेन तक और कम मात्रा ५ ग्रेन तक है। कोढ़, वातरक्त, फिरंग रोग, उपदंश, पुरानी गठिया इत्यादि रोगों में लाभकारी हैं। कभी यह गुण करता है और कभी नहीं भी करता। २ ग्रेन से आरंभ कर १० ग्रेन तक बढ़ाना चाहिए। मरोड़ या पेचिश में भी "एपिकाकूयाना" के समान इसका उपयोग करते हैं।

इसकी जड़ की पतली पतली छाल को छीलकर उसको सुखा कपड़छान बारीक चूर्ण कर ले। इस चूर्ण को अल्प मात्रा से खाँसी की किसी भी अवस्था में देने से कफ तत्काल पतला हो जाता है, ज्वर दूर होता है और श्लीपदादि त्वचा के रोग नष्ट होते हैं। इस चूर्ण को अल्प मात्रा से सेवन करने से जठराग्नि दीपन होती है और भोजन का परिपाक भली भांति होता है। इसके सिवा पित्त का प्रवाह भी अच्छी तरह होता है। इसकी मात्रा दो रत्ती तक है। इस वृक्ष में उपदंश-नाशक शक्ति भी अपूर्व है। २. जलोदर, तिल्ली, प्लीहा इत्यादि पर पत्तों को नमक के साथ कूट संपुट में बंद कर अग्नि दे। इस भस्म को मठे के साथ सेवन करने से लाभ होता है। प्लीहायुक्त ज्वर में यह भस्म बहुत उपकारी है। इसकी मात्रा १॥ माशे की होनी चाहिए। स्मरण रखना चाहिए कि भस्म बनाने में धूआँ बाहर न निकले अर्थात् अंतर्धूम विधि से भस्म करना चाहिए और पत्तों के साथ सेंधा नमक का उप-योग करना भी आवश्यक है। प्लीहा और यकृत युक्त मले-रिया ज्वर के रोगी को इसका दूध ५ बूँद और कच्चे पपीते का रस १० बूँद मिलाकर प्रति दिन ३ बार सेवन कराने से प्रायः पहले या दूसरे दिन में ज्वर की कमी देख पड़ती है; और ८-१० दिन में यदि ज्वर सर्वथा दूर न हो तो आक का दूध ४ बूँद, कच्चे पपीते का रस १० बूँद और चिरायते का रस १५ बूँद तीनों को एकत्र मिलाकर सवा पाव (५ छटाँक) गो-मूत्र के साथ दिन में तीन बार सेवन कराने से प्रायः एक

आक सफेद बागो

सप्ताह में पूर्ण आरोग्य हो जाता है। ३. पैर और फोतों के गजचर्म्म पर इसकी जड़ की छाल को काँजी में पीसकर लेप करने से फायदा होता है। ४. जोड़ों के शोथ और पीड़ा पर आक के दूध की मालिश करने से अथवा आक की लकड़ी को पीसकर लेप करके उस पर इसी के पत्तों को गरम कर बाँधने से वातजनित सूजन शीघ्र नष्ट होती है। ५. शून्यबहरी पर पत्तों को तेल में जलाकर उस तेल की मालिश करनी चाहिए। ६. घाव पर सूखे पत्तों का चूर्ण लगाने से लाभ होता है। ७. श्वास, मिरगी, बाइँटे और रुधिर-विकार में सम भाग इसके ताजे फूल और काली मिर्च को पीस २॥ रत्ती की गोलियां बनाकर दिन में ५-६ बार देने से स्नायु-जाल की शक्ति बढ़ती है। ८ मिरगी रोग में इसकी जड़ की छाल को बकरी के दूध में पीसकर नाक में टपकाने से लाभ होता है। ९ पसली की पीड़ा में बालक के मूत्र में इसकी जड़ को पीस लेपकर कंडे की आग से सेंकने से रोग मुक्त होता है। १०. विशूचिका में जड़ को सम भाग अदरक के रस में खरल कर चने बराबर गोलियाँ बनाकर सेवन करना हितकारी है। ११. उपदंश के व्रण पर जड़ की छाल का चूर्ण हितकारी है। उपदंश-जन्य पुरानी वायु की पीड़ा में इसकी जड़ के टुकड़े को जल में पकाकर स्वेद देने से शीघ्र उपकार होता है। १२. नवीन कोढ़ में चूर्ण की फंकी उपकारी है। १३. ज्वर में इसके चूर्ण की २॥ रत्ती की मात्रा सेवन करने से पसीना आता है और दाह में विशेष उपकार होता है। १४. पुरानी गठिया में ५ रत्ती चूर्ण चेपदार औषधि के साथ पानी में भिगोकर सेवन कराने से लाभ होता है। १५. आमातिसार में जड़ की छाल का चूर्ण २॥ से ५ रत्ती तक की मात्रा से सेवन कराना उपकारी है। १६. कामला रोग में ६ रत्ती जड़ की छाल १२ दाना काली मिर्च के साथ पीसकर दिन में दो बार सेवन कराने से फायदा होता है। १७. बालक के ज्वर में, जिसके प्रकोप से बालक प्रलाप करता और हाथ पैर तानता है, इसकी जड़ के काढ़े का सेवन कराना गुणकारी है। १८. नहरुए के शोथ पर इसका लेप करना अथवा पत्ते को गरम करके बाँधना हितकारी है। १९. आमातिसार में ७॥ रत्ती छाल में आधी रत्ती अफीम मिलाकर देने से लाभ होता है। २०. वमन के लिये १५ रत्ती चूर्ण और २१. पसीने के लिये २॥ रत्ती चूर्ण देना चाहिए। २२. कर्णशूल में पीले पत्ते पर घी लगा, आग पर सेंक, हाथों से मलकर रस निकाल कान में टपकाने से लाभ होता है; अथवा थूहर के पत्तों को आक के पत्तों में लपेटकर पुटपाक की विधि से पकाकर उनका रस निकाल सुहाता सुहाता कान में डालने से कान की पीड़ा दूर होती है। २३. खाँसी और क्षय रोग में सम भाग इसके फूलों की कली और काली मिर्च तथा दोनों के बराबर बबूल की अंतरछाल के गाढ़े क्वाथ में पीस गोलियाँ बनाकर सेवन करने से लाभ होता है। २४. बद्धकोष्ठ में पत्तों को गरम कर पेट और नालों पर बाँधने से फायदा होता है। २५. उपदंश में जड़ की छाल का धूम्रपान करना हितकारी है। २६. मंदाग्नि, दिल की धड़कन, वमन और विशूचिका में इसकी ५ रत्ती कली, काली मिर्च और नमक के साथ देने से लाभ होता है। २७. दाँत साफ करने के लिये पत्तों को काली मिर्च के साथ पीस कर मंजन करना चाहिए। २८. मासिक धर्म्म की रुकावट में जड़ का चूर्ण, हिम, फांट अथवा काढ़ा पिलाने से लाभ होता है। २९. मूत्रकृच्छ्र में इसके सूखे फूलों के चूर्ण को आधी से ५ रत्ती की मात्रा से मिस्री के साथ सेवन कराने से तथा चावल और दूध का पथ्य देने से फायदा होता है। ३०. अंडवृद्धि पर—पत्ते पर एरंड का तेल लगाकर फोतों पर बाँधने से अथवा पत्तों को सेक अंडकोषों पर बाँधकर शयन करने से विशेष लाभ होता है। ३१. गठिया में पत्तों का काढ़ा देना हितकारी है। ३२. एँड़ी की पीड़ा पर पत्तों की पुल्टिस बाँधनी चाहिए। ३३ विषम ज्वर में जड़ अथवा छाल का काढ़ा देना हितकारी है। ३४. खुजली में उस दूध को लगाना हितकारी है जो इसके फूलों के गुच्छे तोड़ने से निकलता है। ३५ विषम ज्वर, कुष्ठ रोग, उपदंश, अतिसार, आमातिसार, पुरानी गठिया, पारे का विकार, त्वचा के रोग, कफ, जलोदर, सर्वांग शोथ और प्रारंभिक फोड़े आदि पर—बालू या रेत में उत्पन्न हुए पुराने आक के वृक्ष की जड़ चैत-बैसाख में उखाड़ जल से धो साफ कर उस समय तक छाया में रक्खे जब तक चीरा देने से दूध न निकले। फिर ऊपर के छिलके को चाकू से खुरच अन्तरछाल को जड़ से पृथक् कर, छाया में सुखा, पीस कपड़छान कर कागदार बोतल में रखे और समय पर इसका प्रयोग करना चाहिए। ३६. कृमि रोग पर—जड़ की छाल का चूर्ण सेवन करने से कृमि नष्ट होते हैं। ३७. अंगों की पीड़ा में पत्तों को गरम कर बाँधने और सेंकने से लाभ होता है। ३८. जलोदर में इसके हरे पत्ते ५ तोले और हल्दी ३॥ माशे, दोनों को खरल कर उड़द बराबर गोलियाँ बना प्रति दिन ४ गोली ताजे पानी के साथ सेवन करते हुए पचने तक ७ गोली पर्यंत बढ़ाकर सेवन करने से विशेष लाभ होता है। ३९. खाँसी और श्वास में मुखमुँदी कलियों में एक एक काली मिर्च भर, हाँडी में रख, ऊपर नमक बिछा, ढक्कन से ढँक, सँधियों को बंद कर, चूल्हे पर चढ़ा, अग्नि जला कर भस्म कर ले और शीतल होने पर निकाल ४ रत्ती तक की मात्रा से सेवन करना चाहिए। शीत काल में तीन दिन तक एक एक कोंपल पान में रखकर खाय, चौथे दिन से आधी आधी कोंपल प्रति दिन ४० दिन तक बढ़ाते हुए सेवन करने से लाभ होता है। इसके २-४ सूखे पत्ते जला-

कर उसकी भस्म को रात भर पानी में भिगोवे और प्रातःकाल उसके जल को निथार कर पान करने से फायदा होता है। आक की छाल का चूर्ण १ माशे ले मेढ़ासिंगी के रस के साथ सेवन करना गुणकारी है। ४० नाखुना में इसकी जड़ को पानी में घिसकर अंजन करने से लाभ होता है। ४१. कीड़े से उत्पन्न हुए दांत के दर्द में जड़ की छाल को पानी में पीसकर दांत पर लगाना गुणकारी है। ४२. बहरेपन पर—छिद्ररहित पीले पत्तों को आग पर सेंककर १५-२० दिनों तक उसका रस कान में डालने से फायदा होता है। ४३. तिल्ली पर—पत्तों के सम भाग सेंधा नमक लेकर दोनों को एक साथ कूट-पीसकर हांडी में भर दे और उसका मुख कपड़मिट्टी से बंद कर आग में जलावे। फिर उस भस्म को मठे के साथ सेवन करने से लाभ होता है। ४४. उपदंश के घाव को पत्तों के काढ़े से धोना हितकारी है। ४५. कफ और श्वास में इसका खार दिया जाता है। ४६. हाथ पैर की वातज पीड़ा पर इसकी जड़ को कूटकर कड़वे तेल में पका, इस तेल का मर्दन कर आक या एरंड के पत्ते बांधने से फायदा होता है। ४७. खुजली में एक पाव कड़वे तेल में २१ पत्ते एक एक कर जलावे। फिर उतारकर कुछ मैनशिल मिलाकर शीशी में रखे। इस तेल की मालिश से खुजली का नाश होता है। कुष्ठादि भयंकर चर्मरोगों में इसके फूल या इसकी जड़ की छाल के चूर्ण को मुंडी के रस में मिलाकर लेप करने से त्वचा के सब प्रकार के विकार दूर होते हैं। अथवा आक और थूहर के सम भाग दूध में सफेद कपड़े का टुकड़ा भिगोकर सुखावे। फिर उसको यथोचित मक्खन और गंधक के चूर्ण में सानकर लोहे की सलाई पर लपेट दीपक की लौ पर जलावे और उसके नीचे एक पात्र रख दे। उसमें से जो तेल गिरे, उसको यत्न से शीशी में रखे। यह तेल सूखी खुजली, दाद, चकत्ते आदि सपूर्ण त्वचा-संबंधी विकारों में गुणकारी है। अथवा बारीक पिसा हुआ गंधक का चूर्ण ५ तोले, आक का दूध २॥ तोले, शुद्ध सरसों का तेल ५ तोले, सबको घोंट एक जीव कर, उसमें एक सोखता कागज (ब्लाटिंग पेपर) भिगोकर खूब सुखावे और दीपक की लौ में उसकी भस्म कर ले। फिर उस भस्म को सरसों के तेल में मिलाकर ३ दिन पर्यंत धूप में रख शरीर पर मालिश करने से दोनों प्रकार की खुजली, बालों का गिरना आदि चर्मरोग २-३ दिन में ही नष्ट होते हैं और दाह नहीं होता। ४८. शीत ज्वर में आक की जड़ और इससे आधी काली मिर्च बकरी के दूध में पीस चने बराबर गोलियां बना ज्वर के पूर्व ही देने से लाभ होता है। ४९. सर्प-विष पर—इसका दूध टपकाते रहना चाहिए। विष का असर रहने तक दूध सोखता जाता है और विष का विकार दूर होने पर दूध नहीं सोखता। ५०. कामला रोग पर इसकी जड़ को चावल के पानी में घिसकर नास देने से लाभ होता है। ५१. सर्प-विष में ३ कोंपलों को गुड़ में मिलाकर खिलावे और फिर घी पिलाने से लाभ होता है। ५२. बिच्छू के दंश पर दूध लगाने से लाभ होता है। ५३. श्वास में एक पत्ते को २५ काली मिर्चों के साथ पीसकर मिर्च बराबर गोलियां बनाकर २ से ७ गोलियों तक सेवन करने से फायदा होता है। ५४. ज्वर में पीले पत्तों को कोयले की अग्नि में जलाकर भस्म कर ले और उसमें से ४ रत्ती की मात्रा से मधु के साथ सेवन करने से लाभ होता है। स्वल्प-विराम ज्वर में पके हुए आक के पत्तों के रस की कुछ बूंदें सेवन करने से उक्त ज्वर का वेग शीघ्र शांत होता है। ५५. दस्त लाने के लिये जड़ को पानी में पीस गोली बनाकर गुदा में रखने से अथवा इसको पानी में पीस पेट पर लेप करने से दस्त होता है। ५६. वातज पीड़ा में एक सेर जड़ को कूट आठ सेर पानी में चतुर्थांश काढ़ा कर, उस काढ़े में एक सेर एरंड का तेल मिलाकर पकावे और सिद्ध होने पर इस तेल का मर्दन करने से फायदा होता है। अथवा एक सेर एरंड के तेल को एक सेर आक की जड़ के कल्क और ८ सेर पानी में यथाविधि सिद्ध कर मर्दन करना चाहिए। ५७. उपदंश पर एक तोला जड़ और ५ माशे मिर्च का चूर्ण ४। तोले गुड़ में मिलाकर ज्वार समान गोलियां बना सुबह-शाम सेवन करने से लाभ होता है। ५८. आक का दूध तीव्र रेचक और दाहकारी है। बहुधा विरेचन के लिये थूहर के दूध के साथ इसका प्रयोग किया जाता है। त्वचा के रोगों में दूध लगाते हैं, किंतु घाव पर बहुत दाह कर बिगाड़ देता है। यह चौथे दर्जे में गरम और खुश्क है। त्वचा के रोग, अर्श, कुष्ठ, जलोदर, यकृत, प्लीहा और आंत के कीड़े मारने को हितकारी है तथा कफज और वातज रोगों में अमृत के समान गुणकारी है। इसका व्यवहार करने में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना आवश्यक है। १—कातिक से २१ पूस तक इसका व्यवहार उत्तम है। २—रविवार और मंगलवार को आरंभ करना चाहिए। ३—वर्षा ऋतु में इसका उपयोग सर्वथा त्याज्य है। ४—जो वृक्ष ऊंचा और बड़ा हो तथा पक्की मिट्टी में उत्पन्न हुआ हो, उसका दूध उत्तम अन्यथा निकृष्ट जानना चाहिए। ५—टूसे का दूध शाखाओं से उत्तम होता है। ६. सेवन काल में शीतल जल और शीतल वायु का त्यागना, स्नान, मिस्री आदि का शर्बत, गाय, भैंस का कच्चा दूध और अधिक भोजन छोड़ देना चाहिए। सम्यक् वायु में निवास करना और क्षुधा तथा तृषा को वश में रखना। पथ्य गेहूँ की अलोनी रोटी, अच्छा हो तो थोड़ा गुड़ मिलाना। जहां पर इसका प्रयोग किया गया हो वहां तीसरे दिन गेहूँ का खमीर, घृत और हलदी, उसकी तेजी मंद करने के लिये मलना चाहिए।

इसके सेवन-काल में दूसरी औषधि का सेवन सर्वथा त्याज्य है। ५९. मुख के छाले पर दूध को मधु में मिलाकर लगाना और दाढ़ की पीड़ा में इसको रूई में भिगो, घी में तर कर डाढ़ में रखना चाहिए। ६०. जोड़ों के शोथ और पीड़ा पर इसके दूध का लेप हितकारी है। ६१. चोट और मोच पर दूध में नमक मिलाकर लगाने से फायदा होता है अथवा केवल आक के दूध की मालिश करने से शीघ्र आराम होता है। ६२. आमातिसार में इसके २½ रत्ती दूध में चौथाई रत्ती अफीम मिलाकर दिन में २-३ बार देने से लाभ होता है। ६३. दंत-पीड़ा में इसके दूध में नमक मिलाकर दिन को तीसरे पहर मंजन करना चाहिए। ६४. नहरुवे की सूजन पर दूध का लेप करना हितकारी है। ६५. कास और श्वास पर एक पाव गेहूँ को तीन दिन इसके दूध में भिगो, हाँडी में रख, मुख बंदकर कंडे की अग्नि दे और स्वांग शीतल होने पर निकाल, पीस छानकर उसमें एक पाव गुड़ मिलाकर एक एक तोले की गोली बनाकर सेवन करने से फायदा होता है। ६६. इसका दूध पागल कुत्ते के काटे पर लगाने से लाभ होता है। ६७. खुजली और त्वचा रोग पर आक के दूध को छाया में सुखाकर जलाने और इसकी भस्म को कड़वे तेल में मिलाकर लगाने से फायदा होता है। ६८. आक का दूध और थूहर का दूध तथा दारुहलदी का चूर्ण तीनों को एकत्र खरल कर बत्ती बना नासूर, भगंदर और नाड़ीव्रण में रखने से शीघ्र आरोग्य प्राप्त होता है। इसके दूध में रूई को तर कर छाया में सुखावे और उसकी बत्ती बनाकर कड़वे तेल के दीपक में जला और काजल पारकर नासूर पर लगाने से लाभ होता है। ६९. दाढ़ की पीड़ा में इसके दूध में रूई का फाहा तरकर दाढ़ के छेद में रखने से लाभ होता है। ७०. शीघ्र प्रसव कराने के लिये समान भाग आक के दूध और गाय के दूध में सफेद कपड़ा तर करके भग में रखने से बालक शीघ्र उत्पन्न होता है। ७१. आम वात, गठिया और रींघन वात पर शुद्ध गूगल १० माशे, कतीरा २ माशे, मेंहदी ४ माशे, सनाय २ माशे, इन सब को आक के दूध में खरल कर, अग्नि में सेंककर दूध को सुखाकर मोठ के समान गोलियाँ बनाकर १ से ३ गोली गरम जल के साथ सेवन करने से लाभ होता है। ७२. ध्वजभंग, बाजीकरण, स्तंभन इत्यादि के लिये इसका दूध और मधु आध आध पाव ले लोहे की कड़ाही में लौहदंड से इतना खरल करे जिसमें लसलसाहट के कारण दंड सहित कड़ाही जमीन से उठने लगे। फिर ४ माशे अफीम भली भाँति मिलाकर काँच या चीनी के पात्र में रखे और इंद्रिय का शिर तथा सीवन को छोड़ लेप करे। ऊपर से नागरबेल का पान लपेटकर पट्टी बाँधे। फिर एक प्रहर के बाद पट्टी खोल २१ बार का धोया हुआ गोघृत लगावे। इस प्रकार ३-४ दिन पट्टी बाँधने से लाभ होता है। आक का दूध और घी समान भाग ले १२ पहर निरंतर खरल कर १ रत्ती प्रति दिन इंद्रिय पर मलना गुणकारी है॥ दो भाग आक के दूध में एक भाग घी मिलाकर आग पर जलावे और आक की ही लकड़ी से घोंटता जाय। जब दूध जल जाय, तब घी संग्रह कर इंद्रिय पर मल कर लिसोड़े के पत्ते बाँधने चाहिएँ। आक के फूल का लौंग, लवंग, अकरकरा, मीठा तेलिया, बीरबहूटी, प्रत्येक तीन तीन माशे लेकर आक के दूध में ३ से ५ दिन तक इतना खरल करे जिसमें उँगली से छूने में चिकनाहट के सिवा लेश मात्र भी रूखापन न मालूम पड़े। फिर कड़ुए तेल में कपड़े को तर कर उस पर इसको लेप करे और बत्ती बनाकर उसके ऊपर की ओर चिमटे से पकड़कर नीचे आग लगावे और उसके नीचे चीनी का पात्र रखकर उसमें तेल टपकावे। फिर इस तेल को कागदार शीशी में संग्रह कर एक बूँद की मात्रा से पान, मुनक्के या बताशे में डालकर सेवन करना तथा इसी तेल को सुपारी और सीवन बचाकर इंद्रिय पर मल, पान अथवा एरंड-पत्र बाँध ४ घंटे के पीछे खोल देना चाहिए। इस प्रकार इस प्रयोग को ७ से १५ दिनों तक करने से विशेष लाभ होता है। आक के दूध से अबरक, बंग इत्यादि की भस्म बनाई जाती है। ७३. प्लेग पर—सम भाग आक के जड़ की छाल, फाद जहर हैवानी, नारियल दरियाई और पीली राई को प्याज के रस में खरल कर चने के समान गोलियाँ बना दो दो घंटे पर एक एक गोली, औंटकर शीतल किए हुए दूध के साथ, देने से तथा इन गोलियों को प्याज के रस में पीसकर गिल्टी पर लेप करने से ६० प्रति सैकड़ा रोगी अच्छे होते हैं। ७४. हैजे पर—इसकी जड़, मिर्च और अकरकरा सम भाग ले धतूरे की जड़ के रस में घोंट चने के समान गोलियाँ बनाकर जल के साथ दिन में ४-५ बार सेवन करना और मूत्र खोलने के लिये गेहूँ के चोकर की पोटली बना आग में गरम कर पेड़ू पर सेंक करना चाहिए। ७५. खाँसी पर—इसकी जड़ की छाल को अग्नि से जलाकर कोयला बनावे। फिर उसे पीसकर काले नमक अथवा मधु के साथ एक माशे की मात्रा से सेवन करने से लाभ होता है। ७६. श्वास पर इसके ६ फूलों और ६ काली मिर्चों को बारीक पीसकर चने के समान गोलियाँ बनाकर दिन में दो-तीन गोली सेवन करने से विशेषकर कफ की अधिकतावाला श्वास कम होता है। ७७. सुखपूर्वक प्रसव होने के लिये आक के ५-७ पत्तों को आक की जड़ के साथ लपेटकर स्त्री के सिर के बालों में बाँधना चाहिए। ७८. इसके जड़ की छाल को सुखाकर और उसका चूर्ण बनाकर २ रत्ती की मात्रा से गुड़ के साथ सेवन करने से चढ़ा हुआ ज्वर पसीने के रूप में शीघ्र उतर जाता है। ७९. प्रदर रोग में आक के फूलों का काढ़ा ५-७ दिन सेवन करने से फायदा होता है। ८०. प्लेग पर इसके पत्तों के स्वरस का ६ तोले

फाड़ (स्वरस में अग्नि में लाल किया हुआ ईंट का टुकड़ा छोड़ने से उसका जल या फाड़ निकल आता है) के रस को ३ तोले घृत में मिलाकर पिला देना चाहिए। प्यास या रूक्षता पर घृत ही पिलाना चाहिए। इससे वमन और दस्त होते है। १२, १५ घंटे के बाद २ तोले फाड़ और दो तोले घृत फिर पिलाना चाहिए। पुन: एक तोला और उसके बाद ६-६ माशे दिन में तीन बार देना चाहिए। स्वस्थ होने तक पानी न देकर घृत ही पिलाना उत्तम है। आक के फूल, पाँचों नमक, नौसादर और शुद्ध बछनाग सम भाग लेकर बारीक चूर्ण बना एक माशे की मात्रा से एक एक घंटे पर सेवन कराना चाहिए। यदि रोगी को दस्त आवे तो समझना चाहिए कि यह रोग मारक और असाध्य है। किंतु दस्त न आने पर ३ दिन इसका सेवन बराबर करना उत्तम है तथा औंटा हुआ पानी पिलाना और गिल्टी पर २४ घंटे लगातार नीम की लुगदी से सेंक करना चाहिए। ज्वर का वेग कम होने पर दोनों समय औषधि-सेवन करना चाहिए। ८१. पुत्र ही उत्पन्न होने के लिये गर्भ के दूसरे महीने में आक के दूध की एक बूँद बताशे मे डालकर प्रातःकाल निराहार गर्भिणी को निगल जाना चाहिए। एक ही बूँद दूध डालने से वमन नहीं होता। फिर ३-४ घंटे के बाद दूध और चावल खिलाना चाहिए और दिन भर कुछ नहीं खाने देना चाहिए। ८२. नहरुए पर एक हाँड़ी में आक का दूध डाल दे। इसके सूखने पर आधी आधी रत्ती की गोलियाँ बना गुड़ में रखकर ७ दिनों तक खिलाने से लाभ होता है।

आक सफेद–[हिं०] सफेद आक। मंदार। मदार। [सं०] श्वेतार्क। अलर्क। राजार्क। मंदार्क। गणरूपक, इत्यादि। [बं०] श्वेतआकंद। श्वेतार्कंद। [मरा०] पांढरी रुई। [मा०] धोलो आकड़ो। मांदार। [क०] मंदार यक्के। बिळयक्कदगिड़। [गु०] धोलो आकड़ो। [ते०] निल्लेट्टु चेट्टु। तेल्ल जिल्लेडु। [ता०] वेल्लेरकु। [द्रा०] वल्लेरिकं। [सिं०] आक। [पेशावर०] स्पुलमेई। स्पलमक। पशकंद। [अफगा०] स्पलवक्क। [फा०] दूध। [अ०] उशर। [लै०] Calotropis Proara.

पश्चिम में मध्य भारत, सिंध और पंजाब से बिहार और बंबई तक प्रायः सभी प्रांतों में पाया जाता है। विशेषकर यह वाटिकाओं में रोपण किया जाता है।

गुण-दोष—दस्तावर तथा वात-विकार, कोढ़, खुजली, विष, घाव, प्लीहा, गुल्म, अर्श रोग, कफ और कृमि का नाशक है।

इसके फूल वीर्यवर्द्धक, हलके, पाचक, अग्निप्रदीपक तथा अरुचि, बवासीर, प्रसेक, खाँसी और श्वास का नाश करनेवाले हैं।

यह अत्यंत गरम, कड़वा, मलरोधक तथा मूत्रकृच्छ्र, घाव, कृमि और दारुण रोग का नाशक है। इसका खार कफ-नाशक है।

इसका अर्क वायु, कोढ़, खुजली, घाव और विष का नाशक है।

प्रयोग—१. इसका गुण उक्त आक लाल के समान है। इसकी ताजी जड़ दातुन के काम में आती है। पठानों का विश्वास है कि इसकी दातुन से दंत-पीड़ा दूर होती है। यह विशूचिका में भी लाभकारी है। २. पेट-दर्द पर इसके पत्तों को सेंककर पेट पर बाँधने से लाभ होता है। ३. दाँतों की पीड़ा पर इसकी जड़ को गरम कर दातुन करने से फायदा होता है। ४. स्नायु की पीड़ा में जड़ को पीस, गरम कर लेप करने से फायदा होता है। ५. ज्वर में रविवार के दिन इसकी जड़ लाकर कान में बाँधने से लाभ होता है। ६. श्लीपद पर इसकी जड़ को काजी में पीसकर लेप करना चाहिए। आक की जड़ की छाल और अड़ूसे की छाल को काँजी मे पीसकर लेप करने से दुस्साध्य श्लीपद रोग दूर होता है। ७. पागल कुत्ते या गीदड़ के काटने पर तत्काल इसके दूध में थोड़ा सिंदूर मिलाकर रूई के ऊपर रख काटे हुए स्थान पर बाँध देना चाहिए। इस प्रकार प्रति दिन बाँधने से लाभ होता है। इस पर मांस, मछली, अचार, चटनी, सिर्का, दही, मीठा, खट्टा इत्यादि गरम और तीक्ष्ण पदार्थ त्याज्य हैं। ८. इसकी जड़ को काँजी में पीसकर लेप करने से अंडवृद्धि का नाश होता है। ९. वातरोग के कारण ग्रंथि के फूलने पर आक के पत्ते, अदरक और सेंधा नमक, तीनों को एक साथ पीसकर पोटली बना गरम करके स्वेद देने से बहुत जल्द आराम होता है। १०. श्वेत कुष्ठ पर इसके दूध में बकुची और हरताल को पीसकर लेप करने से लाभ होता है। ११. अर्श रोग मे आक के दूध में अफीम घोलकर मस्सों पर लगाने से पीड़ा शांत होती है। १२. सूजन मे आक के पत्ते, पुनर्नवा और नीम की पत्तियों के काढ़े का सेवन हितकारी है। १३. अर्बुद मे आक का दूध, थूहर का दूध, चीते की जड़, दंती की जड़, गुड़, भिलावें और कसीस के चूर्ण को एकत्र मिलाकर लेप करने से रसौली फट जाती है और उसका चेप निकल जाता है। १४. आक के दूध में सज्जी और चूना मिलाकर लेप करने से फोड़ा फूट जाता है। १५. वमन पर आक की जड़ का बारीक चूर्ण, रससिंदूर और कौड़ी की भस्म सम भाग लेकर स्त्री के दूध में खरल कर आधी रत्ती की गोली बना अवस्था-विशेष में सौंफ का अर्क, नारियल का जल अथवा लाख का भिगोया हुआ जल, इनमें से किसी एक अनुपान के साथ प्रयोग करने से शीघ्र लाभ होता है। १६. तिजारी ज्वर में सफेद आक की जड़ की छाल एक माशा ले चावलों के जल के साथ पीसकर सेवन करने से उक्त रोग दूर होता है। १७. शिरोरोग में ओंगा के बीज और सहिंजन के बीज २ भाग तथा बच एक भाग, इनको

एक साथ पीसकर आक के दूध की भावना देकर सुखावे। इसकी नस्य लेने से आधाशीशी की पीड़ा, शिरःशूल, सिर में सर्दी का ठहर जाना, सिर का भारी होना आदि शिरोविकार दूर होते हैं। १८. इसकी जड़ को बारीक पीसकर गाय के दूध के साथ सेवन करने से बंध्यात्व दोष का निवारण होता है।

आककई–[मरा०] ककही। महासमंगा।

आकड़ा–[हिं०] आक। अर्क। मदार।

आकड़ो–[गु०] आक लाल। रक्तार्क।

आकदामु–[गु०] } आक। अर्क। मदार। अकवन।
आकन–[हिं०]

आकनपाता गाछ–[बँ०] दतिधारक। तरुभेद।

आकनादि–[बँ०] पाठा। पाढ़ी। पुरइन पाती।

आकरकरभ–[सं०] } अकरकरा। अकरकरहा।
आकरकरहा–[म०]
आकरकरा–[बँ०]

आकरज–[सं०] रत्न। मणि। जवाहर।

आकरोट–[बँ०] अखरोट। अक्षोट।

आकर्षक–[सं०] पाषाणभेद। पत्थरचूर। पखानभेद।

आक लाल–[हिं०] आक लाल। रक्तार्क। इसका विवरण इत्यादि 'आक' के ही अंतर्गत लिखा जा चुका है।

आकली–[सं०] गौरैया। चटक।

आकल्ल–[सं०] } अकरकरा। आकरकरभ।
आकल्लक–[म०]

आक सफेद–[हिं०] आक सफेद। सफेद आक। श्वेतार्क। इसका विवरण इत्यादि 'आक' के ही अंतर्गत लिखा गया है।

आकारकरभ–[सं०] } अकरकरा। आकरकरभ।
आकारकरभा–[सं०]

आकाव–[हिं०] आक लाल। रक्तार्क।

आकाश–[सं०] १. अबरक। अभ्र। २. आसमान। गगन।

आकाशगड्डु–[द०] नाही। नाई वृक्ष।

आकाशतामरे–[क०] } जलकुंभी। वारिपर्णी।
आकाशतामरै–[द्रा०]

आकाशपटल–[सं०] अबरक। अभ्र।

आकाशमांसी–[सं०] आकाशमांसी। आकासमांसी। छोटी जटामांसी। [सं०] सूक्ष्म जटामांसी। [क०] आकाश जटामांसी।

यह एक प्रकार की जटामांसी है जो केदार नामक पर्वत पर उत्पन्न होती है।

गुण—शीतल, शरीर के रंग को उज्ज्वल करनेवाली तथा सूजन, नाड़ी रोग, लूता, गर्भछेदक, जाला आदि का नाश करने-वाली है।

आकाशमूलिका–[सं०] } जलकुंभी। वारिपर्णी।
आकाशमूली–[सं०]

आकाशलता–[सं०] } अमरबेल। अमर लता। अमर-लत्तो।
आकाशवँवर–[हिं०]
आकाशवल्लरी–[सं०]
आकाशवल्लिका–[सं०]
आकाशवल्ली–[सं०]

आकाशवल्ली–[सं०] अमरबेल नं० २। अमरलत्ता।

आकाशबेल–[हिं०] १. अमरबेल। आकाशवल्लरी। २. अमरबेल नं० १। ३. अमरबेल नं० २।

आकाशवेलि–[हिं०] } अमरबेल। आकाशवल्लरी। अमर-लत्ती।
आकाशवेली–[हिं०]
आकाशबो–[हिं०]

आकास जटामांसी–[हिं०] आकाशमांसी, सूक्ष्म जटामांसी।

आकासबेल–[हिं०] अमरबेल नं० २।

आकासमांसी–[हिं०] आकाश मांसी, सूक्ष्म जटामांसी।

आकाहुलो–[यू०] } अर्कपुष्पी। अर्कहुली।
आकाहुली–[यू०]

आकीन–[सं०] चंपा। चंपक पुष्प वृक्ष।

आकु–[उ०] ईख। इक्षु। ऊख।

आकुपत्री–[ते०] तेजपत्ता। पत्रज।

आकुल–[सं०] खचर। अश्वभेद।

आकुलकृत–[सं०] अकरकरा। आकरकरभ। अकरकरहा।

आकूट–[सं०] आगई। फल विशेष।

आकृति–[सं०] लक्ष्मणा। लछमना बूटी।

आकृतिच्छत्रा–[सं०] तोरई। कोशातकी। तरोई।

आकृतिच्छत्री–[सं०] १. तोरई। कोशातकी। २. जल-कुंभी। वारिपर्णी।

आकोंद–[हिं०] आक। अर्क वृक्ष।

आक्रोट–[बं०] } अखरोट। आचोट। पहाड़ी पीलु।
आक्रोड–[मरा०]

आक्षिक–[सं०] आच्छुक। रंजनद्रुम। आल।

आक्षिक शीधु–[सं०] बहेड़े, गुड़, धातकी पुष्प इत्यादि से बनी हुई तीक्ष्ण मदिरा।

आक्षिकी सुरा–[सं०] बहेड़े और शालिधान से बनी हुई मदिरा।

आक्षीव–[सं०] सहिंजन। शोभांजन वृक्ष। मुनगा।

आक्षेप–[सं०] } वातरोग भेद। आक्षेप वात।
आक्षेपक–[सं०]

आक्षोट–[सं०] } अखरोट। अक्षोट। पहाड़ी पीलु।
आक्षोड–[सं०]

आखंड्य–[गु०] ओखड़। तारागा मृत्तिकोद्भवा।

आख–[संता०] ईख। इक्षु। ऊख।

आखनिक–[सं०] १. सूअर। शूकर। वाराह। २. चूहा।

मूसा। मूषिक।

आखरोट–[बं०] अखरोट। अक्षोट।

आखसंद–[गु०] असगंध। अश्वगंधा।

आखांदि–[बं०] पाठा। पाढ़ी। पुरइन पाती।

आखु–[सं०] १. सूअर। शूकर। वाराह। २. चूहा। मूसा। मूषिक।

आखुक–[सं०] १ सूअर। शूकर। २. चूहा। मूसा। मूषिक। ३. देवदाली। घघरबेल। देवताड़।

आखुकर्णपर्णिका–[सं०]
आखुकर्णी–[सं०] } मूसाकानी। मूषिकपर्णी। चूहाकन्नी।

आखुगंधी–[सं०] आँबा हलदी। आम्रगंध हरिद्रा। आमा हलदी।

आखुजित्–[सं०] भुइँआँवला। भूम्यामलकी। पाताल आँवला।

आखुपर्ण–[सं०]
आखुपर्णिका–[सं०] } मूसाकानी। मूषिकपर्णी।

आखुपर्णी–[सं०] १. मूसाकानी। आखुकर्णी। २. दंती। दात्यूनी। ३. मंडूकपानी। मंडूकपर्णी।

आखुपाखाण–[हिं०]
आखुपाखान–[हिं०] } संखिया। सोमल खार। आखुपाषाण।

आखुपाषाण–[स०] १. संखिया। सोमल खार। २. चुंबक। लौह चुंबक। चुंबक पत्थर।

आखुफला–[सं०] दंती। दात्यूनी। जमालगोटे की जड़।

आखुभुक्–[सं०] १. ओंगा लाल। रक्तापामार्ग। लाल चिचड़ा। २. बिल्ली। बिडाल।

आखुमांस–[सं०] चूहे का मांस। मूषिकमांस। चूहे का गोश्त।

आखुविष–[स०] दारुमोचा विष। दारुमुचा।

आखुभिषजित्–[स०] सतिवन। सप्तपर्ण वृक्ष। छतिवन।

आखुविषहा–[स०]
आखुविषापहा–[स०] } देवदाली। घघरबेल। बंदाल। सोनैया।

आखुश्रुति–[सं०]
आखूकर्णी–[स०] } मूसाकानी। मूषिकपर्णी।

आखूपाषाण–[स०] संखिया। सोमल खार।

आखेत–[स०] १. अमलतास। आरग्वध। घनबहेड़ा। २. कूट। कुष्ठ।

आखोट–[सं०]
आखोड–[सं०] } अखरोट। अखोट वृक्ष। पहाड़ी पीलु।

आखोडमरण–[क०]
आखोडमरन–[क०]
आखोडमरनु–[क०] } सिहोरा। शाखोट वृक्ष। सिहोर।

आखगुफुटामाण–[गु०] शंखिनी। यवतिक्ता। यवेची।

आगंतुक ज्वर–[सं०] ज्वरभेद। जो ज्वर (१) शस्त्र-प्रहार से, (२) भूत-बाधा से, (३) काम, क्रोध, शोक और भय की अधिकता से, (४) विष-भक्षण से और (५) शाप से उत्पन्न हो, उसे आगंतुक ज्वर कहते हैं। यह उपर्युक्त पाँच कारणों से पाँच प्रकार का होता है। इनमें से तीसरे के ४ भेद हैं—कामज्वर, क्रोधज्वर, शोकज्वर और भयज्वर।

आग–[हिं०] १. आक। अर्क वृक्ष। मदार। २. अग्नि। पावक।

आगई–[हि०] आकूट। (फल विशेष)

आगगंत–[बं०]
आगगांत–[ब०] } अरनी। अग्निमंथ। गनियारी।

आगदमन–[हिं०]
आगदवन–[हि०] } अग्निदमनी। धमासा भेद।

आगनचशमानोकाच–[गु०] आतशी शीशा। सूर्य्यकांत।

आगमावर्त्ता–[सं०] १. वृश्चिकाली। बिछाती। २ मेढ़ासिंगी। मेषशृंगी।

आगस्त्य–[सं०] अगस्त। वक वृक्ष।

आगाकार–[ते०] खेखसा। कर्कोटकी।

आगार-गोधिका–[स०] छिपकली। गिरगिट। बिछुवंतिया।

आगार-धूम–[सं०] झोल। गृहधूम।

आगियो–[गु०] कुरंड। कुरंडिका।

आगोदवण–[मरा०] अगस्त। वक वृक्ष।

आग्नेय–[स०] १. सोना। स्वर्ण। २. घृत। घी। ३. चिल्हक। गंधारी।

आग्नेय वायु–[स०] अग्निकोण से आनेवाली हवा।

आग्या–[मरा०] बिछुआ घास। वृश्चिका क्षुप।

आग्यो–[मा०] कुरंड। कुरंडिका वृक्ष।

आग्रमास–[स०] चीता। चित्रक।

आघट्टक–[सं०] ओंगा लाल। रक्तापामार्ग। लाल चिचड़ा।

आघाट–[स०]
आघाटा–[सं०] } ओंगा। अपामार्ग। चिचड़ा।

आघाड़ा–[मरा०] ओंगा। अपामार्ग। चिचड़ा।

आघात–[स०] क्षत। चोट।

आघात ज्वर–[सं०] आगंतुक ज्वर।

आघार–[सं०] घृत। घी।

आच–[बं०] १. आच्छुक। रंजन वृक्ष। २. आच्छुक नं० १ ३ आच्छुक नं० २।

आचफुलेर गाछ–[बं०] आच्छुक। आच।

आचमन–[स०] सुगंधबाला। नेत्रबाला।

आचरप्रिय–[सं०] विषमंडल। पिंडार।

आचारी–[स०] हुरहुर साग। हिलमोचिका।

आचित–[स०] तौल का एक परिमाण। १० भार। २५ मन।

आचु–[सं०] १. आच्छुक। रंजनद्रु। २. [उ०] आच्छुक नं० २।

आच्छक–[सं०] आच्छुक। रजनद्रु।
आच्छादन–[सं०] कपास। कार्पास।
आच्छादन-फला–[स०] कपास लाल। रक्त कार्पास नादनवन।
आच्छादनी–[स०] कपास। कार्पासी।
आच्छुक–[सं०] १. आल। २. रंजनद्रु। ३. आल नं० १ ४. आल नं० २।
आछु–[बँ०] आल नं० १।
आज–[सं०] १. घृत। घी। २. बकरी का घी। छागघृत। [अ०] १. सींघ। शृंग। २. हाथीदाँत। हस्तिदंत।
आजक–[सं०] १. घृत। घी। २. बकरी का घी। छागघृत।
आजक्षीर–[स०] बकरी का दूध। छागदुग्ध।
आज नवनीत–[सं०] बकरी के दूध का बना हुआ मक्खन। छाग के दूध का नवनीत। छाग-दुग्ध-जात नवनीत।
आजन्म सुरभिपत्र–[सं०]
आजन्म सुरभिपत्रा–[सं०] } मरुआ। मरुवक। (पुष्पवर्ग)
आजबला–[मरा०] १. बर्बरी। बनतुलसी। बबरी। २. [हिं०] सफेद नगदी। ३. काली नगदी।
आजमुदा अजवाँ–[द०] आजमोदा। आजमोदिका। अजमोद।
आजमूत्र–[सं०] बकरी का मूत्र। छाग-मूत्र।
आजरस–[सं०] बकरी के मांस का शोरबा। छाग के मांस का क्वाथ। छागमांस क्वाथ।
आजवल्ल–[सं०] बर्बरी। बनतुलसी। मरुवक।
आजर्स्म सुरभिपत्र–[सं०] मरुआ। मरुवक (पुष्पभेद)।
आजा–[स०] बकरी। छागी। छेरी।
आजाद दरख्त–[फा०] बकायन। महानिंब वृक्ष।
आजाद दरख्ते हिंदी–[फा०] नीम। निंब वृक्ष।
आजानुल फार–[अ०] मूसाकानी। आखुकर्णी।
आजामोदा–[ते०]
आजामौदा–[ते०] } अजमोदा। बनयवानी। अजमोद।
आज्य–[स०] १. घृत। घी। २. गंधा-बिरोजा। श्रीवास। सरल वृक्ष का गोंद।
आटरुष–[सं०]
आटरुषक–[स०]
आटरूष–[स०]
आटरूषक [स०] } अडूसा। वासक। वासा। विसोटा। बाकस।
आटरूषा–[स०] सोनापाठा भेद। श्योनाक भेद।
आटर्डीनी शींग–[गु०] मेढ़ासिंगी। मेषशृंगी।
आटालांटिक–[मला०] अडूसा। वासक।
आटि–[स०] आडिमत्स्य। 'आंडि' नाम की मछली।
आठकी–[स०] गोपीचंदन। सौराष्ट्रमृत्तिका।
आठक्षार–[हिं०]
आठखार–[हिं०]
आठोखार–[हिं०] } क्षाराष्टक। आठ प्रकार के खार। यथा–ढाक, थूहर, ओंगा, इमली, आक, तिल वृक्ष और जौ इन सातों का खार और सज्जीखार।
आडंसोगे–[क०] १. अडूसा। आटरूपक। वासा। वासक। २ कीटमारी। कीड़ामारी।
आडक–[ते०] कुँदरू। गुंदबरोसा।
आडतींडा पालै–[द्रा०] १ बसतांत्री। अजांत्री। २. कीटमारी। कीड़ामारी।
आडसार–[ते०]
आडादौड़े–[द्रा०]
आडापाकु–[ते०]
आडासार–[ते०] } अडूसा। आटरूपक। वासा। वासक। विसौटा। बाकस।
आडि–[स०] १. आटि मत्स्य। आटि मछली। २. शरारी पक्षी। बगली।
आडिमच्छि–[हि०]
आडि मत्स्य–[सं०] } आटि मत्स्य। आडि मछली।
आडी–[स०]
आडीकी–[स०] } शरारी। बगली पक्षी।
आडुतीडाचालई–[द्रा०] कीटमारी। कीड़ामारी।
आडुसोगे–[क०] अडूसा। आटरुप।
आडू–[मा०] सतालुक। सतालू।
आढ़क–[स०] कलिंग की एक मान या तौल। परिमाण १ तोला। ४ प्रस्थ ८ सेर। (३२=
आढ़की–[सं०] १. गोपीचंदन। सौराष्ट्रमृत्तिका। सोरठ की मिट्टी। २. अरहर। शिमी धान्य विशेष। रहर।
आढ्यपवन–[स०] ऊरुस्तंभ। (रोग)
आढ्यवात–[स०] वातरक्त। (रोग)
आतंक–[स०] ज्वर। संताप।
आत–[द०] शरीफा। आतृप्य।
आतइच–[बँ०] अतीस। अतिविषा।
आततुम्मटि–[द्रा०]
आततुम्मडिकाय–[द्रा०] } इनारू। इंद्रवारुणी।
आतपाणका–[स०]
आतपर्णी–[सं०] } खिरनी। क्षीरिका वृक्ष।
आतशक–[हि०] उपदंश। गर्मी नामक रोग।
आतशी शीशा–[हिं०] आतशी शीशा। सूर्य्यकांत। [मरा०] सूर्य्यकांत मणि। [गु०] अगन चशमानो काँच। [अं०] Magnifying glass.

आतशी शीशा एक प्रकार का शीशा है जो सूर्य्य के सामने रखने से अग्नि उत्पन्न करता है और आप आँच सह सकता है। जो आतशी शीशा चिकना, तुष-रहित और आकाश के समान निर्मल हो, वह उत्तम है।

गुण—त्रिदोषनाशक, मेधाजनक, रसायन, गरम, निर्मल तथा वात और कफ-नाशक है। इसका पूजन करने से सूर्य्य देवता प्रसन्न होते है।

आतशी शीशी–[हि०] आतशी शीशे की बनी हुई शीशी जो आग में पड़ने से मामूली शीशे के समान नहीं टूटती और अग्नि का ताप सहन करती है। इसके द्वारा कई प्रकार के रस और भस्म तैयार की जाती है।

आतसपाथर–[बँ०], **आतसी सीसा**–[हि०], **आतसी सीसी**–[हि०] } आतशी शीशा। सूर्य्यकांत। आतशी शीशी।

आता–[बँ०], **आतागाछ**–[बँ०] } शरीफा। आतृप्य। सीताफल।

आतापिः–[सं०], **आतापी**ः–[स०] } चील पक्षी। चिल्ल।

आति–[सं०] १. शरारी पक्षी। बगली। शराली। २ [द्रा०] अगस्त। वक वृक्ष।

आतृप्य–[स०] शरीफा। सीताफल।

आत्ततुम्मटि–[द्रा०], **आत्ततुर्म्मड़िकाय**–[द्रा०] } इनारू। इंद्रवारुणी।

आत्ति–[द्रा०] अगस्त। मुनिद्रुम।

आत्मगंधक–[स०] बोल। मुरमकी। खूनखराबा। बीजाबोल।

आत्मगंधि हरिद्रा [स०] आंबा हलदी। आम्रगंध हरिद्रा। आमा हलदी।

आत्मगुप्ता–[स०] १. कोंछ। किवाँछ। कपिकच्छु। २. शतावर। शतावरी।

आत्मघोष–[स०] १. कैाआ। काक पक्षी। कौवा। २. मुरगा। कुक्कुट

आत्मघोषा–[स०] १. कौआ। काक पक्षी। २. मुरगा। कुक्कुट पक्षी।

आत्मजा–[स०] १. घीकुआर। घृतकुमारी। ढेकुआर। २. कोंछ। किवाँछ। आत्मगुप्ता।

आत्ममूली–[स०] धमासा। दुरालभा। हिंगुआ।

आत्मरक्षा–[स०] इनारू बड़ी। महेंद्रवारुणी। बड़ी इंद्रायन।

आत्मशल्या–[सं०] सतावर। शतावरी।

आत्मोद्भवा–[स०] १. मषवन। माषपर्णी। बनउरदी। २. बनमूँग। मुद्गपर्णी। मुगवन। ३. घीकुवार। घृतकुमारी। ग्वारपाठा।

आत्यूक–[स०] राँगा। वंग। कथील।

आदंबरा–[हि०] मूँग की बड़ी। मुद्गवटिका।

आदा–[बँ०] अदरक। आर्द्रक। आदी।

आदाना–[सं०], **आदानी**–[सं०] } ननुआ। घोषक लता। घिउरा।

आदित्य–[सं०] १. आक। अर्कवृक्ष। मदार। २. सूर्य्य। सूरज। आफताब।

आदित्यकांता–[स०], **आदित्यतेजा**–[स०] } हुरहुर। आदित्यभक्ता।

आदित्यपत्र–[सं०], **आदित्यपत्रक**–[स०], **आदित्यपत्रा**–[सं०] } आदित्यपत्र। अर्कपत्र। [हिं०] हुरहुर का भेद। आदित्यभक्ता भेद। एक प्रकार का हुरहुर।

गुण—चरपरा, कड़वा, कसैला, उष्णवीर्य्य, अग्निप्रदीपक, रूखा, दस्तावर, हलका, स्वर को उत्तम करनेवाला तथा कफ, वातरोग, रुधिर-विकार, ज्वर, खाँसी, श्वास, विस्फोटक, कोढ़ और प्रमेह का नाश करनेवाला है।

आदित्यपर्णिका–[स०], **आदित्यपर्णिनी**–[सं०], **आदित्यपर्णी**–[सं०] } १. हुरहुर। आदित्यभक्ता। २. सूरजमुखी (फूल)। गुल आफ़ताब-परस्त।

आदित्यपुष्पा–[सं०] १. धातकी। धौ। धव। २. चीरकाकोली। चीरकाउली।

आदित्यपुष्पिका–[स०], **आदित्यपुष्पी**–[स०] } आक। अर्क। मदार।

आदित्यबंधु–[सं०] १. कमल। पद्म। २. हुरहुर। आदित्यभक्ता।

आदित्यबंध्या–[स०] १. कमल। पद्म। २. हुरहुर। आदित्यभक्ता।

आदित्यभक्ता–[स०], **आदित्यभक्ति**–[स०], **आदित्यवल्लभा**–[स०], **आदित्यवल्लिका**–[स०], **आदित्यवल्ली**–[स०] } हुरहुर। ब्रह्म सोंचली। हुरहुल।

आदिवृक्ष–[स०] अश्मंतक। आबुटा।

आदी–[हि०], **आदु**–[गु०], **आदे**–[मरा०] } अदरक। आर्द्रक। अदरख।

आद्य–[स०] धान। धान्य।

आद्यमाषक–[सं०] १. कलिंग का एक माना तौल या परिमाण। एक माशा। २. ८ रत्ती। ३. ५ रत्ती।

आद्यमाषा–[स०] मषवन। माषपर्णी।

आधा शीशी–[हि०] १. सूर्य्यावर्त्त। शिरोरोग-भेद। २. अर्धावभेदक। अधकपारी। [अं०] Hermicrania.

अत्यंत रूखे पदार्थों का भक्षण करने से, अधिक भोजन करने से, भोजन के ऊपर भोजन करने से, पूरब के पवन का सेवन करने से, अत्यंत बर्फ का सेवन करने से, अधिक मैथुन करने से, मल-मूत्र आदि के वेगों को रोकने से, अधिक श्रम और कसरत इत्यादि कारणों से केवल वायु कुपित होकर अथवा कफ-संयुक्त वायु कुपित होकर आधे शिर को ग्रहण करके, मन्या नाड़ी, भौंह, कनपटी, कान, नेत्र और ललाट में एक

ओर से पीड़ा करती है। यह पीड़ा शस्त्र और आरी से काटने या चीरने सरीखी होती है। इसको संस्कृत में अर्धावभेदक और हिंदी में आधा-सीसी कहते हैं। यह रोग जब अधिक बढ़ जाता है, तब एक ओर से कान और आँख को नष्ट कर देता है।

इस रोग की नाशक ओषधियाँ और उनकी प्रयोग-संख्या—अपराजिता नीली नं० ५। अरहर नं० ७। करंज नं० ६। कुचला नं० २८। केसर नं० ७, २२। गाजर नं० ६। गिलोय नं० १४। गुंजा नं० ११। घीकुवार नं० ३४। घृत नं० १५। चकवड़ नं० २१। चौलाई नं० २५। जमालगोटा नं० १२। जल नं० २०। तमाखू नं० ३०। तिल नं० १२, २८। देवदाली नं० १०। नकछिकनी नं० ५। नौसादर नं० ५, १६। बच नं० ४। माँड़ नं० ३। मिर्च नं० २०, २७। मुचकुंद नं० २। मेंहदी नं० ३६। मैनफल नं० २२। राई काली नं० २३। रीठा नं० १८, २०। संखिया नं० ७। सत्तावर नं० २०। सोंठ नं० २०। हरीतकी नं० १७। हींग नं० ६।

आधीझाड़–[हि०]
आधीझाड़ा–[हि०]
आधीझार–[हि०]
आधीझारा–[हि०]
} ओंगा। अपामार्ग। चिचिड़ा। लटजीरा।

आध्मान–[सं०] वातरोग भेद। [हि०] वायुरोग। शूल। अफरा। पेट फूलना। [अ०] नफख। [अं०] Flatulence.

वायु से पक्काशय का फूलना, पेट में गुड़-गुड़ शब्द होना, पीड़ा करना तथा मलद्वार के पवन का रुक जाना आध्मान कहा जाता है।

इस रोग की नाशक ओषधियाँ और उनकी प्रयोग-संख्या—अकरकरा नं० १६। अजमोदा नं० ३। अजवायन नं० ३, ५। अजवायन का तेल नं० ४। अदरक नं० ४। अमरबेल नं० ७। अमरबेल के बीज नं० २। अरनी नं० ६। अरितमंजरी नं० १४। आंबा हलदी नं० ३। आँवला नं० ५०। इनारू नं० ४, ६। इलायची बड़ी नं० १०। उड़द नं० १७। एरंड का तेल नं० ६। कचनार लाल नं० ८। करंज नं० २१। कामरूप नं० ४। गूगल नं० ६। गूलर नं० २१। घीकुवार नं० ८, ३६। घीकुवार लाल नं० ६। चंपा नं० १०। चना नं० ५। जटामांसी नं० ५। जायफल नं० १०, १३। ढाक के पत्ते नं० ८। तालीस-पत्र नं० २। तेजपत्ता नं० ७। त्रिफला नं० ५। थूहर नं० २। दशमूल नं० १०। नमक नं० ४। नाड़ी हिंगु नं० ११। नारंगी नं० १६। नील नं० ८। प्याज नं० २६। पेठा नं० ४। बच नं० १६। बरियारा नं० २२। बाजरा नं० ३। बिजौरा नींबू नं० १०। बेल नं० १२। भूतृण नं० ७। भोजपत्र नं० २। मुंडी नं० २७। मुनक्का नं० ११। मुसब्बर नं० ५, २०, २४। मेथी नं० ७। मोठ नं० २, ४। रंगलता नं० ५। लताकरंज नं० ३१। लहसुन नं० ६। शीतलचीनी नं० ६। श्रीवल्ली नं० ६। समुद्रफल नं० २४, ७१। सरफोंका नं० ४। सहिंजन नं० ३१। हरीतकी नं० ४। हींग नं० ५। हुरहुर नं० ३।

आध्मानी–[सं०] नलिका। कपोतचरणा।

आनंद–[सं०] मदिरा। मद्य। शराब।

आनंदा–[सं०] १. भांग। विजया। २ बेला। वार्षिकी पुष्प वृक्ष। ३. आराम शीतला। रामशालि। ४ बनमूंग। मुद्गपर्णी। मुगवन। ५ जामुन बड़ा। जंबु वृक्ष। फरेंदा।

आनंदी–[सं०] आराम शीतला। रामशालि।

आनपचेटुं–[ते०] निष्पाव। राजशिंबी। भटवांस।

आनर्त्त–[सं०] जल। पानी।

आनाब–[अ०] अंगूर। अपक्क द्राक्षा।

आनार–[बं०] अनार। दाड़िम।

आनाह– सं०] आनाह रोग। मलमूत्र का रोध। कब्जियत। दस्त और पेशाब का साफ न होना।

आंव किंवा मल पेट में क्रम से संचित हो, कुपित वायु से सूखकर दृढ़ हो, मलद्वार से सुगमतापूर्वक न निकलने के कारण पेट फूलकर तन जाय तो आनाह रोग कहा जाता है।

इस रोग की नाशक ओषधियाँ और उनकी प्रयोग संख्या—ईख का रस नं० २।

आनीसन–[यु०] सौंफ। मिश्रेया।

आनील–[सं०] रांगा। वंग। कथील।

आनुलफार–[अ०] मूसाकानी। आखुकर्णी।

आनुवासनिक–[सं०] वस्तिकर्म। अनुवासन वस्ति।

आनूप–[सं०] १. भैंस। महिष। २. अनवास। अवास। ३ इज्जल। हिज्जल वृक्ष। ४. अनूप देश के रहनेवाले जंतु; जैसे—गैंड़ा, भैंस, सूअर इत्यादि।

आनेब्याल–[क०] शालई। शल्लकी वृक्ष।

आप–[सं०] १. जल। पानी। २. सुगंधबाला। नेत्रबाला। बालक।

आपगाजल–[सं०]
आपगावारि–[सं०]
आपगासलिल–[सं०]
} नदी का जल। नदी-जल। वि० दे० "जल, नदी का"।

आपट–[मरा०]
आपटा–[मरा०]
} १. अश्मंतक। आवुटा। २. कचनार सफेद। श्वेत कांचनाल वृक्ष।

आपन–[सं०] काली मिर्च। वि० दे० "मिर्च काली"।

आपनिक–[सं०] नीलम। इंद्रनील मणि।

आपस्तंभिनी–[सं०] शिवलिंगी। लिंगिनी लता। पँचगुरिया।

आपां–[बं०]
आपांग–[बं०]
} ओंगा। अपामार्ग। चिचड़ा।

आपालि–[सं०] केशकीट। बालों के कीड़े। जूँ। ढील।

लीक। डींगर।

आपिंजर–[सं०] सोना। स्वर्ण।

आपीस–[सं०] १ तून। तूणी वृक्ष। २. रूपामाखी। रौप्य-माक्षिक धातु। ३ सोनामाखी। स्वर्णमाक्षिक धातु। ४. कमलकेसर। पद्मकेसर।

आपीन–[सं०] तून। तूणी वृक्ष। नंदीतरु।

आपुप–[सं०] आनूप। अनूप देश के जीव। गैंडा, सूअर, भैंस इत्यादि।

आपू–[क०] गोंदपटेर। गुंद्रपटेरा।

आपूट–[मरा०] कचनार सफेद। श्वेत कांचनाल। सफेद कचनार।

आपूप–[सं०] आनूप। अनूप देश के जीव।

आपूप्य–[सं०] १ सत्तू। शक्तव। सतुआ। २ चूर्ण। चून। आटा। मैदा।

आपूष–[सं०] रांगा। वंग। कथील।

आप्य–[सं०] कूट। कुष्ठोषधि। कूठ।

आप्स समरतुल् तुरफा–[फा०] महुआ। मधूक वृक्ष।

आफतीमून–[यू०] अमरबेल नं० १। आकाशवल्लरी। अमरलता।

आफन–[मरा०]
आफि–[बं०]
आफिंग–[बं०]
आफिन–[बं०]
} अफीम। अहिफेन। अफ्यून। पोस्तदाने का दूध।

आफिस्ती–[अ०] मरुआ। मरुवक।

आफीं–[बं०]
आफीन–[बं०]
आफु–[हिं०]
आफू–[हिं०]
आफूक–[हिं०]
} अफीम। अहिफेन। अफ्यून। पोस्तदाने का दूध।

आब–[फा०] जल। पानी।

आबइची शेंग–[मरा०] सेम सुअरा। कोलशिंबी। सुअरा शेम।

आबगीना–[फा०] कांच। शीशा।

आबनजूल–[हिं०] अंडवृद्धि रोग। मुष्कवृद्धि।

आबनू–[हिं०]
आबनूस–[यू०]
} मकर तेंदुआ। काकतिंदुक।

आबनूस–[यू०] १. मकर तेंदुआ। काकतिंदुक। २. तेंदू। तिंदुक। गाव। गाभ।

आबनोस-इ-हिंदी–[अ०] तेंदू नं० १। तिंदुक। गाभ।

आबिलकंद–[सं०] मालाकंद।

आबीर–[बं०] अबीर। धूलिगुच्छ।

आबुटा–[हिं० मरा०]
आबूटा–[हिं०, मरा०]
} अश्मंतक। आपटा।

आबेहलद–[मु०]
आबेहल्द–[मु०]
} गंधपलाशी। शठी। कपूरकचरी। कचूर-भेद।

आब्दिका–[सं०] १. इमली। तिंतिड़ीक। २. विषांबिल। वृक्षाम्ल। महादा।

आब्याचे साट–[मरा०] अमावट। आम्रवर्त्त।

आभ–[सं०] अबरक। अभ्रक।

आभा–[सं०] बबूर। बबूल वृक्ष। कीकर।

आभ्रगंधि हरिद्रा–[सं०] आंबा हलदी। आम्रगंध हरिद्रा। आम आदा।

आमंड–[सं०] १ एरंड। रेंडी। २. अनन्नास। बहुनेत्रफल।

आमंडक–[सं०] एरंड। आमंड। रेंडी।

आमंडवास–[सं०] आसव। कच्ची औषधियों से बनी हुई मदिरा।

आमंडु–[सं०] एरंड सफेद। शुक्लैरंड।

आम–[हिं०, बं०, मरा०, प०] आम। [सं०] आम्र। चूत। रसाल। कामांग। मधुदूत। माकंद। पिकवल्लभ। अति-सौरभ। सहकार, आदि। [बं०] आंब। आम्र। [मरा०] आंबा। [मा०] आंबो। [गु०] आंबो। आंबानु झाड़। आंबासु झाड़। [क०] माविन। मविना। मावेना। मावु। अंबा। [ते०] मामिडि। मामिडिकाय। मावी। माकौ-डमु। [ता०] मामर। मांग मरम। मामंगास। [द०] आंबा। [क०] माविनकायि। [द्रा०] मांगाय। [गोंग०] मार्को। [कोल०] उली। [सता०] उल। [फा०] अंबह। [अ०] अंबज। [ले०] Mangifera Indica Syn: Mangifera Domestica. [अं०] Mango, Mango tree.

आम का वृक्ष इस देश में प्रायः सर्वत्र पाया जाता है। विशेषकर गरम प्रदेशों में अधिक उत्पन्न होता है।

इसका वृक्ष बड़ा, छाल मोटी, कालापन लिए खाकी रंग की और खुरदरी होती है। पुराने वृक्ष की लकड़ी खाकी या कुछ कालिमा लिए भूरे रंग की, दृढ़ और छोटे वृक्ष की कोमल होती है। पत्ते ५ से १२ इंच तक लंबे और अनीदार होते हैं। फल २ से ६ इंच तक या अधिक लंबे, गोलाकार और पकने पर पीले रंग के हो जाते हैं। छोटे, बड़े, खट्टे, मीठे इत्यादि फलों के भेद से यह अनेक प्रकार का होता है, किंतु सबके पत्ते और वृक्ष एक समान होते हैं।

आम की दो जातियां होती हैं—एक बीजू आम और दूसरा कलमी आम। बीजू आम बीज से उत्पन्न होता है और कलमी डालियों में बांधकर फिर कलम (काट) कर उत्पन्न किया जाता है। बीजू के वृक्ष बड़े बड़े होते हैं और कलमी के मध्यमाकार तथा झोंपड़ानुमा होते हैं। ये दोनों ही स्वाद के भेद से अनेक प्रकार के होते हैं। किसी का स्वाद खट्टा, किसी का खट्टा-मीठा और किसी का मीठा होता है। कलमी आम

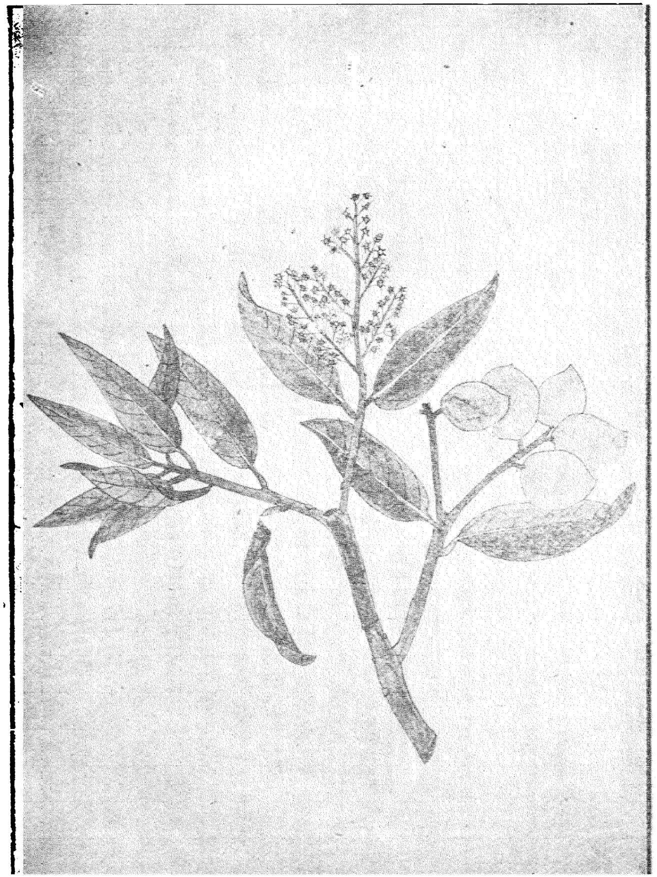

आम

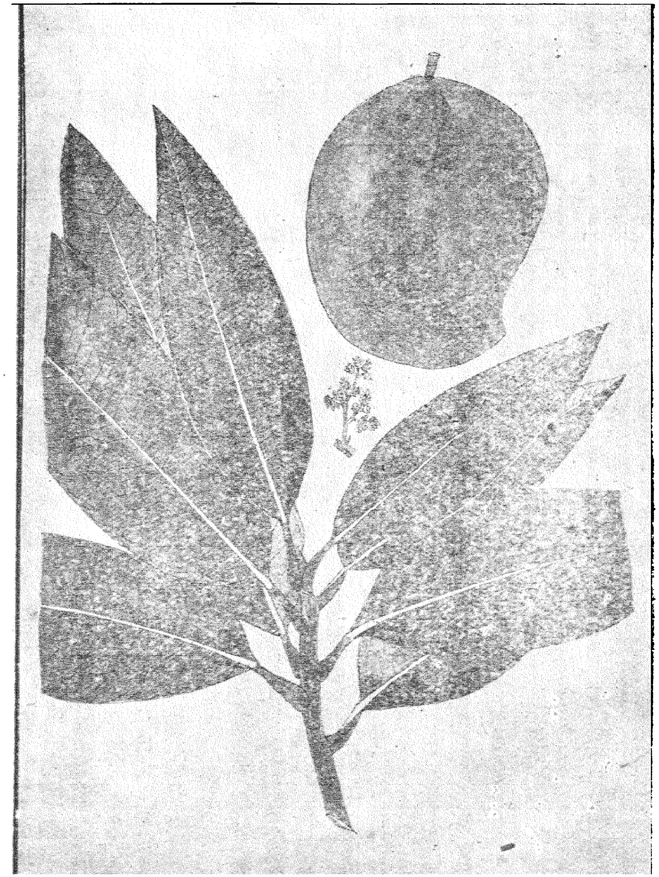

आम कलमी

प्रायः सुस्वादु होते हैं और इन्हीं को लोग पसंद करते हैं। मिट्टी के भेद तथा सर्दी, गर्मी, वर्षा की बढ़ती और कमी के अनुसार इस वृक्ष के आकार, फल की संख्या और गुण में भेद होते हैं। आम का बागीचा ऐसे स्थान में लगाना चाहिए जहाँ वृक्षों को भली भाँति स्वच्छ वायु मिल सके और सूरज की रोशनी भी अच्छी तरह प्राप्त हो। दुमट मिट्टीवाली भूमि को भली भाँति जोत, फासला निश्चय कर थाले लगाने के लिये, जमीन दो हाथ गहरी खोद, पश्वादिकों की हड्डी का चूर्ण पाँच सात सेर छोड़, उत्तम खाद मिला थाले को रोपन करे। हड्डी मिलाने से पौधे तेजी से बढ़ते है और फल भी बड़े होते हैं।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—पका आम मधुर, वीर्य्यवर्द्धक, पुष्टिकारक, बलकारक, कांतिजनक, तृप्तिकारक, रुचिकारी, भारी, हृदय को हितकारी, शीतल, मलरोधक तथा वात और प्रमेह-नाशक एवं अग्नि और कफ को बढ़ानेवाला है।

वृक्ष का पका फल—भारी, मधुर, खट्टा, अत्यंत वातहारक और किंचित् पित्त को कुपित करनेवाला है।

पाल का पका हुआ आम—कुछ खट्टा और मधुर, बासी होने पर हलका, शीतल, रुचिकारी, दस्तावर, शीघ्र पचनेवाला तथा बल और वीर्य्य को बढ़ानेवाला है।

कच्चा आम—कसैला, खट्टा, रुचिकारी तथा वात और पित्तकारक है।

अपक्व या कच्चा आम—अत्यंत खट्टा, रूखा, त्रिदोषकारक और रुधिर का विकार उत्पन्न करनेवाला है।

आम की खटाई—खट्टी, कसैली, स्वादिष्ठ, दस्तावर और कफ तथा वात-नाशक है।

आम का निचोड़ा हुआ रस—भारी, वातहारक, दस्तावर, तृप्तिकारक, अत्यंत बृंहण, कफकारी और हृदय को हानिकारक है।

कनरा हुआ आम—भारी, रुचिकारी, मधुर, बृंहण, शीतल, बलकारक, वातनाशक और देर में पचनेवाला है।

दूध के साथ खाया हुआ आम—रुचिकारक, बृंहण, बलकारक, वीर्य्य को संचय करनेवाला और शरीर के रंग को सुंदर करनेवाला है।

मधु-युक्त आम—राजयक्ष्मा, प्लीहा, वात और कफनाशक है।

घृत सहित आम—वात तथा पित्त-नाशक, अग्नि-दीपक तथा बल और वर्णकारक है।

आम अधिक खाने से मंदाग्नि, विषम ज्वर, रुधिर-विकार, अत्यंत कोष्ठ-रोध और आँख के रोग उत्पन्न होते हैं।

आम मे जो अवगुण कहे गए हैं, वे कच्चे और खट्टे आम के हैं, पके और मीठे आम के नहीं हैं।

आम की गुठली—कसैली, मधुर, किंचित् खट्टा रसवाली तथा वमन, अतिसार, रक्तातिसार और संग्रहणी को शांत करती है। रक्तार्श, रक्तप्रदर और कृमि रोग में भी इसका अच्छा गुण देखा जाता है।

आम की गुठली का तेल—कड़वा, कसैला, मधुर, रूखा, सुगंधित तथा मुँहासे, वात और कफ के रोगों को नष्ट करनेवाला है।

आम के नए पत्ते—कसैले, मलरोधक, रुचिकारी तथा वात, पित्त और कफ का नाश करनेवाले हैं।

आम के जड़ की छाल—कसैली, सुगंधित, रुचिकारी, मलरोधक और शीतल है।

आम की अंतर्छाल—मलरोधक, कसैली, दाहकारक, योनि को शुद्ध करनेवाली तथा पित्त, प्रमेह तथा कफ का नाश करनेवाली है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—कच्चा फल पहले दर्जे में ठंढा और रुक्ष, पका हुआ गरम और रुक्ष है। मंजरी ठंढी और रुक्ष है। स्नायु, प्राण, ओज, वृक्क, वस्ति, पक्वाशय और अंत्रि को बलकारक है, परंतु कलमी आम गरिष्ठ और दीर्घपाकी है। कच्चा आम लू और महामारी-पवन से व्याकुल मनुष्य को लाभकारी है।

फूल का चूर्ण—स्तंभनकारी तथा शुक्र, मेह, रुधिर और कफ-विकार में गुणकारी है।

बीजों की मींगी—वीर्य्य को सांद्रकर्त्ता और अतिसार-नाशक है।

पत्ते—ओज के शैथिल्य का नाश करनेवाले हैं।

आम खाली पेट में आध्मानकारक और गरम मिजाजवाले को हानिकारक है।

दर्पनाशक—जामुन, सिकंजबीन और ठंढा जल।

प्रयोग—१. आम वृक्ष की छाल, गोंद, पत्ते, फूल, फल और गुठली औषधि-प्रयोग में आती है।

संसार के सब फलों में आम का फल उत्तम और अधिक गुणकारी है, इसलिये इसको फलों का राजा कहते हैं। कवियों की कल्पना है कि जिस प्रकार स्वर्ग में अमृत है, उसी प्रकार पृथ्वी में यह अमृत फल है।

सब आमों में लँगड़ा आम प्रसिद्ध है। बनारस और हाजीपुर का लँगड़ा आम सबसे अच्छा होता है। बंबई का लँगड़ा मध्यम प्रकार का समझा जाता है। पूरब का गोला, लखनऊ का सफेदा, रामपुर का फजरी, मुरादाबाद का कलमी आदि आम भी अच्छे होते हैं। जिस आम में रेशा बहुत कम रहता है, गूदा अधिक होता है तथा जो स्वाद में खूब मीठा होता है, वही सर्वप्रिय होता है और उसी को उत्तम समझना चाहिए। यह जितना मीठा होता है, उतने ही उसमें गुण भी

अधिक होते हैं। आम में जो पुष्टिकारक, बलकारी, वीर्य्योत्पन्न-कारक इत्यादि गुण हैं, वे सब भली भाँति पके हुए और मीठे आम में ही होते हैं।

कच्चा आम अत्यंत खट्टा, गरम, कसैला, रुचिकारी तथा रुधिर और पित्त के रोग उत्पन्न करनेवाला होता है। खटाई का भाग अधिक होने से पाकस्थली में जाकर यह अधिक अम्लता उत्पन्न करता है। इसलिये जिनको अम्ल-पित्त की शिकायत हो, जिनको भोजन के बाद दाह उत्पन्न हो जाती हो या खटाई जिनके लिये हानिकारक हो, उनको कच्चा आम या आम की खटाई नहीं खानी चाहिए। इसके सिवा सर्दी, जुकाम, खाँसी, श्वास, प्रमेह, धातुक्षीणता आदि के रोगी को भी यह अत्यंत हानिकारक है। इसका अधिक उपयोग करने से हृदय में जलन, खट्टे डकारों का आना, वीर्य्यपात, मंदाग्नि आदि अनेक विकार उत्पन्न होते हैं। २. जब ग्रीष्म-ऋतु में भयंकर गरम लू चलती है, उस समय कच्चे आम को आग में भूनकर जल के साथ घोंट उसमें थोड़ी खाँड़ या मिस्री मिलाकर पीने से शरीर पर लू और गरमी का असर कुछ भी नहीं होता। विशेषकर लू से पीड़ित मनुष्यों को उपर्युक्त विधि से बनाया हुआ कच्चे आम का शर्बत अत्यंत लाभदायक होता है। इसको पीने से तत्काल लू की पीड़ा, प्यास, दाह आदि सब उपद्रव शांत होते हैं। डाक्टरी मत से शीताद आदि दंत रोगों में भी कच्चा आम विशेष हितकारी होता है। ३. कच्चे आम का झोल बनाकर उसमें जीरा, इलायची, सोंठ, हींग, नमक इत्यादि डालकर खाते हैं। यह अत्यंत स्वादिष्ट और रुचिकारक होता है। कच्चे आम की अनेक प्रकार की चटनियाँ और अचार बनाए जाते हैं। इस देश में आम की ही खटाई अधिक व्यवहार में आती है। ४. मधु के साथ खाया हुआ पका आम राजयक्ष्मा, प्लीहा, वात और कफ के रोगों को दूर करता है। घृत के साथ अग्नि को दीपन करता है, बल की वृद्धि और वर्ण को उज्ज्वल करता है एवं वायु तथा पित्त के रोगों को शांत करता है। दूध के साथ खाया हुआ आम अत्यंत वीर्य्यवर्द्धक, स्वादिष्ट, भारी, रुचिकारी, शीतल, वातपित्तनाशक और शरीर में तत्काल बल उत्पन्न करता है। वात रोग में इसका सेवन बहुत लाभदायक है। ५. आम अत्यंत मधुर रसान्वित होने पर भी शर्करा उत्पन्न नहीं करता, इसलिये प्रमेह-रोगी, मधुमेह-रोगी और बहुमूत्र-रोगी इसको खा सकते हैं। शोथ रोग में भी आम का सेवन कुछ भी हानिकारक नहीं होता। जब कोठे में रहनेवाला वायु बिगड़कर कोठे में कठिनता उत्पन्न कर मल को रोक देता है और कोष्ठबद्धता उत्पन्न कर देता है, तब प्रति दिन ३–४ अच्छे पके आम खाने से यह शिकायत जाती रहती है। इसमें सारक गुण होने से दस्त साफ आता है और किसी के लिए जुलाब का काम भी कर देता है। इसके सिवा हृदय रोग, धातुक्षीणता, नपुंसकता, शरीर की कृशता, रुधिर की कमी, क्षय और बालकों के अस्थि-विकृत्यादि रोगों में भी पका और मीठा आम हितकारी है, परंतु अजीर्ण, मंदाग्नि, आमाशय के रोग, अतिसार, संग्रहणी, पेट की पीड़ा, रुधिर की उष्णता और नेत्र के अभिष्यंदादि रोगों में आम हानिकर होता है।

इसके पत्तों का धूआँ गलरोग में लाभकारी है। कच्चे फलों की, चीनी के साथ, एक प्रकार की मिठाई बनाई जाती है जिसे प्लेग और विशूचिका में खिलाते और शरीर पर मलते हैं। इसका गोंद नींबू के रस या तिल में मिलाकर कच्छु और चर्म्म-रोग में काम में लाया जाता है। मलाबार के किनारे इसके गोंद को अंडे की सफेदी और थोड़ी अफीम में मिलाकर अतिसार और आमातिसार में देते हैं। फल का छिलका संकोचक, उत्तेजक तथा पक्काशय की निर्बलता में हितकारी है। वृक्ष की छाल और गुठली की गूदी संकोचक तथा आमरक्तातिसार में उपकारी है। गुठली की गूदी का काढ़ा अथवा गूदी, बेलगिरी और अदरक का काढ़ा अतिसार में लाभकारी है। गूदी कृमिनाशक तथा रक्तार्श और प्रदर में लाभदायक है। फूलों का चूर्ण या चाह वस्ति की सर्दी में उपयोगी है। चूर्ण का धूम्र मच्छर का नाशक है। ६ गलरोग में सूखे पत्ते को तंबाकू की तरह चिलम में भरकर धूम्र-पान करने से लाभ होता है। ७. कृमि रोग पर आम की गुठली खिलाना हितकारी है। ८. खुजली और त्वचा रोग में इसके गोंद को नींबू के रस या तेल में मिलाकर लगाने से फायदा होता है। ९. कृमि रोग, रक्तार्श और रक्तप्रदर में इसकी गुठली की गिरी का चूर्ण १०–१५ दिन सेवन करने से लाभ होता है। १०. शीताद रोग में अमचूर को मुख में रखना या जल में भिगो कर कुल्ले करना अथवा आम का पापड़ खाना गुणकारी है। ११. हिचकी में पत्तों को चिलम में भरकर धूम्रपान करने से लाभ होता है। १२. अतिसार और आमातिसार में आम की गुठली की रोटी खाने से फायदा होता है। सूखे फलों का काढ़ा अथवा चूर्ण का सेवन हितकारी है। १३. मूत्रकृच्छ्र में सूखे फलों का काढ़ा अथवा चूर्ण का सेवन करना गुणकारी है। १४. बिवाई में इसका गोंद लगाने से लाभ होता है। १५. अतिसार और आमातिसार में गुठली की गिरी, गोंद और इंद्रजौ सम भाग पीस छानकर युवा मनुष्य के लिये एक माशे की मात्रा से दिन में दो तीन बार सेवन करने से लाभ होता है। १६ अग्नि दग्ध पर गुठली की गिरी को पानी में भिगोकर पीसे। फिर कुछ देर के बाद इसको लगाने से फायदा होता है। १७. फटे हुए पैर या उँगलियों के बीच के घावों पर आम की छाल अथवा पत्तों का रस लगाना गुणकारी है। १८. बालकों के

अतिसार में गुठली की गिरी आध से १॥ रत्ती की मात्रा मे बेलगिरी के साथ देनी चाहिए। १९. रक्तातिसार मे कोमल कोंपलों को पानी में पीस, छानकर उसमें मिस्री मिलाकर पीना गुणकारी है। अतिसार मे इसकी अंतर्छाल को पीस-छानकर तुरंत ही पिलाना चाहिए। २०. पुष्टई के लिये प्रातःकाल मीठे आम को चूसकर, सोंठ और छुहारे सहित औंटा हुआ दूध पीना चाहिए। २१. दाद पर अमचूर और सेंधा नमक पीसकर लगाना हितकारी है। २२. अर्श पर आम और जामुन के पत्ते और छाल के काढ़े से गुदा का धोना लाभदायक है। २३ नक्सीर में गुठली के चूर्ण की नस्य उपयोगी है। २४. अतिसार और छर्दि में आम की गुठली और बेलगिरी के काढ़े में मधु और मिस्री मिलाकर पीना चाहिए। २५. पित्तज्वर में इसकी जड़ हाथ में बाँधना गुणकारी है। २६. अतिसार में गुठली की गिरी को काँजी में पीसकर नाभि पर लेप करने से फायदा होता है। २७. मकड़ी के विष पर अमचूर पीसकर लगाना हितकारी है। २८. दारुण रोग पर सम भाग गुठली की गिरी और हर्रे की छाल को दूध मे पीसकर लेप करने से लाभ होता है। २९. कर्णपीड़ा में पत्तों का रस गरम कर सहता हुआ कान मे डालना गुणकारी है। ३०. अतिसार मे इस वृक्ष की छाल पानी मे पीसकर नाभि पर लेप करने से फायदा होता है। ३१. रक्तार्श और वातार्श मे आम और जामुन का रस सवा सवा तोले ले एक पाव दूध में मिलाकर उसमें थोड़ी मिस्री छोड़कर पीने से लाभ होता है। इसके पत्तों को दूध मे पीस उनका रस निकालकर दूध और मिस्री के साथ सेवन करना चाहिए। ३२. अर्श पर इसके हरे पत्तों को कुचल, चिलम में भरकर धूम्रपान करने से फायदा होता है। ३३. वमन और तृषा में आम और जामुन के पत्तों का काढ़ा मधु मिलाकर पिलाना उपकारी है। ३४. रक्तप्रदर और रुधिर के दस्तों मे आम की गुठली के चूर्ण में नमक मिलाकर दही के साथ खाने से बहुत लाभ होता है। ३५. अतिसार, रक्तातिसार और संग्रहणी में धूप मे सुखाई हुई आम की गुठली, सोंठ और बेलगिरी, तीनों के सम भाग चूर्ण में किंचित् काला नमक मिलाकर मठे के साथ सेवन करने से फायदा होता है। ३६. सम भाग आम की गुठली और बेलगिरी के काढ़े में मधु मिलाकर पीने से वमन, अतिसार, प्यास, दाह, ज्वर और भ्रम इत्यादि शांत होते हैं। ३७. रक्तातिसार पर आम की गुठली, धातकी के फूल, नागरमोथा, लोध और इंद्रजौ, इन सबके समान भाग चूर्ण को भैंस के मठे के साथ सेवन करने से उक्त रोग दूर होता है। ३८. सर्प-विष पर–आम की गुठली के भीतर की मींगी पीसकर गरम जल के साथ तुरंत पिलाना और फिर थोड़ी थोड़ी देर पर इसको पिलाते रहना चाहिए। इस प्रयोग से वमन होता है। जब वमन होना बंद हो जाय, तब इसको पिलाना भी बंद कर देना चाहिए। ३९. संग्रहणी में सम भाग आम की गुठली, अनार के फूल और पोस्त के डोडे का चूर्ण ३ माशे की मात्रा से दिन में तीन बार जल के साथ सेवन कराना चाहिए। बालक के लिये एक माशा अथवा बल और अवस्थानुसार न्यूनाधिक देना उचित है। ४०. **आम कल्प**—वृक्ष ही पर पक कर टपके हुए आम की अपेक्षा पाल का पका हुआ आम बहुत उत्तम होता है, क्योंकि टपका हुआ आम अपने भीतरी खट्टेपन से नज़ला पैदा करता है, भारी होने के कारण पाचन-शक्ति को बिगाड़ता है और इसमे पित्त बढ़ाने तथा मलेरिया ज्वर उत्पन्न करने की स्वाभाविक शक्ति है। पाल के आम जो एक दम पीले पड़ गए हों, जिनमें हरियाली न रह गई हो और रस पतला, मीठा, स्वादिष्ट और चित्त प्रसन्न करनेवाला हो गया हो, ऐसे आम उत्तम होते हैं। कलमी आम की अपेक्षा बीजू आम हलका समझा जाता है।

जिनको मंदाग्नि से संग्रहणी, पुराने अतिसार, पेचिश, प्रमेह, धातुक्षीणता, पेट के रोग, प्लीहा, नखों मे सूजन या रक्त श्लेष्म हो गया हो, जिनके शरीर मे बलगम और पित्त का निरंतर प्रकोप रहता हो, जिनका दिल और दिमाग कमजोर हो गया हो, ऐसे मनुष्यों को निम्न प्रकार से आम का सेवन करना चाहिए।

काला जीरा, काली मिर्च और काला नमक तीनों को सम भाग लेकर कूट छानकर रखे, फिर दोनों समय पाल के १०-१० आम खाय और प्रत्येक आम खाने के बाद उस चूर्ण मे से थोड़ा थोड़ा चाटता जाय। उसके बाद थोड़ा सा सोंठ का पानी मिस्री डाल कर पी ले। आम चूसने के तीन घंटे बाद गौ के गरम किए हुए दूध में थोड़ा विषम भाग शहद, मिस्री और एक तोला मक्खन मिलाकर सेवन करना चाहिए अथवा दूध चावल ही सेवन करे। धीरे धीरे आम की संख्या भी जहाँ तक पच सके, बढ़ाता जाय।

इस योग को ४० दिन सेवन करने से तथा दिन मे न सोने से शरीर हृष्ट-पुष्ट, बलवान्, पराक्रमी और अनेक रोगों से मुक्त हो जाता है। विशेष कर संग्रहणी, मंदाग्नि, पुराना श्वास, भगंदर, पांडु और धातुक्षीणतावाले रोगियों के लिये बहुत उपयोगी है।

(२) आँव।

आम आँदा–[ब०] आँबा हलदी। आम्रगंध हरिद्रा। आमा हलदी।

आम आदा–[बँ०] १. आँबा हलदी। आम्र हरिद्रा। २. गंधपलाशी। शठी। कपूर कचरी।

आमक–[सं०] पेठा। कुष्मांड।

आम कलमी–[हिं०] कलमी आम। कलम का आम। [सं०]

राजाम्र। [बँ०] लता आम। [मरा०] राज आंबा। [गु०] कलमी आंबो। [क०] रायमच्चु। [ते०] राजमामिडि चेट्टु।

इसका पूर्ण परिचय और गुण आदि आम के प्रकरण में लिखे जा चुके हैं। यहाँ पर इसका विशेष गुण और चित्र दिया जाता है।

गुण—कसैला, मधुर, विशद, शीतल, भारी, ग्राही, रुक्ष, विबंधकारी, आध्मान-जनक तथा कफ-पित्त-नाशक है।

कच्चा कलमी आम—कफकारी, वातरक्त-कारक, पित्त-जनक और श्वास उत्पन्न करनेवाला है।

डंभक (तरुण) आम—गुणों में कच्चे कलमी आम के समान तथा कसैला, खट्टा और अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न करनेवाला है।

पका हुआ कलमी आम—मधुर, शीतल, भारी, अत्यंत वीर्य-वर्द्धक तथा प्यास, दाह, परिश्रम, श्वास, अरुचि और त्रिदोष को शांत करनेवाला है।

आम का अचार—[हिं०] यह प्रायः घर घर में बनता है और इसको लोग अधिक प्रेम के साथ खाते हैं। यह अनेक प्रकार से बनाया जाता है। कोई नाना प्रकार के मसाले डालकर बनाते हैं और कोई बिना मसाला डाले ही तैयार करते हैं।

गुण—यह पाचक और क्षुधावर्द्धक होता है, किंतु अधिक खाने से वीर्य में विकार भी उत्पन्न करता है। यह ज्वर-रहित तिल्ली में लाभकारी है। गंज रोग में पुराने अचार का तेल लगाने से लाभ होता है। यहाँ आम का अचार बनाने की कुछ विधियाँ दी जाती हैं।

आम का अचार नं० १—तलाव हींग ३ माशे, मँगरैला और लाल मिर्च एक एक छटाँक, हल्दी और मेथी आध आध पाव, धनिया एक पाव, राई और साँभर नोन आध आध सेर, कडुआ तेल चार सेर, कच्चे जालीदार आम १०० रख ले। मँगरैले से लेकर राई पर्यंत सब मसाले अलग अलग तवे पर थोड़ा भून कर चूर्ण कर डाले और हींग को दो माशे गरम जल में घोलकर मसाले में मल दे। नमक का चूर्ण बना मसाले में मिलाकर रख ले। आम को धोकर चार चार फाँक (वे फाँकें अलग न होकर एक में लगी रहें) करके एक प्रहर धूप में सुखावे। फिर मटके में थोड़ा मसाला बिछा कर और आमों के पेट में मसाला भर तह लगा कर रखता जाय। दो तीन तह के बाद थोड़ा मसाला बिछा दिया करे। जब मटका भर जाय, तब कडुआ तेल भर कर मुख बंद करके रख दे। यदि आमों को कडुए तेल से भिगो कर मसाला भरे तो वर्षा काल में भी अचार नहीं बिगड़ता। चौथे पाँचवें दिन पात्र का मुख खोल कर देख लिया करे। जितना तेल सूख गया हो, उतना और भर देने से दो मास में आम का तेलवाला अचार खाने योग्य तैयार होता है।

आम का अचार नं० २—सब मसाला नं० १ के अनुसार; किंतु इसमें नमक एक सेर लेना चाहिए। पहले आम की चार चार फाँकें कर गुठली निकाल कर धो डाले। फिर ढाई तीन घड़ी उन फाँकों को कड़ी धूप में सुखा कर कडुए तेल में मल कर पूर्वोक्त रीति से मसाले की तह देकर कडुआ तेल छिड़क कर रखे और ऊपर थोड़ा नमक का चूर्ण बिछा मुख ढक कर धूप में रक्खे। इसमें ढाई तीन पाव तक तेल मिलाना पर्याप्त है। तीसरे चौथे दिन हिला दिया करे। एक मास के पीछे छाया में रख लेने से आम का नमकीन अचार तैयार होता है।

आम का अचार नं० ३—लाल मिर्च और मँगरैला तीन तीन तोले, सूखा पुदीना, मेथी, धनिया और काली मिर्च पाँच पाँच तोले, सौंफ साढ़े सात तोले, अदरक एक पाव, साँभर नोन तीन पाव, ऊख का सिर्का चार सेर, कच्चा आम एक सौ। काली मिर्च और अदरक के सिवा समस्त मसाले थोड़ा भून कर चूर्ण बना ले। नमक का चूर्ण तथा अदरक को धोकर छोटे छोटे टुकड़ा करके मसाले में मिला कर रख ले। आम का छिलका दूर करके उस पर नमक का चूर्ण मल कर दो तीन घंटे धूप में सुखा डाले। फिर प्रत्येक आम का पेट चीर कर गुठली निकाल मसाला भर दे और मटके में थोड़ा मसाला बिछा कर आम रक्खे। बीच बीच में थोड़ा नमक मसाला देकर अंत में बचा हुआ मसाला ऊपर बिछा कर सिरका भर दे। मुख बंद करके दस दिन धूप में रख कर छाया में रखे और सिरका सूख जाने पर और मिला दे जिससे आम सिरके में डूबा रहे। एक मास के अनंतर सिरके का अचार तैयार होता है।

आम का मीठा अचार नं० ४—काला जीरा और हल्दी ढाई ढाई तोले, सफेद जीरा, काली मिर्च और मेथी एक एक छटाँक, साँभर नोन डेढ़ छटाँक, राई दो छटाँक, कडुआ तेल या ऊख का सिरका सवा सेर, चीनी ढाई सेर, छिला हुआ कच्चा जालीदार आम पचास। प्रत्येक आम को चीर कर चार चार फाँकें करके उसमें राई और नमक का चूर्ण मल कर दो दिन धूप में सुखावे। जब आम के टुकड़ों से पानी निकलने लगे, तब चार तारवाली चीनी की चाशनी में उनको डाल दे और जीरा, हल्दी आदि का भुना चूर्ण मिला लकड़ी से चला कर रख छोड़े। चौबीस घड़ी के बाद सिरका या कडुआ तेल डाल मटके का मुख ढक तीन चार दिन धूप में रख कर छाया में रक्खे। यह आम का मीठा अचार खाने में अच्छा होता है।

आम का मीठा अचार नं० ५—आम का अचार नं० १ का मसाला एक पाव, गुड़ और कच्चे आम की छीली हुई फाँकें चार चार सेर। गुड़ को कूट कर चूर्ण कर डाले और उसमें मसाला मल कर मटके में फाँकों को मसाले के बीच रख कर मुख बंद कर एक मास धूप में रखने से आम का

मीठा अचार तैयार होता है। यह बरसों खराब नहीं होता। यदि डालने के समय इसकी फाँकों पर कड़ुआ तेल मल दो तीन घड़ी धूप में सुखा कर अचार डाला जाय तो अधिक टिकाऊ होता है।

आम का मीठा अचार नं० ६—सफेद जीरा ढाई तोले, घी एक पाव, गुड़ दो सेर, छिले हुए कच्चे आम की फाँकें चार सेर। आम की फाँकों को दो घड़ी धूप में सुखा कर जीरे और घी के साथ कड़ाही में अच्छी तरह भून उसमें गुड़ की गाढ़ी चाशनी मिला थोड़ी देर पका कर तीन दिन ढक कर रख छोड़े। यह चौथे दिन खाने योग्य हो जाता है; किंतु एक महीने से अधिक नहीं ठहर सकता।

आम का अदरक–[हिं०] आँबा हलदी। आमा हलदी।

आम का पाक–[हिं०] अच्छे पके हुए कलमी मीठे आम का रेशा-रहित रस ८ सेर (आम से गूदा निकालकर हाथों से मसलकर बाँस अथवा पीतल की चलनी में रख, नीचे कलई-दार पात्र रख हाथ की उँगलियों से धीरे धीरे रगड़े तो स्वच्छ रस पात्र में जाता है और रेशा चलनी में रह जाता है। (छाने हुए रस को तुरंत काम में लाना चाहिए, अन्यथा उसमें विकार उत्पन्न हो जाता है।) देशी चीनीवाली मिस्री २ सेर, गोघृत १ सेर, पानी २ सेर, सोंठ १ पाव, काली मिर्च आध पाव, पीपल एक छटाँक, इनका कपड़छान किया हुआ चूर्ण कलईदार या मिट्टी के पात्र में रख मंदाग्नि से पकावे और लकड़ी की कलछी से चलाता जाय। जब पककर हलुए के समान घृत छोड़ने लगे (न पानी का लाग रहे और न जलने पावे) तब पीपला मूल, नागरमोथा, चव्य, धनिया, जीरा, काला जीरा, सोंठ, नागकेसर, दालचीनी और तालीसपत्र, प्रत्येक के कपड़ छान किए हुए चूर्ण आठ आठ तोले लेकर बर्तन को आग से उतार, चूर्ण को भली भाँति मिलाकर अमृतबान में रख छोड़े। इसकी मात्रा बलाबल के अनुसार १ से ५ तोले तक की है।

गुण—बुद्धिदाता, आयुवर्द्धक, वंध्या को हितकारी, पौष्टिक, वृहण तथा अरुचि, कास, श्वास, क्षय, प्रतिश्याय, पूतिनस्य, पीनस, प्लीहा, यकृत, अम्लपित्त, उद्गार, अपाचन, हृदय की दाह, कंठ की दाह, वमन, रक्तपित्त, स्वरभंग, तोतलापन, पांडु रोग, कामला, हृदय रोग, शिरशूल, अफरा, पामा, शीत पित्त, भूतबाधा, पिशाचबाधा, अपस्मार और उन्माद का नाश करनेवाला है। इस पाक में क्षयी आदि के लिये अबरक भस्म, ध्वजभंग आदि के लिये फौलाद की भस्म और शिर-शूलादि के लिये मूँगे की भस्म इतनी मिलानी चाहिए जिसमें चार तोले की मात्रा में एक रत्ती भस्म आवे।

आम का मुरब्बा—(**बनाने की क्रिया**)—उत्तम आम के छिलके और गुठली-रहित ६४ तोले टुकड़े घी में भूनकर मिट्टी के पात्र में रखे। फिर १६२ तोले चीनी की तितारी चाशनी कर, उसमें आम के भूने हुए टुकड़े छोड़ एक तार चाशनी आने तक धीमी आग में पकावे। फिर काली मिर्च और छोटी इलायची का चूर्ण अंदाज से मिला कर, शीतल होने पर कांच अथवा चीनी के पात्र में रखना चाहिए।

गुण—स्निग्ध, भारी, पुष्टिकारी, बलकारी, स्वादिष्ठ, तृप्तिकारी तथा वात, पित्त, अरुचि और रुधिर-विकार का नाश करनेवाला है।

आम का सत्त–[हिं०] अमावट। आम्रवर्त्त।

आम की चटनी–नं० १—अंगूर और लाल मिर्च एक एक छटाँक, भुना धनिया और साँभर नोन आध आध पाव, बादाम, खजूर और छुहारा एक एक पाव, किशमिश और अदरक आध आध सेर, कच्चे आम का गूदा एक सेर, ऊख का सिरका दो सेर, सबको सिरका के साथ महीन पीस उसी में घोल अमृतबान में बंद कर पंद्रह दिन धूप में रखने से चटनी तैयार होती है। यदि आम की फसल न हो तो अमचूर से काम लेना चाहिए।

नं० २—लाल मिर्च एक छटाँक, साँभर नोन, अदरक और पुदीना एक एक पाव, चीनी एक सेर, छिला हुआ आम का गूदा और सिरका दो दो सेर, सबको महीन पीस कर सिरके में मिला पात्र का मुँह बंद करके दस दिन धूप में रख कर पका डाले और गाढ़ी होने पर अमृतबान में रखे। यह आम की चटनी स्वादिष्ठ होती है।

नं० ३—लहसुन ढाई तोले, लाल मिर्च ५ तोले, पुदीना हरा और बादाम की गिरी दस दस तोले, धनियाँ और साँभर नोन एक एक पाव, अदरक डेढ़ पाव, किशमिश तीन पाव, सिरका डेढ़ सेर, चीनी साढ़े तीन सेर, छिला हुआ आम का गूदा सात सेर। आम को सिरके के साथ सिल पर महीन पीस लुगदी बना उसमें चीनी और सिरका मिला मिट्टी के पात्र में पकावे और काठ की कलछी से चलाता रहे। जब, पक कर महक निकलने लगे, तब नीचे उतार चीनी के पात्र में रक्खे। यह चटनी बहुत काल तक नहीं बिगड़ती और अत्यंत स्वादिष्ट तथा अग्निवर्द्धक होती है।

नं० ४—सूखा पुदीना और भुना हुआ सफेद जीरा एक एक तोला, लाल मिर्च २ तोला, धनिया और गरी आठ आठ तोले, साँभर नोन और अदरक बारह बारह तोले, किशमिश २४ तोले, छिले आम का गूदा (अभाव में अमचूर), चीनी और ऊख का सिरका एक एक सेर। गरी, किशमिश और अदरक को सिरके के साथ महीन पीस तथा पुदीने आदि का महीन चूर्ण मिट्टी के पात्र में डाल सिरके से पकावे। पक जाने पर नीचे उतार अमृतबान में बंद कर रक्खे। गाढ़ी होने पर सिरका मिला ढीली कर लेना चाहिए। यह चटनी अत्यंत स्वादिष्ठ और रुचिवर्द्धक होती है।

नं० ५—भुनी हींग ६ माशे, लौंग २ तोले, सौंफ, लाल मिर्चे और बड़ी इलायची पाँच पाँच तोले, साँभर नोन आध पाव, अदरक एक पाव, चीनी डेढ़ पाव, कच्चा हरा आम पाँच सेर। आम का छिलका निकाल कर गूदी को सिरके के साथ महीन पीस डाले और वस्त्र में रख उसका रस निचोड़ ले। उसमें चीनी मिला कर पकावे और चाशनी बना सब चीजों का चूर्ण मिला मुख बंद करके तीन दिन धूप में रखने से चटनी तैयार होती है।

नं० ६—लौंग, काली मिर्चे और बड़ी इलायची एक एक तोला, सांभर नोन डेढ़ तोला, लाल मिर्चे २ तोला, धनिया ६ तोले, चीनी डेढ़ पाव, कच्चा आम तीन पाव। आम को भूभल में पका कर पानी से धो डाले, उसको हाथ से मल छिलका और गुठली दूर करके पक्का वस्त्र से छान ले। ऊपर लिखी चाजों का महीन चूर्ण और पाव भर सिरका मिला मुख बंद कर सात दिन धूप मे रखने से चटनी बनती है।

नं० ७—हरा पुदीना, सफेद जीरा, धनिया और लाल मिर्चे दो दो माशे, साँभर नोन ३ माशे, गुड़ ६ माशे, छिला हुआ कच्चे आम का गूदा दो तोले, सब को पानी से महीन पीस कर तुरंत खाने योग्य चटनी बनती है। इसी प्रकार इमली, अमड़ा, करोंदा, कमरख, तूत आदि की भी कितनी ही चटनिया बन सकती हैं।

आम की रोटी–[हिं०] अमावट। आम्रवर्त्त।

आम के फूल–[हिं०] आम्रपुष्प। मंजरी। मोजर।

आमगंध हरिद्रा–[हिं०] } आँबा हलदी। गंध हरिद्रा।
आमगंधि हरिद्रा–[हिं०] } आँबा हलदी।

आमघ्नी–[सं०] कुटकी। कटुकी।

आमचणक–[सं०] चना। चणक। बूँट।

आमज अतिसार–[हिं०] } आमातिसार नामक रोग।
आमजातिसार–[सं०] }

आमज्वर–[सं०] अपक्व ज्वर।

आमट–[बं०] अमावट। आम्रवर्त्त।

आमटं–[मरा०] विषाविल। वृक्षाम्ल।

आमड़ा–[बं०] अमड़ा। आम्रातक।

आमणक्क–[द्रा०] एरंड। आमंड। रेंड़ी।

आमतितिडि–[सं०] } इमली कच्ची। कच्ची इमली।
आमतितिड़ी–[सं०] }

आमपत्रिका–[सं०] } बथुआ। वास्तूक शाक। चिल्ली।
आमपत्री–[सं०] }

आममूलक–[सं०] गोंदपटेर। गुंद्रपटेरी।

आमय–[सं०] १. काली अगर। कृष्णागुरु। २. कुट। कुष्ठौषधि। ३. रोग। व्याधि। बीमारी।

आमरक्त–[सं०] आमातिसार। अतिसार रोग विशेष।

आमरक्तातिसार–[सं०] अतिसार रोग भेद। खूनी मल के दस्त या मरोड़ के दस्त। [फा०] पेचिश। [अ०] जिर्याने शिकम। [अं०] Dysentry.

इस रोग की नाशक औषधियाँ और उनकी प्रयोग-संख्या—प्याज नं० ४६। बेल नं० ४०। बेलगिरी नं० ८। रंगलता नं० १२।

आमरा–[हिं०] अमड़ा। आम्रातक।

आमरुल–[बं०] १. इमली। तिंतिड़ी। २. चांगेरी। चौपतिया। अमता।

आमरुल शाक–[बं०] चांगेरी। खटकल।

आमरो–[बं०] आँवला। आमलकी।

आमरोड़ा–[सं०] अश्मंतक। आबुटा।

आमल–[सं०] } १. आँवला। आमलकी। २. काठ आँवला।
आमलक–[सं०] } काष्ठधात्री फल। ३. अडूसा। वासक। विसोंटा। ४. पद्माख। पद्मकाष्ठ।

आमलका–[सं०] } आँवला। धात्री वृक्ष।
आमलकी–[सं०, बं०, भाषा०] }

आमलकीपत्र–[सं०] तालीशपत्र। तालीश। तालिसपात।

आमलक्यादि वर्ग–[सं०] आँवला, हरीतकी, पीपल और बहेड़ा।

आमलच्छद–[सं०] तालीशपत्र। तालीश।

आमलजं–[फा०] }
आमलज–[फा०] } आँवला। आमलकी। धात्री।
आमलय–[फा०] }

आमलबेल–[पं०] अत्यम्लपर्णी। रामचना। इमर्ती।

आमलह्–[फा०] }
आमलाँ–[गु०] } आँवला। आमलकी।
आमला–[हिं०] }
आमलाह्–[फा०] }

आमवात–[सं०] वातरोग विशेष। संधिवात। ग्रंथिवात। [हिं०] गठिया। [अ०] वजाुमुफ़ालिस। वजामुफासिल। [अं०] Rheumatism.

मंदाग्निवाले मनुष्य के अजीर्ण में भोजन करने से उदर में आम उत्पन्न हो मस्तक, अंग, स्कंध, पृष्ठ, कटि और घुटनों में पीड़ा होती है, नसों का संकोच होता है और शरीर स्तंभित हो जाता है तथा भोजन में अरुचि, शरीर में भारीपन, तृषा और आलस्य की अधिकता, पाचन शक्ति का अभाव, अंग में सूनापन और ज्वर का वेग हो जाता है।

दुष्ट वायु के द्वारा आमरस चलायमान होकर दूषित कफ पित्त के साथ मिलकर विदग्ध (खट्टा) हो शरीर के संधि (जोड़) आदि स्थानों में अवस्थित होकर ज्वर तथा तोड़ने की सी पीड़ा आदि लक्षणोंवाला जो रोग उत्पन्न करता है, उसको "आमवात" कहते हैं।

विरुद्ध आहार (प्रकृति-विरुद्ध, समय-विरुद्ध, संयोग-विरुद्ध), विरुद्ध चेष्टा, असुखकारक कर्म्म करने से, व्यायाम या परिश्रम नहीं करने से, स्निग्ध अन्न भक्षण करके घोर परिश्रम करने से, गीले घर में वास करने से, गर्मी अथवा धूप से संतप्त होकर तत्काल शीतल जल से स्नान करने से अथवा शीतल जल पान करने से, शीतल पवन में रात्रि के समय बिना वस्त्र ओढ़े खुले अंग शयन करने से, आते हुए पसीने को एक साथ रोकने से, अग्नि की मंदता और आम एवं वायु को कुपित करनेवाले देश तथा आमवात की अनुकूलतावाली प्रकृति आदि कारणों से शरीर में आमरस का संचार और वायु का प्रकोप होता है तथा साथ साथ कफ और पित्त भी कुपित होते हैं। वायु कफ पित्त को अपने साथ लेकर शरीर के छिद्रों में आमरस को ले जाकर रस बहानेवाले संपूर्ण स्रोतों (छिद्रों) को जब बंद कर देता है, तब शरीर में दुर्बलता, हृदय में भारीपन, कार्य्य में अनुत्साह, शरीर के अनेक स्थानों में अनवस्थित वेदना और भोजन में अनिच्छा आदि लक्षण आमवात रोग के उत्पन्न होने के कुछ पहले होते हैं। फिर वात से आकुलित कफ पित्त से मिलकर आमरस का विशेष रूप से परिणमन करना और अम्लता को प्राप्त होता है। फिर वही अम्ल रस शरीर की संधि (जोड़) आदि स्थानों में स्थित होकर स्पष्ट लक्षणोंवाली पीड़ा प्रगट करता है तथा आम और वायु एक साथ कुपित होकर कोठे में तथा कमर और गरदन के पीछे की संधियों में प्रविष्ट होकर शरीर को जकड़ देते हैं। पहले अंगों का टूटना, अरुचि, प्यास, आलस्य, भारीपन, ज्वर, अन्न का न पचना और शरीर में शून्यता आदि होकर जब यह रोग बढ़ जाता है, तब सब रोगों में अति कष्ट देनेवाला होता है। हाथ, पाँव, सिर टखने, त्रिक, जानु, जाँघ आदि संधियों में पीड़ा सहित शोथ उत्पन्न होता है और जहाँ आम प्राप्त होता है, वहाँ बिच्छू के डंक मारने की सी पीड़ा होती है। मंदाग्नि, मुख से पानी गिरना, अरुचि, देह का भारीपन, उत्साह का नाश, मुख का स्वाद बिगड़ना, दाह, अधिक मूत्र आना, कोख में कठिन शूल, दिन में सोना, रात्रि में जागना, प्यास, वमन, भ्रम, मूर्च्छा, हृदय में पीड़ा, मल मूत्र का रुकना, जड़ता, आँतों का बोलना, अफरा आदि उपद्रव होकर संधियों में संकोच, खंजता, लूलापन, टेढ़ापन, स्वरभंग, पाँवों में सूजन तथा कभी कभी संपूर्ण शरीर में सूजन आदि महा उपद्रव प्रगट होते हैं। पित्ताधिक्य में फूला हुआ अंग अत्यंत दाह सहित लाल होता है, वाताधिक्य में अत्यंत पीड़ा होती है और कफ की अधिकता में सूजन गीली, भारी और खुजली सहित होती है।

पिता अथवा माता किंवा दोनों के शरीर में आमवात का विकार होने से प्रायः संतान को भी इस रोग से पीड़ित होना पड़ता है।

इस रोग की नाशक औषधियाँ और उनकी प्रयोग-संख्या—अकरकरा नं० २। अखरोट नं० ५। अगर नं० १०। अगस्त नं० ९। अडूसा नं० ८, ९। अदरक नं० १३, २९। अपराजिता नीली नं० ७, १२। अमरबेल नं० ९। अमलतास नं० १५, २१। आंबा हलदी नं० ७। अरनी नं० १३। अरितमंजरी नं० ५। असगंध नं० १४, २३। आक लाल नं० ४, १४, ३१, ३२, ३५, ३७, ६१, ७२। आँवला नं० १२। इनारू नं० २०। इमरोल नं० २। ईशबगोल नं० १२। उड़द नं० ६। उतरन नं० ४। एरंड नं० २२, २३। कंगनी नं० २, ५। कटसरैया नं० ९। कनर सफेद नं० ११। कपास नं० ८, २५। कपास के बीज नं० ६, १५। कपूर नं० ७, ११, २५। करंज नं० १४। करील नं० ११। करेला नं० ३३। काँद्दर नं० २। कुकुरौंधा नं० १५। कुचला नं० ११, १४, १७। कुँदरू नं० ९। कुट नं० १०। केवड़ा नं० २। कोलकंद नं० ३। खुरासानी अजवायन नं० ४। चव्य नं० ५। गंध-प्रसारणी नं० २। गावजबाँ नं० ८। गिलोय नं० १८, १९, २७, २६, ६६। गिलोय का सत्त नं० १२। गुंजा नं० ६। गूगल नं० ७। गूमा नं० ६। गोखरू बड़ा नं० १०, २४। घीकुवार लाल नं० ११। घृत नं० १८। चंपा नं० ८, २२। चनसुर नं० १५, १६। चना नं० १०, २९। चीता नं० ५, ७। चीता लाल नं० १६। चोपचीनी नं० ३, ७। चाल मोगरा नं० ११। जमालगोटा नं० २। जमींकंद नं० २। जयंती नं० ९। जलनीम नं० ४। जवासा नं० १४। जायफल नं० १३, १८। जायफल जंगली नं० १। ढेरा नं० ९, १७। ढोल समुद्र नं० ४। तमाखू नं० २४। तरवड नं० १३। ताल मखाना नं० १५। तुंबरु नं० ४। थूहर नं० २१। थूहर तिधारा नं० २, ८, १०। दंती नं० २। दंती बड़ी नं० २, ७। दारुहलदी नं० ३। धतूरा काला नं० ६, २९, ३०। धतूरा सफेद नं० ३, १४। धनिया नं० २३, ३१। नकछिकनी नं० ९। नरसल बड़ा नं० १। नागकेसर नं० ८। नारियल का तेल नं० २। नाही नं० ३। निर्गुंडी नं० २। नीम नं० ६४। नीम का तेल नं० ९। पलासपीपल नं० ८। पाताल गारुडी नं० २, ९, १४। प्याज़ नं० ११। पीपल नं० २२। पीपलामूल नं० ६। पीलू नं० ५। पीलू बड़ा नं० २। पुदीना नं० ४। पुन्नाग नं० २। फरहद नं० ६। फालसा नं० ७। फिटकिरी नं० ४१। बकायन नं० १४। बच नं० २८। बड़ नं० १४। बरियारा नं० १०। बरुन नं० ४, ६, ११। बाबूना नं० ३। बिधारा नं० ५। बिषमंडल नं० ३। बेल नं० ५१। ब्राह्मी नं० २। भाँग के बीज नं० २। भिलावें का तेल नं० २। भूतृण नं० ९। मरजाद बेल नं० १। महुआ नं० ५। मांसरोहिणी नं० ५। माधवी लता नं० ६। मालकंगनी नं० २। मालकंगनी बड़ी

नं० २, ४, ८। मुंडी नं० २६। मुसब्बर नं० २६। मूँगफली नं० ६। मूँज नं० ३। मेहदी नं० १६, २६, ३३, ३४। मैनफल नं० १७। मोम नं० ४। रतनजोत नं० १०। रवासन नं० २। राई नं० २। राई काली नं० ३, ६, १३। रामतुलसी नं० १। रोहिस घास नं० ६। लहसुन नं० ४, २०, २६। लाल मिर्च नं० ६। लाल मिर्च बड़ी नं० ६। लोहा नं० १४। लौंग नं० ७। वत्सनाभ विष नं० १। विकंकत नं० ४। विषांबिल नं० २। शमी नं० ४। शाल बड़ा नं० ३। शिंगरफ नं० ६। शिलाजीत नं० २१। शेर नं० ३। संखिया नं० १६। सँभालू नं० ८, १३, १४, २१। सत्यानाशी की जड़ नं० २। समुद्रपात नं० ३, ६, ६। सरसों का तेल नं० २। सहदेई नं० ३, १८। सहिंजन नं० ६, १४। सहिंजन सफेद नं० ४। सातला नं० ४। सिताब नं० ३, १४, १६, २४, २६। सिरका नं० १४। सोंठ नं० २, १०। सोनापाठा नं० ४। हंसपदी नं० १। हरताल नं० १२। हरसिंगार नं० ६।

आमशूल-[सं०] आमजन्य शूल रोग-भेद। अन्न के न पचने से पेट में शूल का उत्पन्न होना, एवं अफरा, वमन, शरीर में भारीपन, मूत्राशय में गुड़गुड़ाहट, हृदय में जकड़न, लार का गिरना और कफ शूल के लक्षणों आदि से युक्त रोग "आमशूल" कहा जाता है।

आमशोल-[मरा०]
आमसोल-[मरा०] } विषांबिल। वृक्षाम्ल। महादा।

आमाजीर्ण-[सं०] अजीर्ण रोग-भेद। जिस रोग में किया हुआ भोजन अच्छी तरह नहीं पचता तथा कभी पतला दस्त और कभी कब्जियत होती है, उसको "अजीर्ण" कहते हैं; और आमाजीर्ण इसी का एक भेद है। आहार का सार भाग रस जब परिपक्व नहीं होता (कच्चा रहता है) अथवा रक्तादि धातुओं में परिणत नहीं होता, तब उसको आमरस कहते हैं। शरीर में संचित आमरस (कच्चा रस) कफ के साथ मिलकर अथवा स्वच्छंद रूप से आमाशय के भीतरी भाग में प्राप्त होकर पाचक रस को बहानेवाली छोटी छोटी नलियों के मुख में जाकर जम जाता है। इसलिये उन नलियों में से जो प्रति दिन बहुत सा पाचक रस निकला करता है, वह ठीक प्रकार से नहीं निकलने पाता अथवा थोड़ा थोड़ा करके निकलता है। इस कारण पाचन क्रिया भोजन को ठीक ठीक नहीं पचाती। इससे जो अजीर्ण रोग उत्पन्न होता है, उसको आमाजीर्ण कहते हैं। शरीर में भारीपन, ग्लानि, नेत्रों के नीचेवाले भाग में और गालों में सूजन का होना, जैसा रस खाया जाय, वैसे ही कच्चे रस के डकारों का आना और पेट का भरा सा मालूम होना, इसके लक्षण हैं।

इस रोग की नाशक औषधियाँ और उनकी प्रयोग-संख्या—गुड़ नं० १४। समुद्रफल नं० ७। सोंठ नं० १८।

आमाट-[ते०] अमड़ा। आम्रातक।

आमातिसार-[सं०] अतिसार रोग-भेद। आमज अतिसार। आँव सहित बार बार दस्त होना। अजीर्ण में गरिष्ठ वस्तु खाने से वात, पित्त और कफ कोठे में प्राप्त होकर धातु-समूह तथा मल को बिगाड़ कर पेट में मरोड़ और शूल उत्पन्न होता है और दुर्गंधित तथा अनेक वर्णवाला मल आम सहित गुदा से गिरता है।

इस रोग की नाशक औषधियाँ और उनकी प्रयोग-संख्या—अतीस नं० ७। अनार का छिलका नं० १। अफीम नं० २४, २६, २७। अदरक नं० १४। अमड़ा नं० ३। अश्मंतक नं० २। आँवला नं० ३६। आक लाल नं० १४, १६, ३४, ६३। आम नं० १२, १४। इमली नं० १६, २३, २४, २७। इलायची मोरंगी नं० ३। ईशबगोल नं० ४। ओंगा नं० १७। कचनार पीला नं० २, ६। कचनार लाल नं० १२। कपास नं० ७। कपास के बीज नं० १८। काकड़ासिंगी नं० ७। कुकुरौंदा नं० ३१। कुचला नं० ७, १३। कुड़ा नं० २, ७। कुमुद नीला नं० ६। केला नं० ११, १३, १७। केले का फूल नं० १। कैथ नं० १६। खैरसार नं० ४। गूलर नं० ६। गेहूँ नं० २। गोरखपान नं० ४। गोरखी नं० २। घोड़ा नं० ३। चनसुर नं० ४। चंदन नं० १०। चालमोगरा नं० १३। जलकुंभी नं० ४। जामुन नं० १४, २१, २४, २४। जायफल जंगली नं० २। जावित्री नं० २। ज्वार नं० १। झाऊ नं० २। तिनिश नं० २। तिल नं० ८। तीसी नं० १४। तूतिया नं० ४। दाभ नं० १। दालचीनी नं० ३। दुपहरिया नं० ३। दूब नं० ४। धनियाँ नं० ३४। धातकी नं० ३। धान नं० २। धामिन नं० ३। नागरमोथा नं० ७। नाड़ी हिंगु नं० १७। नारियल नं० ८। पतंग नं० ४। प्याज नं० २१। पीपल नं० २, १०, १७। पोस्तदाना नं० २। फिटकिरी नं० १०। बच नं० ११, १६। बड़ नं० २४। बबूल नं० २३। बबूल का गोंद नं० ४, ४। बबेरी नं० ४। बिजौरा नींबू नं० ३। बिहीदाना नं० ६। बेल नं० ११, १४, १८, २०, ४३। बेलगिरी नं० २, ४, १०। भाँग नं० ११, १८। भुइँकदंब नं० २, ७। मरुआ नं० ३। मांसरोहिणी नं० २। मीठी नीम नं० ४। मुनक्का नं० ८। मेथी नं० ४। मेथी का साग नं० ७। मैनफल नं० १२, १४। मोथा नं० ४। मोम नं० ३। मोरशिखा नं० ६। रामफल नं० २। राल नं० २। विषांबिल नं० ४, ७, ६। शाल नं० २। सत्यानाशी नं० १८। समुद्रफल नं० १, २१। सहोरा नं० ४। सालम मिस्री नं० ३। सुगंधबाला नं० २। सेमल का मूसला नं० ३। सेमल सफेद नं० ४। सोनापाठा नं० २। सोनापाठा भेद नं० ७, ८। सौंफ नं० २। हरीतकी नं० ६, १०, १४।

आमादा-[बँ०] आँबा हलदी। आम्रगंध हरिद्रा। आमा

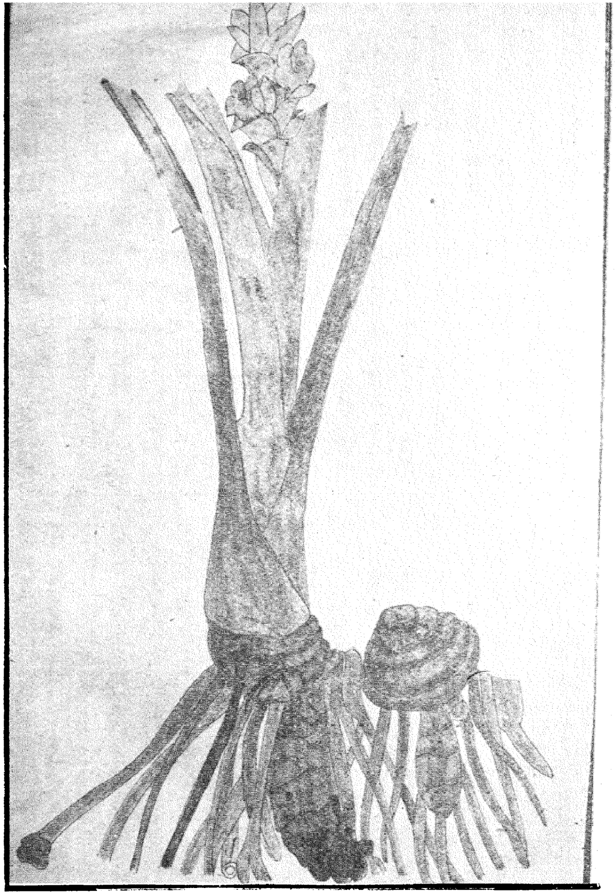

आमा हलदी

आमा हलदी

पृ० १२०]

हलदी।

आमावट–[हिं०] अमावट। अंबावट। आम का रस। आम की रोटी। आम्रावर्त्त।

आमाशय–[सं०] आमस्थाली। आमस्थान। नाभि और छाती के बीच की जगह। पक्काशय। पावकाग्नि। पचौनी।

आमाशय रोग–[सं०] प्रवाहिका। अतिसार भेद।

आमसंदबल–[फा०] व्रण रोग। घाव।

आमा हलदी–[हिं०] अमिया हलदी। आमिया हरदी। कपूर हल्दी। अंबिया हलदी। [सं०] आम्रगंध हरिद्रा। कर्पूर हरिद्रा। दार्वीभेद। आम्रगंधा। कर्पूरा आदि। [बँ०] आम आदा। [मा०] आंबा हलद। आंबे हलद। [मा०] आंबा हलदी। [पं०] आंबिया हलदी। [ते०] कारुपुसुपु। ममिडि अल्लम। कस्तूरि पुसुम। [द्रा०] कस्तूरि मंजल। [क०] अंबियाहलदी। हुली आर्शिन। हुलि आरसिन। [गु०] आंबाहलदर। [द०] आमकी अदरक। [मु०] काजुरगौरी। [यू०] आंबा हलदी। [फा०] दार-चोबह। [अ०] दारहलद। [लै०] Curcuma amada. [अं०] Mango Ginger.

बंगाल और कोंकण में इसकी खेती की जाती है। आमा हलदी अदरक के समान एक गुल्म की गाँठदार जड़ है। यह गुल्म २-३-फुट ऊँचा होता है। इसका डंठल बड़ा और कंद पीलापन लिए नारंगी रंग का और अदरक से बड़ा होता है। पत्ते हलदी के पत्तों के समान १-१॥ फुट लंबे, ६ इंच या इससे कुछ अधिक चौड़े और अनीदार होते हैं तथा जड़ की ओर क्रमशः संकुचित होते जाते हैं और इनसे आम के समान गंध आती है। इसके फूल पीले रंग के होते हैं। कंद का स्वाद कड़वा और कुछ तीखा होता है।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण दोष–आमा हलदी शीतल, वृष्य, वातल, मीठी, कड़वी, रोचक, लघु, दीपन, खट्टी, चरपरी, कषाय रसयुक्त, गरम और सारक है तथा कफ, उग्र व्रण, खाँसी, श्वास, हिचकी, ज्वर, मुख रोग, रुधिर-दोष, वायु, शूल रोग और चोट लगने से उत्पन्न हुई सूजन का नाश करनेवाली है।

इसका अर्क सब प्रकार के कंडु रोगों को दूर करनेवाला है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—दूसरे दर्जे में गरम और रुक्ष, वातनाशक, पीड़ित अवयवों के ऊपर मल के गिरने को रोकनेवाली, शीघ्र पचनेवाली तथा अश्मरी का नाश करनेवाली है। मूत्र रोग, कंडु, पामा, गिरने की चोट अथवा मार-पीट की चोट पर पिलाना तथा लेप करना लाभकारी है। मुख की विरसता में इसका मंजन हितकारी तथा हृदय को हानिकारी है।

दर्पनाशक—नारंगी।

प्रतिनिधि—बकुची।

मात्रा—१ से ४ माशे तक।

प्रयोग—१. इसका कंद शीतल, अग्निप्रदीपक तथा पीड़ानाशक है। इसको मरोड़ और चोट पर लगाने से लाभ होता है। जड़ संकोचक, कफ-निस्सारक तथा अतिसार और आमनाशक है। २. गजचर्म्म पर इसका लेप करने से फायदा होता है। ३ अफरा में इसके चूर्ण का सेवन लाभकारी है। ४. शूल या पेट के दर्द में इसका चूर्ण काले नमक के साथ सेवन करना चाहिए। ५ पाचन-शक्ति बढ़ाने के लिये इसके चूर्ण को सोंठ के चूर्ण के साथ सेवन करने से लाभ होता है। ६. सूखी खाँसी पर इसके चूर्ण में नमक मिलाकर सेवन करना गुणकारी है। ७. गठिया पर इसके द्वारा सिद्ध किया हुआ तेल मलने से लाभ होता है। ८. सूखी खाँसी में इसका चूर्ण मिस्री के साथ खाना गुणकारी है। ९. अतिसार में इसको सोंठ और जायफल के साथ पीसकर पिलाना चाहिए। १०. भिलावें के धूएँ से उत्पन्न हुई सूजन पर साठी के चावल और दूध के साथ इसको पीसकर लगाने से फायदा होता है।

आमिदसेट्टु–[ते०]
आमिदपुचेट्टु–[ते०] } एरंड। रेंड। रेंडी।

आमिल–[पं०] अमरबेल नं० १। आकाशवल्ली। अमर लता।

आमिष–[सं०] मांस। गोश्त।

आमिषकर–[सं०] रुधिर। रक्त। लहू।

आमिषगंधिनी–[सं०] गधमांसी। सुगंध जटामांसी। भूतजटा।

आमिषप्रिय–[सं०] बाज। कंक पक्षी।

आमिषि–[सं०] जटामांसी। बालछड़।

आमोद–[सं०] सतावर। शतावरी।

आमोदक–[सं०] अजवायन। यवानिका।

आमोदजननी–[सं०] पान। तांबूल।

आमोदा–[सं०] सतावर। शतावरी।

आम्र–[सं०] आम। रसाल।

आम्रगंधक–[सं०]
आम्रगंधघृत–[म०] } समष्ठील। कोकुआ वृक्ष।

आम्रगंध हरिद्रा–[सं०]
आम्रगंधा–[सं०]
आम्रगंधि हरिद्रा–[सं०] } आमा हलदी। आम्रहरिद्रा।

आम्रत्वचा–[सं०] आम की छाल। आम्रवल्कल।

आम्र-नवपल्लव–[सं०] आम के नए पत्ते। नवपल्लव।

आम्रपल्लव–[सं०] आम के पत्ते। पल्लव।

आम्रपुष्प–[सं०] १. आम्रपुष्प। रसालपुष्प। [हिं०] आम के फूल। मंजर। मौल। मौर। मोजर।

गुण—शीतवीर्य्य, रुचिकारक, मलरोधक, वातवर्द्धक तथा अतिसार, कफ, पित्त, प्रमेह और रुधिर-विकार का नाश करनेवाले हैं। इनका प्रयोग "आम" के अन्तर्गत लिखा गया है।

२. बेंत। वेतस।

आम्रपेशिका-[सं०] } आम की खटाई। शुष्काम्र खंड।
आम्रपेशी-[स०] } अमचूर।

आम्रफल-[स०] आम। रसाल फल।

आम्रबीज-[स०] आम की गुठली। कोइली।

आम्रवट-[स०] } अमड़ा। आम्रातक। अमला।
आम्रवाट-[स०] }

आम्रवीज-[सं०] आम की गुठली। कोइली।

आम्रवेतस-[स०] अमलबेंत। अम्लवेतस्।

आम्रसत्व-[सं०] अमावट। आम्रावर्त्त।

आम्रहरिद्रा-[स०] आमा हलदी। अमिया हलदी। आम्रगंध हरिद्रा।

आम्रात-[स०] १. आम कलमी। राजाम्र। २. अमड़ा। आम्रातक। ३. अमावट। आमावट।

आम्रातक-[स०] १. आम कलमी। राजाम्र। कलमी आम। २ पलासी लता। पलाशिका। ३. अमड़ा। आम्रातक। ४. अमावट। आमावट।

आम्रावर्त्त-[स०] } अमावट। आम्रावर्त्ता। आम की रोटी।
आम्रासत्व-[स०] }

आम्ल-[स०] इमली। तिंतिड़ी।

आम्लज-[अ०] } आँवला। आमलकी।
आम्लभ-[अ०] }

आम्लटक-[म०] चूका। चुक्रिका।

आम्लपंचक-[स०] अम्लपंचक। पंचाम्ल फल।

आम्लपत्रक-[म०] चूका। चुक्रिका शाक।

आम्लपत्री-[स०] पलासी लता। पलाशिका।

आम्लपित्त-[स०] अम्लपित्त। (रोग)

आम्लफल-[म०] कैथ। कपित्थ।

आम्ललोटिका-[स०] नाड़ीका (शाक)। क्षुद्रचिंचा शाक।

आम्ललोणिका-[सं०] } चांगेरी। चौपतिया। खटकल।
आम्लघती-[स०] }

आम्लवर्ग-[स०] अम्लवर्ग। अम्लवर्ण।

आम्लवास्तुक-[स०] चूका। चुक्रिका।

आम्लवेतस-[स०] अमलबेत। अम्लवेतस।

आम्ला-[म०] १. इमली। तिंतिड़ीक। २ शिवलिंगी। खिंगिनी लता। पँचगुरिया। ३. श्रीवल्ली। (महाराष्ट्र में प्रसिद्ध) ४ आँवला। आमलकी।

आम्लातक-[स०] अमड़ा। आम्रातक।

आम्लातकी-[स०] पलासी लता। पलाशिका।

आम्लानीक-[सं०] कटसरैया पीली। पीत झिंटी। पीली कटसरैया।

आम्लि-[सं०] }
आम्लिका-[सं०] } इमली। तिंतिड़ीक वृक्ष।
आम्ली-[सं०] }
आम्लीका-[स०] }

आयतच्छदा-[स०] }
आयतपत्रा-[स०] } केला। कदली वृक्ष। रंभा।
आयतपत्री-[सं०] }

आयन-[मरा०] अर्जुन। कौह वृक्ष।

आयला-[बं०] कटसरैया। अम्लाटन।

आयस-[सं०] १. लोहा। लौह धातु। २. अगर। अगुरु। ३ रत्न। मणि।

आयसमल-[सं०] मंडूर। लौहकिट्ट।

आयापान-[हिं०, मरा०, बं०] १. विशल्यकर्णी। विशल्याकरनी। २. पलाशी। भूपलाश। ३. आयापाना।

आयापाना-[हिं०, मरा०] आयापान।

[लै०] Eupatorium Ayapana.

इसका मूल उत्पत्ति-स्थान अमेरिका है और अब भारतवर्ष के अनेक भागों में भी पाया जाता है।

इसका झाड़ ४-६ फुट ऊँचा होता है। शाखें सीधी और किंचित् लाल होती हैं। पत्ते प्रायः समवर्ती जोड़े में लगते हैं। वे ४ इंच लंबे, पौन इंच चौड़े, चिकने और अनीदार होते हैं। पत्तों की जड़ से डंठियाँ निकलती हैं। फूल छोटे छोटे, कालापन लिए लाल आते हैं। वृक्ष सुगंधित होता है। इसका स्वाद कड़वा और मसालेदार होता है।

प्रयोग—मोरीशश टापू में यह एक प्रसिद्ध ओषधि है। पत्ते स्वास्थ्य-रक्षक समझे जाते हैं। पत्तों के फाँट या हिम का स्वाद अच्छा और सुगंधियुक्त होता है और तरो-ताजा पीने के काम में आता है। बुरे घाव को साफ करने के लिये इससे धोते हैं।

यह साधारणतः उत्तेजक, बलकारी और स्वेदक होता है। विशूचिका में यह शरीर में गर्मी उत्पन्न करता है। सर्प-विष पर इसको लगाने और खिलाने से लाभ होता है।

यह डाक्टरी मत के अनुसार ब्रांडी के समान उत्तेजक होता है। विशूचिका में जब शरीर शीतल होने लगता है, नाड़ी क्षीण होती जाती है, उस समय इसका सेवन कराने से नाड़ी पूर्व स्थिति में आ जाती है, शरीर में गरमी बढ़ने लगती है और रोगी चैतन्य हो जाता है। इसकी मात्रा १ से १॥ तोले तक है। एक तोला आयापान, १५ रत्ती कुट और ३० दाने इलायची, इन सबका काढ़ा तैयारकर १। तोले की मात्रा से प्रति बार पिलाना चाहिए।

आयु-[सं०] १. जीवनकाल। आयुर्बल। २. ओषधि। दवा।

आयुधदीर्घपृष्ठ-[स०] साँप। सर्प।

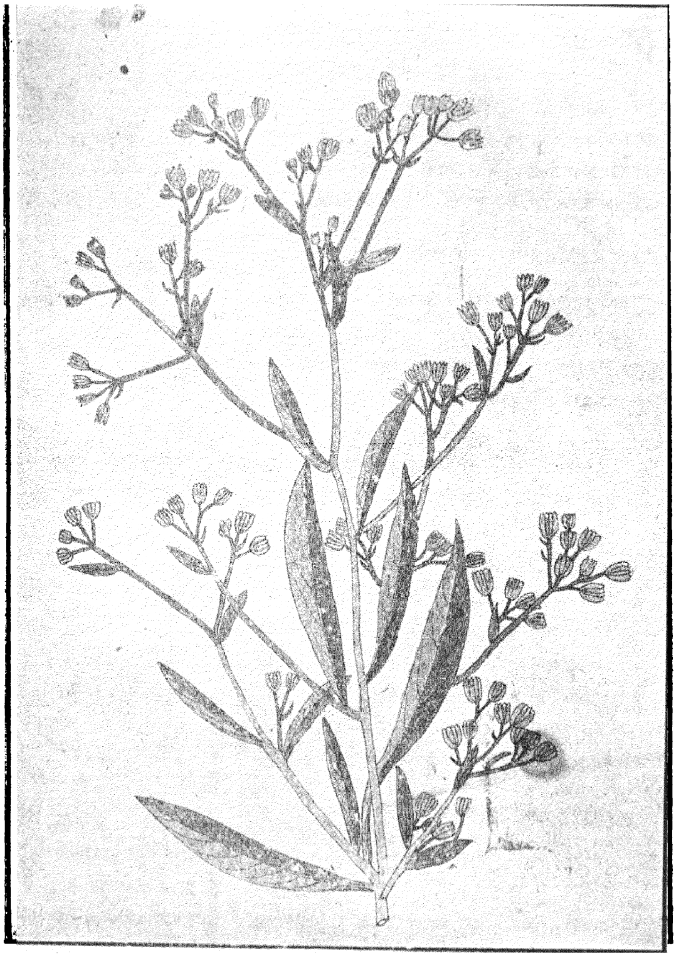

आयापाना

पृ० १२२]

आयुधधाम्मणी–[सं०] जयंती। सेरेरी। (तिक्त शाक क्षुप)

आयुर्द्रव्य–[सं०] } ओषधि। दवा।
आयुर्योग–[सं०] }

आयुर्बल–[सं०] आयु। जीवन-काल।

आयुर्वेद–[सं०] } चिकित्सा-शास्त्र। ऋग्वेद का उपवेद।
आयुर्व्वेद–[सं०] } इल्मतिब्ब। वैद्यक शास्त्र।

आयुर्व्वेदी–[सं०] वैद्य। कविराज।

आयुशेष–[सं०] मृत्यु। मौत।

आयुष्य–[सं०] आयुवृद्धि के लिये लाभदायक वस्तु।

आरंजी पल्लं–[द्रा०] नारंगी। नागरंग।

आर–[सं०] १. हरताल। हरिताल। २. पीतल। पित्तल धातु। ३. रेफल। गौर देश का एक प्रसिद्ध फल।

आरई–[मरा०] १ दुर्गंध खैर। विट खदिर। बबुरी। २. [हिं०] अरुई आलुकी। पेपची।

आरक–[सं०] १. हरताल। हरिताल। २. पीतल। पित्तल धातु। ३. रेफल। गौर देश का एक प्रसिद्ध खट्टा-मीठा फल।

आरकुट–[सं०] } पीतल। पित्तल धातु।
आरकूट–[सं०] }

आरक्त–[सं०] रक्त चंदन। लाल चंदन।

आरक्तपुष्पी–[सं०] दुपहरिया। बंधूक पुष्प वृक्ष। गेजुनिया।

आरग्वध–[सं०] अमलतास। वन-बहेड़ा। सियार लाठी।

आरटी–[सं०] १. स्थलकमल। स्थलपद्म। २. भारंगी। ब्राह्मण यष्टी। बभनेठी।

आरटीकाया–[तै०] केला। कदली।

आरणाल–[सं०] } आरनाल। कच्चे अथवा पके हुए गेहूँ
आरणालक–[सं०] } से बनी काँजी।

आरण्यगुड़त्वक्–[सं०] दालचीनी। दारुचीनी। दारचीनी।

आरण्यजीरक–[सं०] कालीजीरा। बनजीरक। बनजीरा।

आरण्यमुद्गा–[सं०] बनमूँग। मुद्गपर्णी।

आरण्य रीठाकरंज–[हिं०] श्रीवल्ली। बनरीठा।

आरण्यहलदी–[हिं०] बनहलदी। बनहरिद्रा।

आरनाल–[सं०] } आरणाल। आरणालक। तुर सहित
आरनालक–[सं०] } कच्चे या पके गेहूँ से बनाई हुई काँजी।

गुण—दस्तावर, दीपन, पचने में कटु, रुधिर और पित्त को दूषित करनेवाला, वातनाशक, कफ-निवारक तथा संग्रहणी और अर्श रोग को दूर करनेवाला एवं उदावर्त, अफरा, अंगों के टूटने और हड्डियों के दुखने मे हितकारी है।

आरनुवेल्लि–[क०] भुईं आँवला। भूम्यामलकी। पाताल आँवला।

आरवेत–[सं०] अमलतास। आरग्वध।

आरसिन–[फा०] } हलदी। हरिद्रा।
आरसीन–[फा०] }

आरा–[मरा०] फरहद। पारिभद्र वृक्ष।

आरामघोलि–[सं०] } आरामघोलिका नामक पत्र-शाक
आरामघोलिका–[सं०] } जो पश्चिमी देशों में प्रसिद्ध है।

गुण—अम्ल, रूखी, रुचिकारक, वायु को शमन करनेवाली, पित्त-कफ-कारक तथा मंदजीर्ण ज्वर का नाश करनेवाली है।

आरामवल्लिका–[सं०] मल्लिका। मोतिया भेद। बेली पुष्प वृक्ष।

आरामशीतला–[सं०] } आरामशीतला। रामशालि। पश्चिम
आरामशीतली–[सं०] } देश का आरामशीतला नामक पत्र-शाक। यह सुगंधि-युक्त होता है।

इसके वृक्ष महाराष्ट्र और पश्चिम के देशों में होते हैं। इसके पत्तों से सुगंध आती है और उनका शाक बनाकर खाते हैं।

गुण—कड़वी, शीतल, व्रण को रोपण करनेवाली तथा पित्त, दाह, शोष रोग और विस्फोटक का नाश करनेवाली है।

आरि–[सं०] } दुर्गंध खैर। विट्खदिर। बबुरी।
आरी–[सं०] }

आरु–[सं०] १. केकड़ा। कर्कटक। कोंकड़ा। २. सूअर। शूकर। वाराह। ३. पेठा। कुष्मांड। भतुआ। ४ कद्दू। अलाबु। लौकी। ५. आरु नामक वृक्ष। ६ सप्तालुक। शफ्तालू। सतालू।

आरुक–[सं०] १. आलू। आलुक। अलुई। २. आलूबुखारा। आड़। आलूबोखारा।

आरुकनु पुलकनुग–[तै०] ईख। इक्षु।

आरुष्कर–[सं०] भिलावाँ। भल्लातक वृक्ष।

आरुलुन्नु–[पं०] सप्तालुक। शफ्तालू।

आरूक–[सं०] १. आलूबुखारा। आरुक। २. सप्तालुक। शफ्तालू।

आरूषक–[सं०] अडूसा। वासक। बाकस।

आरूसुन्नु–[पं०] सप्तालुक। शफ्तालू।

आरे–[तै०] कचनार सफेद। श्वेत कांचनाल।

आरेचेट्टु–[तै०] अश्मंतक। आबुटा।

आरेह–[मा०] अरहर। आढ़की।

आरेपुष्पु–[तै०] } धातकी। धवई। धौ।
आरेपुव्वु–[तै०] }

आरेवत–[सं०] १. पारेवत। पालेवत फल। २. अमलतास। आरग्वध वृक्ष।

आरोग्य–[सं०] रोग-रहित। नीरोग।

आरोग्यपंचक–[सं०] हरीतकी, अमलतास, कुटकी, निसोथ और आँवला।

आरोग्यशाला–[सं०] चिकित्सालय। औषधालय। दवा-खाना। शफाखाना।

आरोग्यशिंबी–[सं०] अमलतास। आरग्वध। धनबहेड़ा।

आरोह–[सं०] १. चूतड़। नितंब। २. परिणाम। नतीजा।

आर्क–[हिं०] आक। अर्क वृक्ष। मदार।

आग्वेध-[म०] १. अमलतास। आरग्वध वृक्ष। घनबहेड़ा। २. दालचीनी। गुड़त्वक्। दारचीनी।

आर्घ्य-[म०] १. आर्घ्य मधु। अर्घ नाम की मधुमक्खी का शहद। [मा०] श्वेतक।

गुण—चरपरा, कसैला, कड़वा, पाक में भी कड़वा, बलदाता, पुष्टिकारक, नेत्रों को अत्यंत हितकारी तथा कफ और पित्त-नाशक है।

२. आर्घ्य। स्रवंती। जरत्कारु मुनि के आश्रम में उत्पन्न महुआ वृक्ष का गोंद।

आर्घ्यशर्करा-[सं०] आर्घ्य मधु से बनी हुई चीनी।

आर्घ्या-[म०] आर्घ्य। आर्घ्य मधु।

आर्त-[म०] पीड़ित। दुःखित।

आर्तगल-[स०] } कटसरैया नीली। नील झिंटी। नीले
आर्तगला-[म०] } फूल की कटसरैया।

आर्तव -[स०] स्त्री-रज। हैज। फूल।

आर्तवी-[म०] घोड़ी। घोटकी।

आर्ति-[स०] पीड़ा। वेदना।

आर्द्र-[स०] गीला। सजल। ओदा।

आर्द्रक-[स०] अदरक। आदी।

आर्द्रज-[सं०] सोंठ। शुंठी।

आर्द्रमाषा-[स०] १. बनमूँग। मुद्गपर्णी। मुँगवन। २. मषवन। माषपर्णी। बन-उरदी।

आर्द्रशाक-[सं०] अदरक। आर्द्रक। आदी।

आर्द्रा-[स०] १. अतीस। अतिविषा। २. अदरक। आर्द्रक। आदी।

आर्द्रास्य-[स०] } अदरक। आर्द्रक। आदी।
आर्द्रिका-[म०] }

आरुनेल्लि-[तै०] } भुइँ आँवला। भूम्यामलकी। पाताल
आरूनेल्लि-[तै०] } आँवला।

आर्षभी-[स०] केंछ। किवाँछ। कपिकच्छु।

आलं-[द्रा०] बड़। वट वृक्ष। बरगद।

आल-[हिं०] १. हरताल। हरिताल। २. [क०] बड़। बट वृक्ष। बरगद। ३. [हि०] पतंग। बक्कम। ४. [मा०, प०] कद्दू। अलाबु। लौकी। ५. [हि०] आल नं० १। ६. आल नं० २। [स०] आच्छुक। रंजनद्रु। [बं०] आच गाछ। आच फुलेर गाछ। [हि०, मरा०, मा०, गु०] आल। [ले०] Morinda Citrifolia. Morindo Tinctoria. [अं०] The Indian Mulbery. The togari wood of Madras.

आल की खेती प्रायः सब प्रांतों मे कहीं न कहीं की जाती है। यह दो प्रकार का होता है। पहले आल का गुण-दोष लिखकर फिर दोनों का अलग अलग वर्णन किया जायगा।

गुण—रक्त-पित्त, अतिसार और रुधिर-स्राव का नाश करनेवाला है। इसका फल तिल्ली आदि यंत्रों के बढ़ाव और मासिक-धर्म की रुकावट को नष्ट करता है।

प्रयोग—१ इसकी लकड़ी, छाल, जड़ और जड़ की छाल से लाल रंग निकाला जाता है। प्रायः छीपी इसी की लकड़ी से रंग निकालकर कपड़े छापते हैं। इसके कच्चे फल की तरकारी होती है तथा पके फल खाये जाते हैं। २. घाव पर पत्तों को पीसकर लगाने से फायदा होता है। ३. ज्वर में पत्तों का काढ़ा पिलाना हितकारी है। ४. पुष्टिकरण के लिये पत्तों का क्वाथ पिलाना चाहिए। ५. विरेचन के लिये जड़ का काढ़ा गुणकारी है। ६. बालक के अतिसार पर इसके पत्तों के कोयले को औंटाकर छानना और उसमें राई का चूर्ण मिलाकर पिलाना चाहिए। ७. मसूड़े के रोग पर कच्चे फलों के कोयले और नमक को पीसकर मंजन करने से लाभ होता है। ८. अतिसार में अतिसार नाशक ओषधियों के साथ पत्तों को औंटाकर पिलाना चाहिए।

आल नं० १—[हिं०] आल। [स०] आच्छुक। [बं०] आच। गेंच। आच्छु। [मु०] आल। बातोंदी। नागकुड़ा। असेटी। [ता०] मुंज पवट्टय। नूनामरम। [मल०] कड पिलवा। [तै०] मोलधा। मड्डी चेट्टु। [ले०] Morindo Citrifolia Syn. Morindo Bracteata.

भारतवर्ष के गर्म प्रांतों में इसकी खेती की जाती है। इसका झाड़ बड़ा अथवा वृक्ष छोटा होता है तथा छाल चिकनी होती है। पत्ते चमकीले ६ से १० इंच तक लंबे, चौड़े, अंडाकार और अनीदार होते हैं। फूल नलिकाकार, ५ दलवाले सफेद आते है। फल अनेक बीज-कोषवाले, गूदेदार, गोलाकार, पीले या हरापन लिये सफेद होते हैं।

प्रयोग—इसके कुचले हुए पत्तों का राई मिला काढ़ा बालकों के अतिसार पर दिया जाता है। कच्चे फल को पीस नमक मिलाकर सूजे हुए मसूड़े पर लगाने से लाभ होता है।

कोचीनवाले इसके फल को रजोनिस्सारक मानते हैं। गठिया पर पत्तों का रस लगाया जाता है। बंबई में पत्तों की पुल्टिस चोट और घाव पर लगाते हैं तथा ज्वर और निर्बलता में भी व्यवहार करते हैं। इसकी जड़ विरेचक होती है।

आल नं० २-[हिं०] आल। [स०] आच्छुक। [बं०] आच। दारु हरिद्रा। [उ०] आचु। [सता०] चैली। बनकतरी। बनकटरी। [आसा०] लरनोंग। असूखत। [म०, प्र०] आच। ऐचं। [मु०] मंजिष्ठा। [तै०] मड्डिचेट्टु। मुलगा चेट्टु। [ले०] Morindo Tinctoria.

यह भारतवर्ष के प्रायः सब प्रांतों में पाया जाता है। इसका वृक्ष मध्यमाकार या छोटा होता है जो समय पाकर गिर जाता है अथवा सूख जाता है। छाल हलकी, खोखली,

भूरे या खाकी रंग की होती है। लकड़ी लाल, प्रायः पीली, लाल रेशेवाली और साधारणतः दृढ़ होती है। पत्ते अंडाकार और अनीदार होते हैं। फूल नलिकाकार ५ दलवाले आधे से तिहाई इंच तक लंबे होते हैं। फल अनेक बीज-कोषवाले और गूदेदार होते हैं।

गुण और प्रयोग—इसकी जड़ संकोचक होती है और औषधि-प्रयोग में आती है।

आलक–[स०] १. हरिताल। हरताल। २. अरनी। अग्निमंथ। अगेथू।

आलकलता–[बँ०] अमरबेल। आकाशवल्ली। अमर लता।

आलकी–[स०] अरुई। आलुकी। पेपची।

आलकुशी–[बँ०] कौंछ। किवाँछ। कपिकच्छु।

आलगर्द–[म०] केसुआ। महिलता। चेंढ़ा। चाँढ़ा।

आलड़ी–[मा०] कद्दू। अलाबु। लौकी।

आलतेगड़–[ते०]
आलतेगड़ा–[ते०] } निसोथ। त्रिवृत्त। पनिलर।

आलदमर–[क०]
आलदमारा–[क०] } बड़। वट वृक्ष। बरगद।

आलदूषक–[स०] प्रतुद पक्षी। चोंच से फाड़कर खानेवाली एक चिड़िया।

आळपोगाडा पज़हम–[ता०] आलू बुखारा। आरुक।

आलबण–[मरा०]
आलबणा–[मरा०]
आलबन–[मरा०]
आलबना–[मरा०] } आलबना। तिग्रा।

गुण—कफ, मेद और कृमि-रोग का नाश करनेवाली है।

आलबाल–[यू०] आलू बालू। स्थानक।

आलस–[हि०]
आलस्य–[स०] } रोग-विशेष। आलसता। सामर्थ्य रहने पर भी काम-काज में उत्साह का न होना।

उक्त रोग-नाशक औषधि और प्रयोग-संख्या—अकरकरा नं० २६, ३१। अजवायन नं० ७। भूतृण नं० २। राई काली नं० ७। शीतल चीनी नं० १२ और हरताल नं० ११।

आलाकुशी–[बँ०] कौंछ। किवाँछ। कपिकच्छु।

आलात–[सं०] कोयला। अंगार।

आलावर्त–[सं०] पंखा वस्त्र का। वस्त्र-व्यजन। कपड़े का पंखा।

आलावु–[स०]
आलावू–[सं०] } कद्दू। अलाबु। लौकी। कदुआ।

आलास्य–[स०] घड़ियाल। मगर। कुंभीर।

आलि–[सं०] १. बिच्छू। वृश्चिक। बिच्छी। २. भौंरा। भ्रमर।

आलिवंखा–[सं०] चनसुर। चंद्रिका। हालिम।

आलीनक–[स०]
आलीनल–[सं०] } राँगा। बंग धातु। कथील।

आलीव–[मरा०] चनसुर। चंद्रसूर।

आलु–[स०] १. आलू। आलुक। २. कासालु। कोंकण देश का प्रसिद्ध आलू। ३. जमींकंद। सूरन। ओल। ४. [गु०] आलू बुखारा। आरुक। ५ [मरा०] मैनफल भेद। मदनभेद वृक्ष। ६. अरुई। रक्तालु। घुइयाँ।

आलुक–[म०] १. एलवालुक। एलुआ। एलवा। २. आलू। आलूक। अलुई। ३. कठालू। काष्ठालुक। काठ आलू। ४. शंखालु। शंखारु। सफेद आलू। ५ हस्त्यालुक। हाथी आलू (बड़ा आलू)। ६. रतालू। रक्तालु। शकरकंद। ७. पिंडालु। पेड़ालु। सुथनी।

आलुकी–[स०] अरुई। रक्तालु। पेपची।

आलुकोशा–[बँ०] कौंछ। किवाँछ। कपिकच्छु।

आलुबालु–[यू०]
आलुबालू–[यू०] } आलू बालू। स्थानक।

आलु बुखार–[गु०]
आलु बुखारा–[हि०]
आलु बोखारा–[हिं०]
आलु बोकारा–[द्रा०, ते०] } आलू बुखारा।

आलुवरी–[क०] कसौंदी। कासमर्द।

आलुवालु–[यू०]
आलुवालू–[यू०] } १. आलू बालू। अंबेसा। २. [ते०] कोदो। कोद्रव धान्य।

आलुस्या–[फा०] आलू बुखारा। आरुक।

आलू–[म०] १. कंद शाक विशेष। सब प्रकार के कंद शाक। [अ०] An eoculetif root. (Arum Companulaterm) २. कठालू। काष्ठालुक। काठ आलू। ३. शंखालू। शंखारु। सफेद आलू। ४. हस्त्यालुक। हाथी आलू। (बड़ा आलू) ५. रतालू। रक्तालु। शकरकंद। ६. पिंडालु। पिण्डालु। पेड़ालु। सुथनी। ७. मानकंद। माण। ८. [हि०] आलू। आलु। अलुई। [स०] आलुक। आरुक इत्यादि। [बँ०, मा०, पं०] आलु। [गु०] बटाटा। [ते०] ऊटलैगड्डा। [क०] बटाटे। आलु। [द्रा०] वल्लै किड़ंग। [ले०] Solanum tuberosum. [अं०] Potatoe.

इसे सभी लोग जानते और व्यवहार में लाते हैं। यह एक विदेशीय कंद शाक है, परतु इस समय भारतवर्ष में प्रायः सब जगह इसकी खेती की जाती है। इसका पौधा प्रसर के समान होता है। डंठल का कुछ हिस्सा भूमि पर पसरा हुआ और कुछ खड़ा होता है। पत्ते छोटे-बड़े अंडाकार होते हैं। फूल बैंगनी रंग के बनभंटे के फूल के समान होते हैं। फल गोलाकार हरे रंग के होते हैं। पौधे की जड़ में जो कंद बैठता है, उसी को आलू कहते हैं। इसका रंग लाल, भूरा अथवा सफेद होता है और स्वाद फीका होता है।

दार्जिलिंग का पहाड़ी आलू और नैनीताल का आलू देशी आलू से अच्छा होता है।

अमेरिका प्रभृति देशों में आलू के पौधे से बीज उत्पन्न हुआ करते हैं और उन बीजों को बोने से भी वहाँ आलू उत्पन्न होते हैं। भारतवर्ष में भी जहाँ-तहाँ इसकी परीक्षा हो रही है।

खूब अच्छी तरह गहरे जोते हुए चिकनी मिट्टी या बांगर तथा दुमट मिट्टीवाले खेत में गोबर की खाद और सरसों के छिलके मिला मेड़ बनाकर अंकुरित आलू अथवा इसके टुकड़ों का रोपण करते हैं और मेड़ों के बीच नलियों में समय समय पर पानी देते हैं। रोपण करनेवाले आलू को अँधेरे घर में टाट अथवा कंबल से ढाक देने से जल्द अंकुर निकल आते हैं। दार्जिलिंग और नैनीताल के आलू को धूप दिखाकर रखने से प्रायः एक वर्ष तक अच्छी तरह रह सकता है, किंतु धोने से जल्द खराब हो जाता है।

गुण-दोष—शीतवीर्य्य, विष्टंभी, मधुर, भारी, मल-मूत्र-निस्सारक, रूखा, कठिनता से पचनेवाला, वातवर्द्धक, बल-कारक, वीर्य्य-जनक, किंचित् अग्नि और दूध को बढ़ानेवाला तथा कफ और पित्त का नाशक है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—पहले दर्जे में ठंढा और रूक्ष, वीर्य को बढ़ाने और गाढ़ा करनेवाला, आध्मान उत्पन्न कर आँत का चालन करनेवाला और वात्स का बलप्रद है। इसका अंजन नेत्र का बलकारी, जाले को काटनेवाला और आमाशय को हानिकारी है।

दर्पनाशक—मांस और गरम मसाला।

प्रतिनिधि—अरुई।

प्रयोग—१. इसका शाक, हलवा, पूरी आदि कई प्रकार के भोजन के पदार्थ बनाए जाते हैं और यह फलाहार के काम भी आता है। मंदाग्नि रोगवाले आदमी यदि इसको खा जाय तो अफरा उत्पन्न हो जाता है। किसी किसी को इसके सेवन से उदरशूल और अतिसार भी हो जाता है। इसमें निशास्ता अधिक होने के कारण कुछ लोगों को कोष्ठबद्धता भी हो जाती है, अतएव कोष्ठबद्धतावाले, आमाशय की निर्बलता-वाले, मंदाग्निवाले, अंगों की निर्बलतावाले और रुधिर विकार-वाले इसको अवश्य त्याग दें। शरद् ऋतु में इसको खाना मना है। यदि आवश्यकता हो तो अदरक डालकर खाना चाहिए। २. अग्नि-दग्ध पर इसको बिना जल के पीसकर लेप करने से लाभ होता है।

आलूक-[सं०] १. कंद शाक विशेष। सब प्रकार के कंद शाक। २. आलू बुखारा। आरुक। ३. कठालु। काष्ठालु। काठ आलू। ४. शखालु। शखारु। सफेद आलू। ५. हस्त्यालुक। हाथी आलू। बड़ा आलू। ६. रतालू। रक्तालु। शकरकंद। ७. पिंडालु। पेड़ालु। सुथनी। ८. एलबालुक। एलापालक। ६. अरुई। आलुकी। पेपची।

आलूचह-[फा०]
आलूचा-[फा०] } आलू बुखारा। आरुक।

आलूण-[मा०] तरवड़। आहुल्य।

आलूप-[म०] आलू बुखारा। आरुक।

आलू बालु-[हिं०, यू०]
आलू बालू-[हिं०, यू०] } आलू बालू। आलु बालु। आलू बालू। एलुआ। [सं०] एला-वालुकं। कपित्थ। दुष्टवर्ण। त्वक्गंधं आदि। [बं०, गु०, मरा०] एलवालुक। [पं०] गिलास। ओलची। लालुका। [मा०] आलू बालू। [ते०] कूतरु बदमु। [क०] सुरसुरके। [फा०] आलू बालू। आलू बूअली। [लै०] Prunus Cerasus Syn. Cerasus Capsormana. [अं०] Sour Cherry Dwarf Cherry.

यह हिमालय, पंजाब और संयुक्त प्रदेश में पाया जाता है। काश्मीर में इसकी कई जातियाँ होती हैं और उनमें अच्छे फल होते हैं। यह मीठे और खट्टे फलों के भेद से दो प्रकार का होता है।

इसका वृक्ष मध्यमाकार का अथवा साधारण ऊँचाई का होता है। छाल फटी हुई दिखाई पड़ती है। पत्ते अंडाकार, अनीदार, किंचित् कटे किनारेवाले तथा कँगूरेदार होते हैं। फूल लंबी सींकों पर सफेद आते हैं और इनसे कुट की सी गंध आती है। फल गोल होता है और बीज गोल तथा चिकने होते हैं। चैत-बैशाख में फूल लगते और जेठ-आषाढ़ में फल पक जाते हैं। वृक्ष से एक प्रकार का गोंद निकलता है।

गुण-दोष—शीतल, कसैला, पचने में हलका, पाक में चरपरा, रुचिकारी, मुख के स्वाद को सुधारनेवाला तथा कफ, वात, दाह, मूर्च्छा, ज्वर, कंडु, विष, वमन, तृषा, श्वास, हृदय-रोग, पित्त, रुधिर-विकार, बद, कृमि रोग और कुष्ठादि रोगों का नाश करनेवाला है।

इसकी छाल कड़वी और ग्राही है। इसके फलों की गिरी स्नायु-जाल को बल बढ़ानेवाली है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—पका हुआ फल, पहले दर्जे में गरम, तर तथा कच्चा फल ठंढा और रूक्ष है। यह रेचक, प्रकृति को मृदुकारक, हल्लास (उबात) और तृषा को लाभकारी, पक्वाशय को बलकारी, पक्वाशय से यकृत में शीघ्र उतरनेवाला, कंठ और फेफड़े की रूक्षता और खरखराहट को गुणकारी तथा उष्णता, दाह, रक्त-प्रकोप और पित्त-प्रकोप का नाश करनेवाला है। यह अजीर्ण उत्पन्न करनेवाला है।

दर्पनाशक—शिकंजबीन।

प्रतिनिधि—आलू बुखारा।

मात्रा—१ अदद।

प्रयोग—इसके फलों का अचार और मुरब्बा बनाया जाता

है। इसकी छाल कड़वी तथा ज्वर-नाशक होती है। बीजों की गूदी स्नायु-जाल की निर्बलता का नाश करनेवाली है। यह अँगरेजी श्रोषधि "हाइड्रोसिएनिक एसिड" की जगह व्यवहार में आनेवाली है। ज्वर में इसकी छाल का काढ़ा दिया जाता है।

आलू बुखारह-[फा०] } आलू बुखारा।
आलू बुखारा-[हिं० यू०] }

[सं०] आरुक। म्लेच्छाम्लिका। [बँ०] आलू बोखार। [मरा०] आलू बोखार। बीरारुक। [पं०, मा०] आलू बुखारा। [गु०] आलु। [क०] आरुक। [फा०] आलूस्याह। आलू। आलूचह। [अ०] अज्जास। इज्जास। [ले०] Prunis Communuis Prunus Bokharensis [अं०] Cherry Plum. The Plum alucha Bokhara plum.

यह काबुल में होनेवाला एक प्रसिद्ध फल है। यह देखने में लाल रंग का तथा स्वाद में खट्टा और चाशनी मिला होता है।

इसके वृक्ष अलमोड़ा, सहारनपुर, पश्चिमोत्तर प्रदेश, हरद्वार, देहरादून, काश्मीर, बिलोचिस्तान तथा गढ़वाल से काश्मीर तक बहुत पाए जाते हैं। यह साधारण ऊँचाई का होता है। इसके फल बड़े आँवले के समान कुछ ललाई और पीलापन लिए चमकदार होते हैं। कच्चे फल खट्टे और पकने पर खट-मिट्ठे तथा रसदार हो जाते हैं। यह दो प्रकार का होता है। एक के फल जेठ में और दूसरे के असाढ़ में पकते हैं। इस वृक्ष से बबूल के गोंद के समान एक प्रकार का पीले रंग का गोंद निकलता है। काबुल, बलख, बुखारे, और सिंहल द्वीप में उत्पन्न हुए आलू बुखारे देशी आलू बुखारे की अपेक्षा बहुत उत्तम होते है।

जल-वायु तथा फलों के भेद से यह तीन प्रकार का होता है, और तीनों के वृक्ष प्रायः एक समान देख पड़ते हैं।

आलू बुखारा नं० १—[हिं०, बँ०, फा०] आलु बोखारा। [ता०] आलपेगाडा पज़हम। [ले०] Prunus Bokhariensis, Prunus Aloocha, Prunus Insititia. [अं०] Bokhara Plum.

यह पश्चिमी गरम हिमालय में गढ़वाल से काश्मीर तक जंगली और बागी दोनों प्रकार का पाया जाता है।

इसका वृक्ष झाड़दार होता है। पत्ते अंडाकार, अनीदार और कटे किनारेवाले एवं कँगूरेदार होते हैं। फल लंबा, गोलाकार और गूदेदार होता है।

इसके सूखे फल बाजारों में बिकते हैं। यह किंचित् अम्ल, शीतल, चिकन, पाचक, खाली पेट में मृदु रेचक तथा पित्त-प्रकोप और शरीर की उष्णता में लाभकारी है। इसकी जड़ संकोचक होती है। गोंद बबूल के गोंद की जगह व्यवहार में आता है। आलू बुखारा काबुल, अफगानिस्तान आदि से बहुत आता है और यहाँ के बाजारों में बिकता है। यह एक खाद्य पदार्थ है। इसको थोड़ी चीनी के साथ खाने से चित्त प्रसन्न हो जाता है। बीजों की गूदी से तेल निकाला जाता है जो जलाने और खाने के काम में आता है।

आलू बुखारा नं० २—इसको पंजाब में "ओलची", "पूर", "अग्रोर" आदि कहते हैं। [ले०] Prunus Domestica.

यह काश्मीर और अफगानिस्तान में बागी और जंगली दोनों प्रकार से उत्पन्न होता है तथा अलमोड़े के आस-पास कहीं कहीं बागों में भी देखने में आता है।

इसका झाड़ अनेक शाखाओं वाला और सघन होता है। छाल भूरी होती है। पत्ते अंडाकार, अनीदार, कँगूरेदार और समवर्ती लगते हैं। फूल सफेद नवीन पत्तों के साथ अथवा कुछ पहले आते हैं। फल १-१॥ इंच के गोल और काले होते है।

इसके सूखे फल स्निग्धकारक और संसन हैं। यह अकेला औषधि-प्रयोग में बहुत कम आता है।

आलू बुखारा नं० ३—इसको लैटिन में Prunis Communis कहते हैं।

यह पश्चिमी गरम हिमालय में गढ़वाल से काश्मीर तक बोया जाता है तथा इसके जंगली वृक्ष भी पाए जाते हैं।

इसका झाड़ अथवा छोटा वृक्ष होता है। लकड़ी लालिमायुक्त भूरे रंग की दृढ़ होती है। पत्ते किंचित् अंडाकार, अनीदार और कटे किनारेवाले एवं कँगूरेदार होते हैं।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—कसैला, भारी, शीतल, दस्तावर, ग्राही, मल-रोधक, हृदय को हितकारी, पाचक, खट्टा, मधुर, मुख को प्रिय और स्वच्छ करनेवाला तथा कफ, पित्त, प्रमेह, गोला, बवासीर और रक्तवात का नाश करनेवाला है।

आलू बुखारा पका हुआ—भारी, मधुर, कफकारक, पित्तजनक, गरम, रुचिकारक, प्रिय, शुक्रवर्द्धक तथा प्रमेह, बवासीर, ज्वर और वात को दूर करनेवाला है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—पहले दर्जे में ठंढा और दूसरे में तर, प्रकृति को मृदुकारक, अँतड़ियों में पैच्छिल्य उत्पन्न करनेवाला, खाज के मल का शोधक, संपूर्ण मलों को पकानेवाला, पित्तज और रक्तज ज्वर को लाभकारी तथा रुधिर-विकार, पित्त-प्रकोप, हल्लास (उबांत) और तृषा का नाश करनेवाला है। यह अम्ल होने पर भी इमली के समान खाँसी को हानिकारक नहीं है। मस्तिष्क, आमाशय और स्नायु को हानिकारक है।

दर्पनाशक—उन्नाब, मस्तगी और गुलकंद।

प्रतिनिधि—इमली।

मात्रा—५ से १० दाने।

प्रयोग—१. आलू बुखारा पित्त को कम करता है, पाचन-शक्ति को बढ़ाता है तथा सारक है। भोजन के पहले खाने से यह पित्त का नाश करता है। इसकी जड़ शोषक है। इसके गोंद के गुण बबूल के गोंद के समान होते हैं और उसके स्थान में इसको व्यवहार में लाते हैं। यह खट्टा होता है, किंतु चीनी के साथ खाने से रुचि उत्पन्न करता और चित्त प्रसन्न करता है। यह पित्तज दस्त लाना है और आमाशय की चिकनाई को धोता है, किंतु शीतल और ग्राही औषधियों के साथ शीतल जल में भिगोकर और मल तथा छानकर पिलाने से दस्त बंद होते हैं। इसके मीठे पके फल वात-पित्तज प्रकृतिवालों को खाने चाहिएँ। कफज और रक्तज प्रकृतिवालों को हानिकारक होते हैं, विशेषकर खट्टे फल इन प्रकृतिवालों को हानिकर हैं। मिट्टी खानेवाली अभ्यासिनी गर्भिणी स्त्रियों को आलूबुखारे का सेवन कराने से उनका बुरा व्यसन छूट जाता है और उनकी पाचन शक्ति बढ़ जाती है। २. पित्तज्वर में इसके फल को गरम पानी में भिगो और छानकर पिलाने से लाभ होता है। ३. तृषा एवं ज्वर तृषा में इसको मुख में धारण करना गुणकारी है। ४ इसके गोंद के चूर्ण का ६ माशे की मात्रा से दोनों समय दूध की लस्सी अथवा मिस्री के शर्बत के साथ सेवन करने से शुक्रमेह और स्वप्नदोष दूर होता है। घाव पर छिड़कने से घाव भर जाता है तथा इस चूर्ण को अंगूरी सिरके में घिसकर दाद पर लगाने से थोड़े दिनों में चिह्न तक मिट जाते हैं। ५. प्रतिश्याय में आलू बुखारे के पानी से शिर धोने से कंठ पर गिरनेवाले नजले को लाभ होता है। ६. मुख के छालों पर इसके पत्तों को पानी में औंटाकर उससे कुल्ले करने से फायदा होता है। ७. रतौंधी में इसके बीजों की गिरी के कपड़छान किए हुए बारीक चूर्ण को रात्रि में सोते समय चुटकी से अंजन करना लाभकारी है। ८. बालकों के कृमिरोग पर रात्रि को ३-४ दाने आलू बुखारे को भिगो प्रातःकाल पानी पृथक् कर उसमें थोड़ा सोंचर नमक मिलाकर पिलाने से सब प्रकार के कृमि दूर हो जाते हैं। ९. आलू बुखारे की जड़ की छाल पानी में उबालकर कुल्ले करने से हिलते हुए दाँत दृढ़ होते हैं।

आलू बूआली–[फा०]
आलू बोकारा–[ते०] } आलू बुखारा।
आलू बोखारा–[हिं०]

आले–[मरा०] अदरक। आर्द्रक। आदी।

आलेय–[सं०] पद्माक। पद्मकाष्ठ।

आलेलगया–[क०] पाषाणभेद। पत्थरचूर। पाखानभेद।

आलोक लता–[बं०] अमरबेल। आकाशवल्लरी। अमरलता।

अल्फिस्तककशर–[अ०] पिस्ते की छाल। निकोचकत्वक्। पोस्त-पिस्ता।

आल्लूक–[सं०] आलू बुखारा। आरुक।

आल्ह–[हिं०] १. पतंग। बक्कम काष्ठ। २. आल। आच्छुक।

आवंती शाक–[सं०] लोणा छोटी। क्षुद्र लोणिका। छोटी नोनी।

आवँला–[हिं०] आँवला। आमलकी।

आवगडेहन्नु–[ख़ा०]
आवगड्डपंडु–[ते०] } इनारू लाल। महाकाल लता।

आवटवेल–[मरा०] अल्पमञ्जपर्णी। राम-चना।

आवनूस–[यू०] मकर तेंदुआ। मकरा गाव। काकतिंदुक वृक्ष। आबनूस।

आवर–[मला०]
आवरगिड–[ख़ा०] } तरवड। आहुल्य। तरवट।

आवर्त्त–[म०] १. सोनामक्खी। स्वर्णमाक्षिक धातु। २. रूपामक्खी। रौप्यमाक्षिक। ३. रेवटी। राजावर्त्त मणि।

आवर्त्तक–[सं०] १. रेवटी। राजावर्त्त मणि। २. स्थलकमल। स्थलपद्म। ३. रूपामाखी। रौप्य माक्षिक।

आवर्त्तकी–[सं०] १. रंगलता। मरोड़फली। २. भगवतवल्ली। आहुली।

आवर्त्तन०–[सं०] धातु गलाना। धातु-गालन।

आवर्त्तनी–[सं०] १. रंगलता। मरोड़फली। ऐंठी जोड़ठी। २. धातु गलाने की घड़िया। धातुद्रवनार्थ मृत्पात्र।

आवर्तफला–[सं०] रंगलता। मरोड़फली।

आवर्त्तमणि–[सं०] रेवटी। राजावर्त्त मणि।

आवर्त्तिनी–[सं०] मेढ़ासिंगी। अजश्रृंगी।

आवल–[गु०] तरवड। आहुल्य। तरवड।

आवलीकंद–[सं०]
आवलीकंदक–[सं०] } मालाकंद। बलकंद।

आवलु–[ते०] १. राई। राजिका। २. सरसों। सर्षप।

आवल्य–[गु०] तरवड। आहुल्य।

आवाकपुष्पी–[सं०] १. सौंफ। मिश्रेया। २. सोआ। शतपुष्पा।

आवाप–[म०] कल्क। गीली अथवा सूखी औषधि को पानी से बारीक पीस कर चटनी के समान बनाया हुआ पदार्थ।

आवालु–[गु०] १. राई। राजिका। २. सरसों। सर्षप।

आवाल्य–[गु०] तरवड। आहुल्य।

आवास–[म०] गृह। घर।

आवि–[सं०] पक्षी। चिड़िया।

आविक–[सं०] १. भेंड़ा। भेंड़ी। मेष। मेषी। २. कंबल। ऊन का वस्त्र।

आविक क्षीर–[सं०] भेड़ी का दूध। मेषी-दुग्ध।

आविक घृत–[सं०] भेड़ी का घी। मेषी-नवनीत-जात घृत।

आविक दधि–[सं०] भेड़ी का दही। मेषी दुग्धकृत दधि।